आदर्श-निबंध-माला

लेखक

सन्त गोकुलचन्द शास्त्री बी. ए.

प्रधान संस्कृताध्यापक

डी. ए. वी. हाई स्कूल

लाहौर

प्रकाशक—

हिन्दी भवन, लाहौर

तृतीय संस्करण] फाल्गुन १९८९ [मूल्य १।)

अनुक्रमणिका ।

आदर्श-निबन्ध-माला

भूमिका

मन के भावों को प्रकट करने के दो ही साधन हो सकते हैं। एक तो यह कि बातचीत में उन्हें जिह्वा द्वारा प्रकट करें, और दूसरा यह कि उन्हें लिपिबद्ध करें। बोलचाल और वक्तृता में विचार का प्रकाश इतना पूर्णरूप से नहीं हो सकता जितना लेखनी द्वारा। क्योंकि चित्त को कितना ही स्थिर क्यों न करें सम्भाषण में कोई न कोई भाव कहना छूट ही जाता है और अनेक स्थानों में उनमें उलट पलट हो जाने का खटका रहता है। किन्तु लिपिबद्ध भावों में यह नहीं हो सकता। किसी बात को लिखकर उस पर कई बार विचार करने के बाद उसे यथेष्ट पूर्णरूप दिया जा सकता है। ऐसे भावों की ही साहित्यरूप में स्थिरता हो जाती है।

बोलने और लिखने में अंतर

लेख के कई प्रकार हैं। अपने छोटे मोटे विचारों को कुछ ऐसे असम्बद्ध और टूटे फूटे वाक्यों में भी रखा जा सकता है, जिनमें न तो व्याकरण का कुछ लिहाज़ हो और न उनकी भाषा ही परिष्कृत हो। ऐसी भाषा को 'गंवारी' व बोलचाल की भाषा कहते हैं। दूसरा यह है कि किसी विषय के सम्बन्ध में जो भाव उत्पन्न हों उन्हें इकट्ठा कर

लेख के प्रकार

शुद्ध तथा परिष्कृत भाषा में सिलसिलेवार रखा जाय। इसे निबन्ध व प्रस्ताव कहते हैं।

निबन्ध क्या है?

कई विद्वानों ने एक एक विषय पर अनेक ग्रन्थ लिख डाले हैं। ये भी एक प्रकार के निबन्ध-ग्रन्थ हैं। इनका साहित्य में बहुत ऊँचा स्थान है। इनसे दूसरे दर्जे के वे निबन्ध होते हैं जो आजकल परीक्षाओं में कुछ विषयों पर लिखे जाते हैं। उनसे प्राश्निक का अभिप्राय केवल छात्र की रचना (Composition) योग्यता तथा विचारों को उचित सिलसिले में रखने की प्रवीणता को परखना होता है। इस पुस्तक में सभी निबन्ध छात्रों की उस आवश्यकतापूर्ति के लिए दिये गए हैं।

पाठशालाओं में छात्रों को निबन्ध-रचना के अभ्यास कराने का अभिप्राय है:—

पाठशालाओं में निबन्ध लिखने का आशय

किसी विषय के सम्बन्ध में नये नये विचार उत्पन्न करना; छानबीन करने के बाद उनमें संशोधन करना; संक्षिप्त भावों को विस्तृत करना; सभी विचारों को एकत्रकर उन्हें पूर्वापर-सम्बन्ध के सिलसिले में रखना; शुद्ध और परिष्कृत भाषा लिखने का अभ्यास और अपने भावों को उपयुक्त भाषा में समझाना आदि।

विचारों को इकट्ठा करना इतना आवश्यक नहीं जितना उनको परस्पर जोड़ कर एक शृङ्खला में बाँधना है। इसी शृङ्खला की सुन्दरता में निबन्ध की खूबी है। इसलिए इस पुस्तक में यह दिखाया गया है कि किस तरह—

(१) विचारों को इकट्ठा किया जाय और (२) उन्हें सुन्दर शृङ्खला में जोड़ कर निबन्ध में रखा जाय।

जिस विषय पर प्रस्ताव लिखना हो पहले उसके अर्थ का पूरा निश्चय कर लेना चाहिए। प्रस्ताव के किस अंश पर अधिक ज़ोर देने से उसका आशय खुलेगा इसका पहले ही निर्णय कर लेना चाहिए। इसके अनन्तर उस विषय पर मनन करने से जो भाव फुरें उन्हें झट नोट कर लेना चाहिए। उन्हें विचारते समय मन को निष्पक्ष रखना चाहिए, नहीं तो भाव सर्वांश-पूर्ण न होंगे—वे किसी न किसी पक्ष की ओर झुके रहेंगे। प्रस्ताव को आरम्भ करने से पहले उसके विषय यो अनान्य शीर्षकों (Headings) में विभक्त करलो।

लिखने का ढंग

प्रस्ताव के लिए सामग्री एकत्र करने के लिए उस विषय की पुस्तक पढ़ना अत्यावश्यक है। उन पुस्तकों में जो जो बातें उस विषय से सम्बद्ध हों उन्हें तुरन्त नोट कर लेना चाहिए। विद्यार्थी के पास सदा नोटबुक और पेन्सिल रहनी चाहिए और जब कभी कोई पुस्तक, समाचारपत्र व निबन्ध पढ़ते समय कोई वाक्य व विचार सुन्दर मालूम पड़े तो उसे नोट करलें। इसका एक फल यह भी होगा कि जो कुछ वह पढ़ेगा बड़ी साव-धानी से पढ़ेगा और साथ ही उसमें साहित्य पढ़ने का शौक बढ़ेगा।

प्रस्ताव की सामग्री को कैसे इकट्ठा करना?

इसके अतिरिक्त जहाँ कहीं वह जाय प्रकृति के सभी आवि-ष्कारों को अच्छी तरह से देखे। पुस्तकों में पढ़े हुए की अपेक्षा अपनी आँखों से देखे हुए पदार्थ का वर्णन करना अधिक स्वाभा-विक और वास्तविक होता है।

जब कभी किसी विद्वान् का व्याख्यान सुनो उसके उत्तम विचारों को नोट कर लो।

इस प्रकार विचार और भावों को इकट्ठा करने के पश्चात्

उनको एक ऐसी शृङ्खला में रखना चाहिए जिससे वे रम्य और हृदयग्राही मालूम पड़ें।

जिस विषय पर निबन्ध हो वह पढ़नेवाले की ठीक समझ में आजाय। उसका क्रम (Order) ऐसा अच्छा और स्वाभाविक हो कि जो भाव जिस स्थान में होना चाहिए वह वहीं रखा हो।

निबन्ध की खूबी

किसी भाव को दो बार न दोहराना चाहिए। हाँ, यदि उसकी पुनरावृत्ति से विशेष कार्य्य सिद्ध हो तो दोहराना भी ठीक है।

जो सामग्री इकट्ठी की हुई हो उसमें से उन्हीं विचारों का उल्लेख करना चाहिए जिनका उस विषय के साथ पूरा सम्बन्ध हो। प्रायः छात्रों में यह त्रुटि होती है कि जो कुछ भी उनके मन में आता है उसे किसी न किसी तरह उस निबन्ध में घुसेड़ने की करते हैं, जिसका फल यह होता है कि सभी कुछ बिगड़ जाता है।

किसी अंश का भी आवश्यकता से बढ़ कर विस्तार न करना चाहिए। जिस विषय पर प्रस्ताव लिखना हो उसे कभी दृष्टि से दूर न करो। जैसे प्रस्ताव लिखना हो एक घटना (event) पर, किन्तु जिस जगह पर वह घटना हुई हो उसी के वर्णन में पृष्ठ के पृष्ठ काले कर दिये जायँ। यह एक बड़ा दोष है।

निबन्ध के शीर्षक

१—जब विचारों का सिलसिला बन जाय तो उनके अनुसार उस प्रस्ताव के शीर्षक (Headings) बना लो।

शीर्षक बनाने के निम्नलिखित लाभ हैं:—

(१) कोई भाव दोहराया नहीं जा सकता;

(२) इस से एक ढाँचा सा बन जाता है और फिर लेखक उस में काँट-छाँट कर सकता है;

(३) उस विषय का कोई अंश भी नहीं छूटने पाता;

(४) विचारों का क्रम ऐसा स्वाभाविक हो जाता है कि प्रस्ताव के विषय में स्फुटता आ जाती है।

२—इकट्ठे किये हुए विचारों को उन शीर्षकों में योग्यतानुसार बाँट दो। प्रत्येक शीर्षक में कुछ स्थान खाली छोड़ दो और यदि कोई विचार पीछे ध्यान में आ जाय तो उसे वहाँ लिख दो।

३—इस प्रकार एक ढाँचा सा बना कर उसे फिर शुद्ध करो। अगर कोई बात उसमें लिखनी रह गई हो तो उसे लिख डालो और कुछ काटना हो तो काट दो। किसी भाव का शीर्षक बदलना हो तो उसे बदल दो।

इसमें सन्देह नहीं कि इस में समय अवश्य कुछ अधिक लगेगा किन्तु इस अभ्यास का जो लाभ होगा वह उस कष्ट से कहीं बढ़ कर होगा।

सम्भव है कि परीक्षा-भवन में, जब कि नियत समय में ही प्रस्ताव समाप्त करना पड़ता है, इन बातों पर इतना ध्यान न दिया जा सके, किन्तु वहाँ पर भी प्रश्नपत्र हाथ में लेते ही लेखनी उठा कर लिखने लग पड़ना बड़ी भूल है। वहाँ भी दस पन्द्रह मिनट

विषय के सम्बन्ध में भावों को एकत्र करने तथा उन्हें भिन्न भिन्न शीर्षकों में रखने में अवश्य खर्च करने चाहिए।

अच्छे प्रस्ताव के लिए दो बातें आवश्यक हैं:—

[१] प्रस्ताव का आरम्भ और [२] उसकी समाप्ति।

आरम्भ

आरम्भ ऐसा रोचक होना चाहिए जिसे पढ़ते ही वह हृदय-पट पर सुचित्रित हो जाय और प्रस्ताव के विषय की भूमिका वहीं से शुरू हो जाय। दो चार पंक्तियाँ पढ़ते ही प्रस्ताव का विषय और लेखक के भाव कुछ न कुछ मालूम हो जायँ। यदि उस सम्बन्ध में किसी विद्वान् के वाक्यों को उद्धृत कर आरम्भ में लिखा जाय तो बहुत अच्छा है।

समाप्ति

समाप्ति (उपसंहार) बड़ी प्रबल भाषा में होनी चाहिए। इसमें प्रस्ताव के विषय के सम्बन्ध में साधारणतः ऐसी बातें हों जिससे लेखक का सिद्धान्त और सारांश आ जाय। समाप्ति के बाद कोई नई बात, प्रमाण वा तर्क नहीं आना चाहिए। इससे सभी लिखा लिखाया प्रबन्ध बिगड़ जायगा। कभी कभी आरम्भ के समान अन्त में भी किसी विद्वान् के कथन को उद्धृत करना निबन्ध की शोभा को बढ़ा देता है।

संशोधन

समाप्ति के बाद एक दो बार, जितना समय मिल सके, उसे आद्योपान्त पढ़ कर शुद्ध करना चाहिए। बहुत लोग समझते हैं कि एक बार लिख कर उसे फिर शोधने से निबन्ध की शोभा नहीं रहती। किसी अंश में तो यह ठीक हो। किन्तु इस विषय में विचारना यह है कि अच्छा क्या है—निबन्ध देखने में काटा छाँटा न हो किन्तु अशुद्धियों से भरा हो, अथवा उसमें कहीं कहीं पर कुछ शब्द कटे हों

लेकिन उसमें अशुद्धि कोई न हो। निस्सन्देह अन्तिम ही उत्तम है। हां, यह आवश्यक है कि लिखते समय पंक्तियों में कुछ अन्तर पहले से ही छोड़ देना चाहिए जिसमें संशोधन करने में सुविधा हो और लेख बहुत भद्दा मालूम न पड़े।

भाषा

शब्द

१—केवल उन्हीं शब्दों का प्रयोग करो जो आप के अभिप्राय को ठीक ठीक समझा सकें। कठिन, बड़े बड़े तथा अप्रचलित शब्दों का कभी प्रयोग नहीं करना चाहिए।

२—द्व्यर्थक शब्दों का प्रयोग न करना। क्योंकि उनसे वाक्य के अर्थ में भ्रम हो जाने का संशय है।

३—जहाँ तक हो सके अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग न करना चाहिए।

४—एक ही शब्द का बार बार प्रयोग न होना चाहिए। उसके स्थान पर दूसरे पर्य्याय-वाचक शब्दों का प्रयोग करो।

५—अक्षरबिन्यास (spelling) की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

वाक्य

जहाँ तक हो सके वाक्य छोटे हों।

उनकी योजना इतनी सरल हो कि एक बार पढ़ते ही भाव समझ में आजाय।

जिस शब्द की जहाँ पर आवश्यकता हो उसे वहीं पर रखो।

यथा—

वाक्य (१) कर्ता और क्रिया की समता हो। जैसे—राम गृह में जाता है—शुद्ध है। राम गृह में जाते हैं—अशुद्ध है।

(२) जहाँ तक हो सके कर्म क्रिया के पहले और साथ हो। मैं अपना भोजन खाता हूँ—शुद्ध है। भोजन मैं अपना खाता हूँ—अशुद्ध है।

(३) विशेषण विशेष्य के पूर्व हो। यथा—अच्छे बालक पाठ ध्यान से पढ़ते हैं। यहाँ 'अच्छे' को कहीं और जगह रखना अशुद्ध है।

(४) क्रिया-विशेषण क्रिया के पास हो। यथा—यह काम जल्दी करो। 'जल्दी' 'करो' के पहले ही होना चाहिए।

(५) जिन दो शब्दों का परस्पर सम्बन्ध हो वे पास पास हों। यथा—राम का घोड़ा अच्छा है—इसमें 'राम का घोड़ा' यह पास पास ही रहेंगे।

(६) संयोजक अव्यय उन शब्दों वा वाक्यों के साथ ही हों जिन्हें वे जोड़ते हैं। यथा—राम और कृष्ण आते हैं—यहाँ और राम कृष्ण को जोड़ता है।

(७) यदि किसी संज्ञा शब्द को फिर दोहराना हो तो उस के स्थान में सर्वनाम का प्रयोग करो। यथा—राम आया तो था, पर वह फिर नहीं गया।

(८) सर्वनाम में नाम के ही लिङ्ग तथा वचन होते हैं। यथा—राम बुद्धिमान् है; यह बुरा काम नहीं करता।

प्रस्ताव में कई प्रकार के भाव रहते हैं। सभी की खिचड़ी सी बना कर एक ही स्थान पर रखदेना उन्हें नीरस कर देगा।

अनुच्छेद

अच्छा तो यह है कि जितने वाक्य एक प्रकार

के भाव के सम्बन्ध में हों उन्हें एक स्थान पर रखो। फिर नई बातें पुनः आरम्भ करो।

इस प्रकार एक भाव को प्रकट करने वाले शब्दसमूह को 'अनुच्छेद' (Paragraph) कहते हैं। प्रत्येक अनुच्छेद के पहले एक ऐसा छोटा सा वाक्य हो जिस के पढ़ने से उस (अनुच्छेद) का सार मालूम हो जाय। अनुच्छेदों को भी बहुत बढ़ाना नहीं चाहिए।

साधारण बातें।

(१) जहाँ तक सम्भव हो निबन्ध को संक्षिप्त करो, किन्तु संक्षेप से उसका वास्तविक रूप न बिगाड़ दो।

(२) जो कुछ लिखो उसे युक्ति तथा प्रमाण से सिद्ध करो। उस में जितना अहंभाव (egoism) कम हो अच्छा है।

(३) विरामादि चिन्हों (punctuation) का विशेष ध्यान रखो।

(४) भाषा सरल हो। केवल उन्हीं अलङ्कारों का प्रयोग करो जिनसे भावों में सौन्दर्य्य आ जाय।

निबन्ध की श्रेणियां

यों तो हर एक विषय दूसरे से किसी न किसी अंश में थोड़ा बहुत भिन्न रहता है, तथापि जिन जिन विषयों में समानता अधिक है और भेद कम है उनके सम्बन्ध में प्रस्ताव लिखने की शैली प्रायः एक ही तरह की है। ऐसे विषयों की अलग २ श्रेणिया बनाई हुई हैं। ऐसा करने से निबन्ध रचना के सीखने में कठिनता कम हो जाती है।

निबन्ध की तीन श्रेणियां हैं।

वर्णनात्मक, विबरणात्मक, चिन्तात्मक।

१—वर्णनात्मक (Descriptive)

(क) प्राणि विषयक—

(१) भिन्न २ देश के मनुष्य। जैसे—अंग्रेज़, बङ्गाली, जापानी।

(२) पशु। जैसे—शेर, हाथी, चीता, गाय।

(३) जल-जीव। जैसे—कछुआ, मछली।

(४) पक्षी। जैसे—तोता, चील, चिड़िया।

(५) रींगने वाले जीव। जैसे—सांप।

(६) कीट, पतङ्ग। जैसे—मच्छर, तितली।

(ख) अप्राणि-विषयक—

(१) ग्राम, नगर। जैसे—लाहौर, रामनगर।

(२) पर्वत, नदी। जैसे—हिमालय, गंगा, यमुना।

(३) इमारतें। जैसे—ताजमहल, अशोकस्तम्भ।

(४) धातु, खनिज। जैसे—सोना, तांबा, मोती, नमक।

(५) वैज्ञानिक। जैसे—चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण, भूकम्प।

(६) मेला, उत्सव। जैसे—हरिद्वार का कुम्भ, वसन्त-पंचमी, दशहरा, दिवाली।

(७) पुस्तक। जैसे—रामायण, महाभारत।

(८) खेल। जैसे—फुटबाल का मैच, कबड्डी, हाकी का मैच, क्रीकिट का मैच।

(९) ऋतु। जैसे—वसन्त।

(ग) वनस्पति-विषयक—

(१) वृक्ष, पौदे। इमली, आम, बट, धान की खेती, चावल की खेती, आलू की खेती।

२—विवरणात्मक (Narrative)

(क) इतिहासविषयक। जैसे—विक्टोरिया का शासनकाल, सिपाहीविद्रोह

(ख) जीवन चरित्र। जैसे—बुद्ध का जीवन, गोखले का जीवन।

(ग) सामयिक घटना। जैसे—एक रेलवेदुर्घटना, समुद्र में जहाज़ का डूबना।

(घ) संस्था, नियम। जैसे—दासक्रय, उपनयनसंस्कार, विधवा-विवाह।
(ङ) आविष्कार, शिल्प। जैसे—छापने की कल, बिना तार की खबरें।
(च) कथा, कहानी। जैसे—बिल्ली और बन्दरों की कहानी।
(छ) यात्रा। जैसे—एक रेलवे की यात्रा, महाराज जार्ज पंचम की भारतयात्रा।

३—चिन्तात्मक (Reflective)

(क) अमूर्त विषय (Abstract subject) जैसे—वक्तृता, मित्रता, जातीयता, स्वदेशानुराग, अध्यवसाय, क्रोध, शान्ति, उपासना, विद्या, दया।
(ख) आलोचन, पर्यालोचन (Critisism)। जैसे—कौन बड़ा आविष्कार है, लिखना व पढ़ना?
(ग) कहावत, लोकोक्ति। जैसे—जैसी जाकी भावना तैसी ताकी सिद्धि। इस हाथ दे उस हाथ ले। कोयले की दलाली में हाथ काले।
(घ) तुलना और विभेद (Comparison and Contrast) यथा—सम्पत्ति और विपत्ति; स्वतंत्रता और परतंत्रता।
(ङ) साहित्य, तुलनात्मक। यथा—कालिदास के ग्रंथों पर अपने निज के विचार और उनके बनाये साहित्य से देश को लाभ, कविवर शेक्सपीयर की कालिदास के साथ तुलना।

प्राणिविषयक

अंग्रेज़

शीर्षक

भूमिका—इंगलैण्ड के निवासियों को अंग्रेज़ कहते हैं।
प्रारम्भिक-इतिहास—नार्मन जाति और ऐंग्ल तथा सैक्सन जाति के लोगों की मिलावट से यह जाति बनी हुई है।
आकार, गठन—इन का आकार लम्बा चौड़ा, वर्ण श्वेत होता है।

धर्म, भाषा—इन की भाषा ट्यूटानिक और धर्म ईसाई है।

सामाजिक और राजनैतिक स्थिति—इन की और भारतीयों की सामाजिक अवस्था में बहुत भेद है। इनकी शासन-संस्था बड़ी स्वतंत्र और जगद्भर में विचित्र है।

सभ्यता और उसका विदेशी सभ्यताओं पर प्रभाव—उनकी सभ्यता यद्यपि पुरातन नहीं तो भी बड़ी हृदयाकर्षक है। सभी देश थोड़ा बहुत उसके प्रभाव में हैं।

उपसंहार—इन में आविष्कार की शक्ति बड़ी प्रबल है। ये बड़े स्वदेशभक्त होते हैं। इनकी ओर से अपने धर्म के प्रचारार्थ करोड़ों रुपये खर्च किये जाते हैं।

प्रस्ताव

अंग्रेज़ इङ्गलैण्ड देश के निवासी हैं। अंग्रेज़ी इनकी भाषा है। इङ्गलैण्ड पहले ऐङ्गल और सेक्सन जाति के लोगों के अधिकार में था। पीछे फ्रांस के नार्मनों ने इन्हें पराजित कर इस पर अपना स्वत्व जमा लिया। तब से उन जातियों की परस्पर मिलावट से उन सब की भाषा, रसम रिवाज़ और रहन सहन मिल जुल कर एक जाति बन गई थी। यही अंग्रेज़ जाति है।

आकार, गठन

इनका आकार अच्छा लम्बा चौड़ा होता है। इसका कारण यह है कि यह जाति बड़ी व्यायाम-प्रिय और व्यवसायरत है। इङ्गलैण्ड का जल वायु शीत है, इसलिए इनका वर्ण श्वेत होता है। इङ्गलैण्ड में आलू अधिक होते हैं। अंग्रेज़ जाति मांसभोजी है।

भाषा, धर्म

अंग्रेज़ उत्तर ट्यूटानिक वंश के हैं। इनकी भाषा भी उसी वंश की है किन्तु उस में रोमन की कुछ मिलावट है। ये ईसाई धर्म के अनुयायी हैं। इनके धर्म की

दो मुख्य शाखायें हैं—रोमन कैथालिक और प्राटिस्टैण्ट। पहले रोमन कैथालिकों की बढ़ती थी किन्तु अब प्राटिस्टैण्ट दिन दुगुनी रात चौगुनी उन्नति कर रहे हैं।

सामाजिक और राजनैतिक स्थिति

इनकी सामाजिक अवस्था और भारतीय सामाजिक अवस्था में बहुत बड़ा भेद है। हमारे घरों में सभी कुटुम्ब परस्पराश्रित हो कर रहता है, किन्तु अंग्रेजों में कोई विवाहित युगुल एक घर में नहीं रह सकते। सभी अपना २ कमा कर आजीविका करते हैं। अंग्रेज़ जितने व्यायामप्रिय होते हैं उतने भारत निवासी नहीं होते। जो थोड़ा बहुत व्यायाम की ओर कुछ ध्यान हुआ भी है वह भी पश्चिम से ही आया है। इनके वस्त्र शरीर से चिपटे होते हैं और हमारे खुले। ये बड़े स्वतन्त्रताप्रिय होते हैं। इनका शासन पार्लिमेण्ट के अधीन है जिस में सभी सभासद लोगों के चुने हुए रहते हैं। यह शासनसंस्था इतनी अच्छी है कि इसकी प्रति-द्वन्द्वता और कोई नहीं कर सकती। अंग्रेज़ों को इसका बड़ा अभिमान है।

सभ्यता

इनकी सभ्यता इतनी पुरानी नहीं जितनी भारतीय सभ्यता पुरानी है, किन्तु उसका डङ्का आज चारों ओर बज रहा है। यहाँ तक कि भारत के लोग भी अन्धाधुन्ध अपनी पुरानी सभ्यता को छोड़ २ उसके पीछे चलने लग पड़े हैं।

उपसंहार

यह जाति नये २ आविष्कार करने में बड़ी निपुण है। संसार भर में जितने आविष्कार हुए हैं उनमें इङ्गलैण्ड के लोगों का बहुत बड़ा हाथ है। स्वदेश-भक्ति इनमें कूट कूट कर भरी रहती है। ये अपने देश के लिए मरने तक के लिए तैयार हो जाते हैं। जर्मन जैसी प्रबल जाति के सामने ठहर कर उसे पराजित करना इन्हीं की देशभक्ति का

काम था। ईसाई धर्म के लोग अपने धर्म के प्रचारार्थ करोड़ों रुपये खर्च कर प्रचारकों को दूसरे देशों में भेजते हैं। यह इनके गुणों के ही कारण से है कि आज कल संसार में अंग्रेज़ जाति एक जीती जागती जाति है और इसका नाम दिगन्तव्यापी है।

हिन्दू

शीर्षक

भूमिका—हिन्दुस्तान (भारतवर्ष) के निवासी। भिन्न २ प्रान्तों में निवास करने और भिन्न २ भाषाओं के बोलने के कारण इनके अनेक भेद हैं—जैसे बङ्गाली, महाराष्ट्री, पंजाबी।

प्रारम्भिक इतिहास—आर्यन रेस के प्रधान अङ्ग। मुसल्मानों के राज्य में हिन्दु (नास्तिक) नाम पड़ा। इनकी सभ्यता और स्थिति के चिन्ह अन्य देशों में भी पाये जाते हैं।

आकार, गठन—हिन्दुस्तान बहुत बड़ा देश है, इस लिए अन्यान्य प्रान्तों की जल वायु की नितांत भिन्नता के कारण इनके रङ्ग और शरीर-गठन में बहुत भेद है। यथा—पहाड़ी देशों के गौर और हृष्ट पुष्ट, मद्रास के श्यामवर्ण—आदि।

भाषा—पहले पहल संस्कृत मातृभाषा। कालपरिवर्त्तन से प्राकृत, पुनः उससे बिगड़ कर भिन्न २ प्रान्तों की अन्यान्य भाषाओं में हिंदी, उर्दू, बंगाली, गुजराती, महाराष्ट्री, उड़िया इत्यादि, परन्तु हिंदी मुख्य है।

धर्म—चार वेद इनके मुख्य धर्मग्रन्थ हैं। पश्चात् पुराणादिओं का बनना, मूर्तिपूजा भजन का मुख्य साधन। ब्राह्म, वैष्णव, शाक्तिक, आर्य्य आदि अन्यान्य भेद। अनेक मतभेदों से परस्पर विरोध।

सामाजिक और राजनैतिक स्थिति—पुरातन चार वर्ण, चार आश्रम, किन्तु आजकल सब कुछ बिगड़ा हुआ। छूआछूत का बहुत प्रचार, अछूत जातियों से अत्याचार। बाल विवाह। साधुओं का अत्यादर

इससे हानि और लाभ। परस्पराधीन कुटुम्ब की रीति। स्त्री शिक्षा की कमी। शिक्षा और सभ्यता में सब के अगुआ। हिन्दू शास्त्र सब से पुराने। ब्रिटिश शासन के अधीन, वायसराय की कौंसिल, प्रांतिक कौंसिल। नये सुधार।

विशेष विवरण—संसार भर में सबसे पुरानी और प्रसिद्ध जाति। २४ कोटि इनकी संख्या। इनके सम्बन्ध से ब्रिटिश जाति को लाभ, इनकी सभ्यता से संसार को लाभ।

सिक्ख

भूमिका—पञ्जाब के निवासी। संस्कृत के 'शिक्ष्' (सीखना) धातु से। सिंह भी कहाते हैं क्योंकि यह बड़ी शूर जाति है।

प्रारंभिक इतिहास—गुरु नानक इस पंथ के संचालक। उनका जन्म १४९६ में। लाहौर, अमृतसर, गुजरावालां के ज़िले में प्रायः। गुरु गोविन्दसिंह की सेना में लड़े। पीछे फौज में भरती होना उनका कर्तव्य। महाराजा रणजीतसिंह इनके प्रथम शासक (पंजाब के) हुए।

आकार, गठन—बड़े लम्बे चौड़े, रङ्ग गेहूं का। कारण-परिश्रम, खेती बाड़ी।

भाषा, धर्म—भाषा पंजाबी, धर्म ग्रंथ-आदि ग्रंथ। हिन्दुओं का एक अवांतर भेद, पीछे हिंदुओं से पृथक् कहलाने लगे। दस गुरु इनके धर्म नेता।

सामाजिक और राजनैतिक स्थिति—सामाजिक संस्था प्रायः हिंदुओं जैसी। दिहातों में बाल्यविवाह कम। शिक्षा की ओर इनकी प्रवृत्ति दिनों दिन बढ़ रही है।

ब्रिटिश शासन के अधीन।

विशेष विवरण—बड़ी लड़ाकी कौम। सरकारी फौज के स्तम्भ।

यूरोपीय युद्ध में इनका विशेष हाथ। इनके पुराने वेष का नमूना अभी तक भुजङ्गी सिंहों में पाया जाता है। अमृतसर तरणतारण इनके तीर्थ स्थान। खालसा कालिज।

प्रश्न

इन विषयों के शीर्षक बनाकर प्रस्ताव लिखो—
जापानी, चीनी, तुर्क, मरहठा, राजपूत, मुसलमान।

पशुविषयक

ग्राम्य-पशु

गाय

शीर्षक

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—चतुष्पद स्तनपायी श्रेणी का पालतू जानवर, भूमण्डल में सर्वत्र पायी जाती है।

आकार, गठन, वर्ण-आकार—प्रायः चार पांच हाथ लम्बी, सुडौल, सभी वर्णों की।

भोजन, स्वभाव—मुख्य भोजन तृण, किन्तु मांस के बिना सब कुछ खा लेती है। स्वभाव सुशील, बछड़े से प्रेम, आठ मास दूध देती है। धीमी २ चाल। ग्वाले के साथ चरने जाती है, स्वयं गृह आती है।

जंगली, पालतू—पालतू बड़ी उपयोगी, नील गाय आदि जंगली।

उपयोगी—दूध देती है, दूध से घी इत्यादि, मूत्र औषधियों के काम में उपयोगी, गोबर जलाने और खाद के लिए, चमड़े से जूता, खुर से सरेस, हड्डियों से बटन और बहुत चीजें।

विशेष विवरण—हिन्दुओं में इसका मान, कारण—प्राचीन काल में गोधन, प्रत्येक गृह में इसकी उपस्थिति, आजकल अभाव, इससे भारत की दुर्दशा।

प्रस्ताव

गाय के चार पाँव होते हैं, इस लिए इसे चतुष्पद कहते हैं।

श्रेणी, प्राप्तिस्थान

यह स्तनपायी श्रेणी का जन्तु है। यह पागुर करती है। यह प्रायः सर्वत्र भू-मण्डल में विद्यमान है, तथापि भारतवर्ष में बाहुल्यता से पायी जाती है। स्विट्ज़रलैण्ड की गायें बड़ी प्रसिद्ध हैं। भिन्न २ जलवायु के कारण अन्यान्य देशों में इसके आकार और वर्ण में बहुत भेद हो जाता है।

इसका मुख लम्बा, दो सींग और चार टांगे होती हैं। इसके

आकार, गठन

खुर खण्डित रहते हैं। अतः उन खुरों के बल यह ऊँची २ पहाड़ियों पर बिना फिसले चढ़ जाती है। इसके पीछे एक पूँछ रहती है जो इसके शरीर से मक्खी, मच्छड़ उड़ाने के काम आती है। इसके गले के नीचे कुछ ढीला सा मांस लटका रहता है, उसे गले की झालर कहते हैं। इसका आकार चार पाँच हाथ लम्बा होता है। इसके शरीर पर छोटे २ रोम होते हैं जो इसके शरीर को शीत से बचाय रहते हैं। यह सभी वर्णों की होती है।

घास इसका मुख्य भोजन है, किन्तु मांस के बिना जो कुछ

भोजन, स्वभाव

इस के आगे डालो उसे खा जाती है। यदि इसे खल (तिलों के छिलके) खिलाया जाय तो यह संघना और बहुत दूध देती है।

यह स्वभाव का सीधा जानवर है। इसकी आयु १५ वर्ष के लगभग होती है। दस मास तक गर्भस्थिति के बाद यह बच्चा जनती है। आठ महीने तक दूध देती है। इसकी चाल बड़ी गम्भीर और धीमी होती है। दोपहर के समय इसे बाहर चराने के लिए ले

जाकर सांयकाल को वापस लाते हैं। कहीं भी इसे छोड़ दो यह सीधी अपने स्वामी के घर पहुँच जाती है।

जंगली, पालतू

यह ग्राम्य और वन्य दोनों तरह की होती है। वन्य गाय को नील गाय कहते हैं। यह खेती के लिए बड़ी हानि-कारक है। लोग इनका शिकार खेलते हैं।

उपयोगी

इस का दूध बड़ा स्वादु और स्वास्थ्यकर होता है। छोटे बच्चे इसे पीकर नीरोग रहते हैं। दूध से मक्खन, घी निकलता है जिस से हमारा शरीर पुष्ट होता है। इससे अनेक प्रकार की मिठाइयाँ भी बनती हैं। यदि किसी का स्वास्थ्य बिगड़ा होता है तो उसका गोदुग्ध पर निर्वाह होता है।

गोमूत्र अनेक औषधियों में उपयुक्त होता है। इस के गोबर से गृह पोतने से कई कृमि मर जाते हैं और अनेक रोग पास नहीं आते। जो कोई भी शुभ-कार्य्य हिन्दुओं के गृह में हो पहले उस स्थान को गोबर से पोत लेते हैं। दूसरे यदि गोबर खेतों में डाला जाय तो यह खाद का काम देता है। इसे सुखा कर जलाते भी हैं।

गाय के चमड़े से जूते बनते हैं और खुर से सरेस (जिससे छापने की कलों में रूले ढाले जाते हैं) त्यार होती है। हड्डियों से बटन और अनेक खिलौने बनाये जाते हैं। भारत एक कृषि-प्रधान देश है, इसलिए यहाँ गो-पालन एक व्यवसाय बन गया है। किसान लोग गायें पाल कर उनका दूध, बछड़े, बछड़ियाँ बेचते हैं। सच तो यह है कि इस से बढ़ कर दूसरा कोई पशु मनुष्य का हित-साधन नहीं कर सकता।

हिन्दु जाति इस का बड़ा आदर करती है। यहाँ तक कि यह इसे माता कहती है। हिन्दु शास्त्रों में गो-बध महापाप माना गया है। इसका कारण यह है कि गाय

जितनी संसार की उपकारक है उतना और कोई पशु नहीं। प्राचीन काल में भारत में कोई गृह गोरहित न होता था। जितनी किसी के पास गौओं की अधिक संख्या होती थी समाज में उतना उसका अधिक मान होता था। इस लिए इसे गोधन कहते थे। प्राचीन इतिहास, पुराणों में अनेक कार्य्यों की सिद्धि गाय से वरदान प्राप्ति से मिलती लिखी है। कहते हैं कि दिलीप के गृह में नन्दिनी-नामक वसिष्ट की कामधेनु की कृपा से सन्तान हुई थी।

किन्तु आज कल कई कारणों से भारत में दिन प्रति दिन इस की कमी हो रही है। हिन्दुस्तान की दुर्दशा का यह भी एक मुख्य कारण है।

एक कारण तो यह है कि मुसलमान, क्रिश्चयन आदि जातियाँ इसे भक्ष्य मान कर खा जाती हैं, अतः हज़ारों की संख्या में प्रतिदिन इनकी हत्या होती है। दूसरे हजारों गायें प्रतिदिन अंग्रेजी सेना के भोजन के लिए मारी जाती हैं। तीसरे प्रतिवर्ष लाखों गौवें विदेशों में व्यापारी लोग ले जाते हैं। चौथे हिन्दुस्तान में लोगों की आमदनी इतनी कम हो गयी है कि हज़ारों में से कोई एक पुरुष इसे पालने का साहस कर सकता है।

किन्तु परमात्मा की कृपा से अब गोरक्षा की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित होने लगा है। स्थान स्थान पर गोशालाएं खुलने लगी हैं। हिन्दुस्तान की दो मुख्य जातियाँ हिन्दू और मुसलमान परस्पर मेल कर यदि इस की रक्षा का यत्न करें तो कुछ सफलता हो सकती है अन्यथा नहीं। परमात्मा इन्हें सुबुद्धि दे।

घोड़ा

घोड़ा बचपन में दुग्ध पान करता है इस लिए स्तनपायी श्रेणी का चतुष्पद जन्तु है। गाय के समान यह पागुर नहीं करता। एक बार ही चबाकर खाना खा

श्रेणी,
प्राप्तिस्थान

जाता है। प्राय: सभी स्थानों में यह मिल सकता है, तो भी अरब का घोड़ा सौन्दर्य्य और इङ्गलिस्तान का घोड़ा मजबूती में प्रसिद्ध है। कई स्थानों में इसका आकार छोटा होता है। तब इसे टट्टू कहते हैं। जारकन्द और ब्रह्मा के टट्टू प्रसिद्ध हैं।

आकार, गठन

इसकी गर्दन पर लम्बे बाल होते हैं किन्तु आजकल इनको काट कर छोटा करने का बहुत प्रचार है। पूँछ गुच्छेदार और खुरों तक लम्बी रहती है। पूँछ को भी काट कर आजकल छोटा कर देते हैं। इस के खुर गाय के समान खण्डित नहीं रहते। इन पर लोहे के नाल इसलिए जड़ देते हैं कि कहीं चोट न आ जाय। इसकी पीठ इस बनावट की होती है कि सवार को बैठने में कोई असुविधा न हो। इसका शरीर सुडौल और बलिष्ठ होता है। यह सभी वर्णों का होता है।

स्वभाव, भोजन

यह बड़ा स्वामि-भक्त जानवर है—कई बार इसने अपनी जान तक देकर स्वामी की रक्षा की है। महाराणा प्रतापसिंह का चेतक नाम घोड़ा इसके लिए प्रसिद्ध है। यह कष्टों की परवाह नहीं करता। लोग इसे दुलकी, पोइआ, सरपट आदि अनेक चालें चलना सिखाते हैं। १८ मास गर्भधारण के बाद घोड़ी बच्चा जनती है। घोड़े की आयु ३०-४० वर्ष की होती है। यह मांसाहारी नहीं। मांस के सिवा और सभी पदार्थ खा सकता है, तो भी घास इसका मुख्य भोजन है। इसको अधिक बलवान बनाने के लिए चना, मलीदा आदि भी देते हैं।

जंगली, शिक्षित

जंगली घोड़े दक्षिणी अमरीकामें पाये जाते हैं। लोग उन्हें पकड़कर शिक्षित करते हैं। शिक्षित होकर यह इतना सधजाते हैं कि अनेक दु:साध्य और विस्मयजनक कार्य्य करने लगते हैं। यह सरकसों में ऐसे खेल करते हैं जिनको देख बुद्धि चकरा जाती है। पोलो और दौड़ के घोड़े शिक्षित होते हैं।

यह हर तरह की सवारी के काम आते हैं। टांगा, फिटन आदि गाड़ियों में जोते जाते हैं। बड़े बड़े भारी बोझ ढोते हैं। पाश्चात्य देशों में इनसे हल चलाते हैं। घोड़ा सेना का एक प्रधान अङ्ग है। प्राचीन काल में जिसे चतुरङ्ग सेना कहते थे उसका एक अङ्ग घोड़ा भी होता था। आजकल तोपखानों और रिसालों में घोड़े ही काम आते हैं। इसके चमड़ेसे बहुत चीजें बनाई जाती हैं। हड्डियों से खिलौने और खुरों से सरेस बनती है। कभी कभी यह बहुत हानिकर भी हो जाता है। जब कभी यह स्वामी से रुष्ट हो जाय तो उसे पीठ से नीचे गिरा मारता है।

उपकार

हिन्दुओं में घोड़े का प्रयोग बहुत प्राचीन काल से होता रहा है। अश्वमेघ यज्ञ का वर्णन बहुत पुराने शास्त्रों में भी आया है। हिन्दू और कुछ मुसलमानों की जातियों में विवाह के समय वर को घोड़े पर बैठा कर बधू-गृह में ले जाते हैं। जैसे आजकल इनके लिए अश्वचिकित्सालय (Vaterinary Hospitals) खुले हैं ऐसे प्राचीन काल मेंभी खुले रहते थे।

विशेष विवरण

कुत्ता

शीर्षक

श्रेणी, प्राप्ति स्थान—चतुष्पद, स्तनपायी, सब स्थानों में प्राप्त।

आकार, गठन—देश भेद से छोटे बड़े। खरगोश के आकार से भालू के आकार तक। पांव में गद्दी, नख तेज़, पूँछ लम्बी और ऊपर को मुड़ीहुई, दांत तिरछे। शरीर मज़बूत। अंग्रेज़ी कुत्तों में बहुत भेद सेण्टवरनार्ड, फाउण्डलैण्ड, ग्रेहाउण्ड, बुलडाग, स्पेनियल। सभी रंग के।

स्वभाव, भोजन—स्वामि-भक्त (अनेक आख्यायिकायें), शिकारी, घ्राण शक्ति बड़ी तेज़, बहुत गर्मी नहीं सह सकता। आयु १४-१५ वर्ष,

कुतिया दो मास गर्भ धारण करती है। एक बार बहुत बच्चे देती है। घास के बिना सभी कुछ खा लेता है, मांसाहारी विशेष कर।

जंगली, पालतू—जंगली हालत में बड़ा घातक। शिक्षित होकर बड़ा उपकारी। इनके पालने की प्रथा पश्चिम में विशेषतः। हिंदुस्तान में वहीं से प्रचलित।

उपयोगी—स्वामिभक्त, विश्वासी, गड़रियों का सहायक, न्यूफाउण्ड-लेण्ड कुत्ते डूबे हुओं को निकालते हैं। सेण्टबर्नार्ड बर्फ़ में दबकर मरे हुओं को खोज लाते हैं। शिकार के उपयोगी, शिक्षित होकर बड़े बड़े काम करते हैं। दूतों का काम भी कहीं कहीं इनसे लिया जाता है। पगले कुत्तों से हानि।

विशेष विवरण—प्राचीन शास्त्रों में इनका वर्णन। महाराज युधिष्ठिर के साथ कुत्ते का स्वर्ग-गमन। हिंदू-शास्त्रों में इनको अस्पृश्य माना गया है।

ऊँट

शीर्षक

श्रेणी, प्राप्ति-स्थान—चतुष्पद, स्तनपायी, पागुर करता है। हिंदुस्तान, अरब, अफ़गानिस्तान, चीन, तिब्बत आदि देश और अफ्रीका के उष्ण देशों में प्राप्य।

आकार, गठन—छः सात हाथ ऊँचा, बड़ा लम्बा, गर्दन लम्बी, कान छोटे, होंठ छोटे, पूँछ छोटी, लम्बी टांगे, पीठ पर कूबड़। बड़ा बेडौल भद्दा, मटियाला रंग।

स्वभाव, भोजन—शान्त स्वभाव, तीव्र घ्राणशक्ति, समझदार, ४०-५० वर्ष की आयु। १४ महीने के गर्भ के बाद ऊँटनी बच्चा देती है। बहुत बोझ उठाता है, सहनशक्ति से अधिक बोझ लादने पर चिल्लाने लगता है और कभी २ उसे गिरा तक देता है। पत्ते, बबूल के

कांटे खाता है। पानी की तृषा कम रहती है।

उपकार—बोझ ढोना, मरु देश में चलना और वहां बाणिज्य के लिए एकही साधन। मरु देश का जहाज़ कहाता है, एकही दिन में सांडिनी सौ सौ मील चल जाती है। यह सब कुछ होने पर भी लड़ाई के काम का नहीं।

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो—

भैंस, बिल्ली, बकरी, बैल।

वन्य-पशु

सिंह

श्रेणी, प्राप्ति-स्थान—स्तनपायी श्रेणी का चतुष्पद, शिकारी, बिडाल की श्रेणी का। अफ़रीका तथा एशिया के कतिपय देशों में पाया जाता है।

आकार, गठन—मुख गोल, दांत तीक्ष्ण, शरीर पर छोटे २ रोम, लम्बी गुच्छेदार पूँछ, पांव में गद्दी, तेज़ नख, आकार ६ फुट, वर्ण ख़ाकी पीलापन लिए हुए, बड़ा बलिष्ठ।

स्वभाव, भोजन—गंभीर, व्यर्थ क्रोध नहीं करता, ७०-८० वर्ष की आयु, सिंहनी बहुत बच्चे देती है। किसी के उपकार को नहीं भूलता, मांसाहारी।

उपयोग—हिंसाशील होने पर भी शिक्षित, सरकस में खेल, चमड़ा आसन के लिए; नख दांत औषधियों में प्रयुक्त।

विशेष विवरण—दुर्गावाहन, सनातनी हिंदुओं का पूज्य।

प्रस्ताव

श्रेणी, प्राप्तिस्थान

सिंह बचपन में दुग्ध पान करता है, इस लिए स्तनपायी श्रेणी का एक शिकारी चतुष्पद है। इसका कटिप्रदेश पतला होता है, कवि लोग (मृगराजकटि) की बड़ी उपमा दिया करते हैं। इसकी गणना बिल्ली की श्रेणी में है। इसका मुख्य निवास-स्थान अफरीका है किंतु एशिया में भी अरब, ईरान और भारतवर्ष के गुजरात और राजपूताना आदि कई देशों में मिलता है। आज कल सभ्य-जातियों की प्रवृत्ति ऐसे पशुओं को समूल नष्ट कर देने की ओर हो गई है। इस कारण इस समय सिंह उतनी बाहुल्यता में नहीं मिलते जैसे पहले मिलते थे।

आकार, गठन

देखने में यह जितना सुन्दर प्रतीत होता है उतना ही भयङ्कर भी है। इसका मुख बिडाल की तरह गोल रहता है। नासिका के दोनों ओर कड़े बालों की मूछें होती हैं। परमात्मा ने इसके दाँत बढ़े तिरछे और तीक्ष्ण बनाये हैं जिनसे इसे पशुओं के चीरने फाड़ने में कोई कठिनता न हो। इसकी पूँछ लम्बी होती है जिसके अन्त में काले बालों का छोटा सा गुच्छा रहता है। इसके पाँओं के नीचे गद्दियाँ हैं जिससे आखेट पकड़ने को चलते समय उनसे आवाज़ न निकले। इसके नख पाँव की गद्दियों में छिपे रहते हैं और जब चाहे उन्हें निकाल सकता है। इसका शरीर ६ से ८ फुट लम्बा रहता है और उस पर छोटे छोटे रोम होते हैं। इसके गरदन पर लम्बे लम्बे बाल होते हैं जिन्हें केशर कहते हैं, इसीलिये सिंह को संस्कृत में केशरी भी कहते हैं ! किंतु सिंहनी का न तो आकार इतना लम्बा होता है और न ही उसके गरदन पर लम्बे बाल होते हैं।

इसका रंग पीलापन लिए हुए खाकी होता है। यह सब वन्य पशुओं में से बलिष्ठ जन्तु है। अपने शिकार को कन्धे पर उठाकर कोसों भागा जाता है।

स्वभाव, भोजन

सिंह बड़ा गम्भीर पशु है। जब यह क्षुधातुर होता है तभी जीवों को मारने निकलता है। यह वृथा जीव-हिंसा नहीं करता। यही व्याघ्र और इसका अन्तर है। प्रायः यह रात्रि में शिकार करता है क्योंकि उस समय इसकी आँख की पुतली खुल जाती है और इसे दूर की चीजें नज़र आने लगती हैं। अधिक बल और गम्भीरता के कारण इसे पशुराज या बनराज कहते हैं। इसकी आयु ७०-८० वर्ष तक की होती है। सिंहनी एक ही बार कई बच्चों को जनती है। सिंह के विषय में प्रसिद्ध है कि यह किसी के उपकार को नहीं भूलता। एण्ड्रोकलिज़ नामक क्रीतदास ने एक दिन किसी सिंह के पाँवसे काँटा निकाला था। दैववश वही दास किसी अपराध में पकड़ा जाकर उसी सिंह के आगे फेंका गया। शेर ने उसे छुआ तक नहीं, प्रत्युत वह उसे जिह्वा से चाटने लगा। इसका आहार मांस होता है। गाय, हरिण और नर के मांस में इसकी अधिक रुचि है। जब किसी जीव को खाने के लिए पकड़ता है तो पहले उसके गले का रुधिर पीकर पीछे उसका मांस खाता है।

उपयोगी

हिंसाशील होने पर भी इससे बहुत काम निकलते हैं। इसको पकड़कर सरकसों में ऐसे खेल कराये जाते हैं जिस से प्रतीत होता है कि यह कभी हिंसक था ही नहीं। चिड़ियाघरों में इसे पिञ्जरों में बन्द कर देते हैं। इसका पकड़ना बड़ा कठिन है किन्तु मनुष्यबुद्धि के आगे इसका महान् बल तुच्छ है। इसका चमड़ा बड़ा पवित्र समझा जाता है, इसलिए लोग इसका आसन बना कर उस पर बैठते हैं। इसके दाँत और नख कई ओषधियों में काम आते हैं।

हिन्दू शास्त्रों में इसे दुर्गा का वाहन माना गया है। इसलिए सनातनी हिन्दुओं का यह पूज्य है। इसकी उपमा उन नरों से दी जाती है जो बल और गम्भीरता में बढ़े चढ़े हों।

विशेष विवरण

हाथी

शीर्षक

श्रेणी, प्राप्ति-स्थान—स्तनपायी, चतुष्पद। अफ़रीका तथा एशिया में लङ्का, श्याम, ब्रह्मा, आसाम, भारतवर्ष में प्राप्य।

आकार, गठन—स्थल-चर जीवों में सबसे बड़ा। शरीर मोटा, गरदन छोटी, लम्बी सुण्ड, लम्बे चौड़े कान, कानों के दोनों ओर गण्ड जिनसे मद बहता है, आंख छोटी, पूँछ लम्बी और गुच्छेदार, पांव मोटे, बाहिर निकले दो बड़े (किंतु हथिनी के छोटे) दांत, किंतु खाने के लिये दांत दूसरे होते हैं। इसलिए जो मनुष्य असली भाव छिपा कर बनावटी भाव प्रकट करे उसके लिए यह कहावत है—हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और। सुण्ड हाथ का काम देता है।

स्वभाव, भोजन—शीघ्र शिक्षित, आज्ञाकारी, धीर, गम्भीर, सहिष्णु स्वामिभक्त, डरपोक, सङ्गीतप्रिय, स्नान के बाद धूलिरमण, अपकार का बदला लेने में दृढ़ (दर्जी का सुई चुभोना और हाथी के पानी डालने की आख्यायिका) बन्य-दशा में टोलों में रहता है। आयु १५० वा इससे भी ज़्यादा। हथिनी १६ मास के गर्भ के बाद बच्चा जनती है। पेड़ों के डाल, पत्ते, ऊख, महुआ, मलीदा, घास आदि भोजन। पानी में रह कर बड़ा प्रसन्न।

उपकार—प्राचीनकाल में युद्ध के काम, आजकल बोझा लादना, बरातों

में इन्हें सजाना, इनपर चढ़कर शिकार, दांत और हड्डी की बड़ी चीज़ें, महाराजों के पास सवारी के लिए।

विशेष विवरण—जङ्गली हाथी खेतों को बिगाड़ता है, जब मत्त हो जाय तो कई जानें जाती हैं। सरकसों में खेल। पुराणों में इन्द्र की सवारी के लिए ऐरावत हाथी।

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो—

हरिण, बाघ, बन्दर, भालू, गैंडा, गीदड़, भेड़िया।

जलचर जीव

मछली

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—अण्डज, रीडदार, जल निवास-स्थान, सर्वत्र प्राप्य।

आकार गठन—सुन्दर, शरीर पर कड़े चोंपटे, दोनों ओर से पतली, बीच से मोटी, पूँछ और दोनों ओर पंख, गलफड़ों से श्वास लेती है।

स्वभाव, भोजन—बड़ी चञ्चल, जल से अलग नहीं रह सकती है। मुर्दा, मिट्टी, थूक, खङ्कार, आटा, दाना-इनकी खुराक, अनेक वर्ण, अनेक भेद।

कैसे पकड़ी जाती है—जाल वा कांटे के द्वारा पकड़ी जाती है।

उपकार—हिंदू इसका दर्शन शुभ मानते हैं। इनसे जल स्वच्छ रहता है, इनकी चर्बी औषधियों के काम में आती है। बहुत जातियों की खुराक।

विशेष विवरण—हिन्दुओं के दश अवतारों में एक मत्स्यावतार भी हुआ है, इसलिए उन लोगों की पूज्य।

मछली अण्डे से पैदा होता है। इसके रीढ़ की अस्थि होती है, इस लिए यह अण्डज और रीढ़दार श्रेणी का प्राणी है। कुछ छोटी मछलियाँ ऐसी भी हैं जिनके रीढ़ नहीं भी होती।

श्रेणी, प्राप्तिस्थान

जल इसका निवासस्थान है अतः सर्वत्र भूमण्डल में यह पायी जाती है। समुद्र, नदी, तालाब, गड़हा इत्यादि इनके निवास-स्थान हैं।

यह देखने में बड़ी सुन्दर होती है। इसके शरीर पर कड़े और चमकदार चोपटे रहते हैं। इसका मध्य भाग मोटा, पर मुख और पूँछ पतली होती है किन्तु मुख पूँछ से मोटा होता है। इसके दो पंख दोनों तरफ और दो पंख पूँछ पर रहते हैं। जब यह पानी में तैरती है तो पंख हिलते हैं और खूब चमकने लगते हैं। कई मछलियों की पीठ पर भी एक पंख रहता है। इसके फेफड़े नहीं होते, मुख के नीचे गलफड़े रहते हैं। उन्हीं से पानी बाहिर निकाल कर श्वास लेती है।

आकार, गठन

इसका स्वभाव तरल है। इसलिए संस्कृत में कवियों ने इनसे युवती स्त्रियों के नेत्रों की उपमा (मीनचञ्चललोचने) दी है। इसका जीवन जल पर ही निर्भर है। इससे अलग होते ही इनके प्राण भी अलग हो जाते हैं। कवियों ने मित्रता की उपमा मछली और जल से दी है। इनका परिवार बड़ी जल्दी बढ़ता है, जल में इनके झुण्ड के झुण्ड तैरते दिखाई देते हैं।

स्वभाव, भोजन

मिट्टी, कीड़ा, थूक, खंखार, आटा, दाना—इनकी खुराक है। अतः जहाँ पर मछलियाँ होती हैं वहाँ जल को शुद्ध, निर्मल कर

देती हैं। कभी कभी बड़ी मछलियाँ छोटी मछलियों को खा जाती हैं।

ये सभी रङ्ग की होती हैं। चिड़ियाघरों में लाल, हरी, नीली मछलियों को छोटे छोटे तालाबों में पालकर रक्खा जाता है। इनके अनेक भेद हैं—छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी मछली संसार में विद्यमान है। झींगा मछली बहुत छोटी और ह्वेल बहुत बड़ी होती है। यह प्रसिद्ध है कि ह्वेल का आकार ५०-६० फूट लम्बा होता है और टक्कर मार कर जहाज़ों को नष्ट भ्रष्ट कर देने की शक्ति रखती है।

इसके पकड़ने के जाल बने होते हैं। उनको चारों ओर से पकड़कर पानी में घुमाते रहते हैं और जब कोई मछली उसमें आ जाय झट जाल को पानी से ऊपर उठा लेते हैं जिससे पानी निकल जाता है और मछली पकड़ी जाती है। दूसरी रीति कांटे से पकड़ने की है। कांटे के साथ आटे का टुकड़ा लगाकर उसे डुबो देते हैं। फिर उस कांटे को एक डोरी से एक लम्बी छड़ी के साथ बाँध देते हैं। जब कोई मछली उस आटे को खाने लगती है तो छड़ी हिलने लगती है। जल्दी छड़ी से कांटे को झटका देते हैं और काँटा मछली के मुख में फँस जाता है।

जिस जल में यह रहती है उसे स्वच्छ रखती है। इसकी चर्बी

उपकार

से बहुत ओषधियाँ बनती हैं, जिनमें काड लीवर आइल बड़ी प्रसिद्ध है। बहुत लोगों की यह खुराक है। हिन्दुस्तान में बङ्गाली लोग बहुत मछली खाते हैं। पश्चिम में बहुत देशों का जीवन मछली के मांस पर निर्भर है। वहाँ इनका बड़ा व्यापार होता है। जब कभी किसी हिन्दू को किसी काम के लिए जाने से पहले मछली का दर्शन हो जाय तो वह इसे शुभ शकुन समझता है।

हिन्दुओं के दश अवतारों में एक मत्स्यावतार भी हुए हैं।

विशेष विवरण

क्रिश्चियन लोग मानते हैं कि जलप्रलय में सभी संसार जब जल में डूबने लगा तो हज़रत नूह ने मछली की सहायता से इसे बचाया था।

घड़ियाल (Crocodile)

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—छिपकिली जाति का, अण्डज, समुद्र, नदी, बङ्गाल की खाड़ी में प्राप्य, स्थल पर रह कर नहीं मरता।

आकार, गठन—प्रायः १७-१८ हाथ लम्बा, गोह के समान आकार, छोटे छोटे चार पर, पूँछ में कांटे, मुख की ओर मोटा और पूँछ की तरफ पतला।

स्वभाव, भोजन—हिंसक, बालू में अण्डे देता है। शिकार लेकर जल में कूद जाता है, जल में पकड़े हुए को नहीं छोड़ता, स्थल में पूँछ से मारता है। अण्डों के नाश हो जाने पर बड़ा बिगड़ता है। मछली, भेड़, बकरी, आदमी इसका भोजन है।

उपकार—कोई नहीं।

प्रश्न

इनके शीर्षक बनाकर प्रस्ताव लिखो—

घोंघा (The Snail), सीलमत्स्य (The Seal), जोंक।

पक्षी-विषयक

तोता

शीर्षक

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—कबूतर श्रेणी का अण्डज। भारतवर्ष, अफ़रीका, अमरीका आदि ग्रीष्म देशों में प्राप्य।

आकार, गठन—सिर गोल, चोंच तिरछी, पूंछ लम्बी, कण्ठ में काली धारा, पंजे मुड़े हुए, जीभ मोटी, वर्ण हरा, श्वेत, लाल, इत्यादि।

स्वभाव, भोजन—वृक्षों के खोखलों में घोसले बनाकर रहते हैं, मनुष्य के शब्द का अनुकरण, जङ्गलों में झुण्ड बनाकर उड़ते हैं, जाल द्वारा घोंसलों में पकड़े जाते हैं। जङ्गलों में फल खाते हैं, पलुआ होकर रोटी भात सभी कुछ खाते हैं।

उपकार—मीठी बातों से मन बहलाना, देवों के नाम सिखलाना, अनेक कहावतें कहानियाँ।

प्रस्ताव

श्रेणी, प्राप्ति-स्थान

तोता कबूतर श्रेणी का एक अण्डज पक्षी है। यह किसी न किसी रूप में प्रत्येक देश में मिलता है किन्तु ग्रीष्म देशों में सामान्यतः और हिन्दुस्थान, अफ्रीका और अमरीका में विशेषतः पाया जाता है।

आकार, गठन

इसका सिर कबूतर की तरह गोल और चोंच सुन्दर और तीखी होती है। इसकी चोंच की बनावट ऐसी है कि इससे बड़े २ कड़े फलों को भी फोड़ लेता है। इसकी पूँछ लम्बी होती है और गले में काली और लाल लकीरें रहती हैं। इन्हीं से इसकी जाति पहचानी जाती है। इसके पंजे ऐसे मुड़े हुए होते हैं जिन से खाद्य पदार्थ को

अच्छी तरह पकड़ लेता है। जीभ इसकी मोटी होती है। देश-भेद से ये कई रङ्गों के देखने में आए हैं। किन्तु हरा बाहुल्यता में मिलता है।

स्वभाव, भोजन

प्रायः वृत्तों की खोखलों में घोंसले बनाकर रहते हैं और लोग वहीं से जाकर इनके बच्चे पकड़ लाते हैं। शिकारी लोग इन्हें जाल में पकड़ते हैं। नगर, ग्रामों में ये बहुत नहीं रहते और जो कोई रहते भी हैं उन्हें लोग पकड़ लेते हैं। जङ्गलों में इनके झुण्ड के झुण्ड उड़ते रहते हैं। परमात्मा ने इन्हें मनुष्य शब्द का अनुकरण करने की अद्भुत शक्ति दे रक्खी है। लोग इन्हें पकड़ कर अच्छे २ पदार्थ खिलाते हैं, अनेक बातें और बोलियाँ सिखाते हैं। जो छात्र बिना समझे पाठ याद करते हैं उन्हें तोते की उपमा देते हैं। इनके विषय में अनेक कहानी, कहावतें प्रचलित हैं। शङ्कर दिग्विजय में लिखा है कि मण्डन मिश्र नामक विद्वान् के द्वार पर तोते भी वेदान्त के सिद्धान्तों पर विवाद कर रहे थे। भाषा में तोते मैना की कहानियाँ बड़ी प्रसिद्ध हैं। जङ्गल में केवल फल ही इनका जीवनाधार है, किन्तु पलुया होकर ये अनेक पदार्थ खाने लगते हैं।

उपकार

इन से कोई विशेष उपकार तो नहीं होता किन्तु इतनी बात अवश्य है कि इन्हें देवताओं के नाम सिखा कर लोगों को, उन के नाम स्मरण करने के बहुत अवसर मिल जाते हैं। लोगों के मन को बहलाने के लिए यह बड़ा अच्छा साधन है।

प्रश्न

इनके शीर्षक बना कर प्रस्ताव लिखो—

उल्लू, कौआ, शुतुरमुर्ग, मोर।

सरीसृप-विषयक

सांप

शीर्षक

श्रेणी, प्राप्ति-स्थान—सरीसृप, अण्डज जीव, ग्रीष्मप्रधान देशों में प्राप्य, भारतवर्ष, अफ्रीका में बाहुल्य।

आकार, गठन—रस्सी के समान लम्बा, पलक रहित आंखें, शरीर पर केंचुक, जीभ फटी हुई, कई फणधर, ज़हरीले दांत, अनेक भेद, भिन्न भिन्न आकार, अनेक वर्ण।

स्वभाव, भोजन—क्रूर, बिना सताये नहीं डसता, बंशी पर मस्त। छोटे छोटे जीव खाता है, मेण्डक विशेष, भोजन, दूध पीता है, हवा पीकर गुज़ारा, सांपन अण्डे खाती है।

उपकार—मदारियों की आजीविका, विष से और केंचुक से औषध, उपकारों से अपकार अधिक। हज़ारों मनुष्य प्रतिवर्ष मरते हैं।

विशेष विवरण—हिन्दुओं के लिये पूज्य, पृथिवी वासुकी पर आश्रित, विष्णु की शेषनाग शय्या, महादेव सर्पप्रिय, मङ्गल कार्य्यों में सर्प-पूजा, हिन्दू नहीं मारते, दूध पिलाते हैं, नाग पञ्चमी।

प्रस्ताव

श्रेणी, प्राप्ति-स्थान

साँप सरीसृप श्रेणी का एक अण्डज जीव है। सर्पण (रींगने) से सर्प और विषैला होने से इसे विषधर कहते हैं। ये विशेषतः ग्रीष्म देशों में होते हैं। भारतवर्ष और अफ़रीका में बहुत पाये जाते हैं। अफ़रीका के साँप बहुत विषैले होते हैं। पुराने मकान, खँडहर, जङ्गल, पहाड़ आदि निर्जन स्थान इनके निवास-स्थान हैं। यह बिल स्वयं नहीं बनाते किन्तु जहाँ कोई छिद्र इन्हें मिल जाय उसी को बिल बना कर रहने लगते हैं।

इसका आकार डोरी की तरह लम्बा होता है। सिर की ओर कुछ पतला रह कर यह बीच से मोटा होता है और पूँछ की ओर क्रमशः पतला होता जाता है। इसकी आँखें चमकीली होती हैं किन्तु उनपर पलक नहीं होते। जिस समय यह काटने लगे यदि उस समय थोड़ी सी राख या मिट्टी इसकी आँखों पर फेंकी जाय तो इसे नज़र नहीं आता। इसके शरीर पर एक केंचुक रहता है। जब यह पुराना हो जाता है तो उसे उतार देता है। इसके सहारे से यह बहुत तेज़ी से दौड़ सकता है और वृक्ष या दीवार पर चढ़ सकता है। इसकी जीब फटी रहती है इसी लिए इसे द्विजिह्व कहते हैं। कान न होने के कारण यह आँखों से ही शब्द सुनता है। इसके मुख में दो तीखे दाँत रहते हैं जिनके नीचे विष की थैलियाँ रहती हैं। जब कभी किसी को काटता है तो विष उस घाव में प्रविष्ट होकर उसके शरीर में संचारित हो जाता है।

आकार, गठन

साँपों के अनेक भेद हैं; कई छोटे होते हैं और कई बड़े। छोटे यहाँ तक कि उनकी लम्बाई अंगुष्ठमात्र ही होती है और मोटे यहाँ तक कि अजगर जैसे साँप चार पाँच आदमियों से उठाये भी नहीं उठते। कई साँप आठ दस कदम कूद भी सकते हैं। कई फणधर सर्प होते हैं जो एक तिहाई शरीर को उठा कर खड़ा कर लेते हैं। बहुत से साँप स्थल-चर होते हैं और बहुत जल-चर। जल-चर साँप विष-युक्त नहीं होते। देश वा जल-वायु के भेद से इनके वर्ण भी भिन्न भिन्न होते हैं। काले साँप बड़े ज़हरीले प्रसिद्ध हैं। चिड़िया घरों में इन्हें मोटे शीशे के गृह बना कर रखा जाता है।

ये स्वभाव से तो क्रूर हैं किन्तु जो इन्हें कुछ न कहे ये उसे भी कुछ नहीं कहते। ये टेढ़े चलते हैं, इसी कारण इन्हें भुजङ्ग कहते हैं। मनुष्य को देख कर छिप जाते हैं। इन्हें बड़ा कर्ण-रस है। वंशी के शब्द पर इतने मत्त हो जाते हैं कि इन्हें पकड़ते कुछ भय नहीं

स्वभाव, भोजन

होता। हिन्दुस्तान में उन्हें पकड़नेवालों को सपेले कहते हैं।

छोटे छोटे जानवर इनकी खुराक हैं, परन्तु मेढ़कों से इनका विशेष वैर है। किसी पदार्थ को दांत से नहीं चबाते किन्तु निगल जाते हैं। अजगर साँप मनुष्यों को भी निगल जाता है। धामिन साँप के विषय में कहा जाता है कि यह गाय, बकरी, भैंस और स्त्रियों के दूध पी जाता है। साँप मिट्टी भी खाते हैं। जहाँ कहीं और कुछ न मिले वहाँ हवा खाकर गुज़ारा करते हैं। लोग इन्हें दूध भी पिलाते हैं। साँपिन अपने अंडों को तोड़कर उनसे रस पी जाती है।

उपकार

इसका विष अनेक औषधियों में प्रयुक्त होता है। केंचुक बहुत रोगों के लिए लाभकारी है। हिन्दुस्तान में बहुत से साँप पकड़ने वाले मदारियों का जीवन इन पर निर्भर है। भारतवर्ष में सर्प-चिकित्सक बहुत हैं। कई औषधियों द्वारा चिकित्सा करते हैं कई तान्त्रिक क्रियाओं से। परन्तु इनके उपकारों की अपेक्षा अपकार अधिक हैं। प्रतिवर्ष हज़ारों मनुष्य इनसे काटे जा कर प्राण खो देते हैं।

विशेष

हिन्दू सर्पों को पूज्य देवता मानते हैं—नागपंचमी को कई प्रान्तों में एक बड़ा भारी मेला लगता है। पुराणों में लिखा है कि पृथिवी वासुकि नाम साँप के मस्तक पर आश्रित है। विष्णु महाराज शेषनाग पर सोते हैं और शिवजी महाराज भूषणों की तरह उन्हें गले में डालते हैं। सभी मङ्गल कार्य्यों में सर्प की प्रतिमा बनाकर उसकी पूजा करते हैं। इस लिए हिन्दू लोग इसे मारने से घृणा करते हैं और दूध पिला कर छोड़ देते हैं।

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो—

कनगोचर, छिपकिली, गोह।

रेशमी कीड़ा

इसका कीट जाति में बहुत उच्च-स्थान है। यह अण्डे से उत्पन्न होता है। पहले पहल चीनी लोगों को इसका ज्ञान हुआ था। अब भूमण्डल के सभी देशों में यह मिलता है। इङ्गलैण्ड, फ्रांस, जापान, भारतवर्ष, आसाम तथा काश्मीर आदि इसकी प्राप्ति के मुख्य स्थान हैं।

श्रेणी, प्राप्तिस्थान

जब यह अण्डे से निकलता है तो बहुत छोटा होता है, पुनः क्रमशः बढ़ता बढ़ता दो तीन इञ्च तक लम्बा हो जाता है। पर मादा नर से आकार में छोटी होती है। इसके सोलह पाँव और सात आँखें होती हैं। इसके शरीर में कुछ छिद्र रहते हैं, उन्हीं के द्वारा यह सांस लेता है। इसका वर्ण श्वेत होता है और पङ्खों पर काली लकीरें होती हैं।

आकार, गठन

मादा ३०० से ७०० अण्डे देती है जिनका आकार बहुत छोटा होता है। अण्डे से निकलते समय यह बहुत छोटा होता है, किन्तु ज्यों ज्यों शरीर के ऊपर से खलड़ी उतारता जाता है यह बढ़ता जाता है। पुनः इसके शरीर से सरेश सा कुछ चिपकदार पदार्थ निकलने लगता है जो उसके चौगिरदे चिपटता जाता है। धीरे धीरे वह एक कोषसा बन जाता है और कीट उसके भीतर रहने लगता है। जब वह अण्डा एक विशेष अवस्था तक पहुँच जाता है तो उसे गरम पानी में डालकर अन्दर के कीड़े को मार देते हैं। पश्चात् उस के ऊपर से १०० गज़ से ३०० गज़ तक लम्बा तागा निकल आता है। चीन के कीड़े से सब से लम्बा तागा निकलता है। यही रेशम है। यदि कीड़े को न मारा जाय तो वह बढ़कर स्वयं कोष से बाहिर

स्वभाव, भोजन

निकल आता है और कोष रेशम निकालने के काम का नहीं रहता। एरण्डी आदि के पत्ते इसकी खाद्य सामग्री है।

जितना यह कीट मनुष्यमात्र के लिए उपकारी है उतना कोई

उपकार

ही दूसरा होगा। रेशम से जितने लाभ हैं उन सभी का मूल-कारण एकमात्र यही है।

भारतवर्ष में बहुत प्राचीनकाल से रेशम का प्रयोग होता रहा है। प्राचीन से प्राचीन हिन्दू-ग्रन्थों में इसका वर्णन आया है। हिन्दू लोग इसे बड़ा पवित्र मानते हैं। कौशेय-वस्त्रों का वर्णन भारतीयों के नाटकों और अन्य काव्य-ग्रन्थों में बड़ी उत्तमता के साथ किया गया है।

विशेष विवरण

चींटी

शीर्षक

श्रेणी, प्राप्ति-स्थान—कीटजातीय, अण्डज, सर्वत्र प्राप्य, ऊँची जमीन, वृक्ष, दीवार आदि में वास, इनके मकान मनुष्यों की तरह सुप्रकार बने रहते हैं।

आकार, गठन—छोटा आकार, कोनेदार गोल माथा, आंखें छोटी, ६ टांगें, जबड़े दृढ़, शरीर के तीन भाग, अन्त में पंख, अनेक भेद, वर्ण काला, भूरा।

स्वभाव, भोजन—पुरुषवत् समाज-गठन, नर, मादा और नपुंसक, तीनों के पृथक् पृथक् काम। चीनी इसका मुख्य भोजन, मांसादि भी खाती है। बड़ी साहसी, घ्राण-शक्ति प्रबल, भविष्यत् का फ़िकर, जातीय सहयोगिता, पंक्ति में रहना।

उपकार—स्वभाव से अनेक शिक्षायें। रोगी कीड़ों को खाना, अपकार—वस्तुओं को भ्रष्ट करना।

मधुमक्खी

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—कीटजातीय अण्डज, मुख्यतः स्पेन, भारत, इटली, ईजप्ट आदि देशों में प्राप्य, छत्ते बनाकर रहती है।

आकार, गठन—शरीर के तीन भाग, सिर में आंखें, जीभ, दांत, २ छातियाँ, ६ पैर, २ पंख, पेट में मधु।

स्वभाव, भोजन—सामाजिक स्थिति के चार भाग। १–रानी–उसका कर्तव्य बच्चों को पालना, शासन करना। २–बड़े मक्खे, मक्खियों के पति। ३—मक्खियों का काम छत्ते बनाना। ४–मक्खियों का काम फूलों से मधु लाना। छत्ते की रचना बड़ी विचित्र, रानी प्रति दिन १००अण्डे देती है। मधुमक्खी बड़ी श्रमशील होती है, एक छत्ते में सहस्रों मक्खियाँ, वसन्त और ग्रीष्म में मधु एकत्र कर सर्दी में खाती हैं। मधुमक्खियों का बड़ा मेल, लोग मधु निकालते हैं।

उपकार—मधु-दान, छत्ते से मोम। अपकार—काटने से कष्ट।

विशेष विवरण—इनसे शिक्षा।

प्रश्न

शीर्षक बनाकर प्रस्ताव लिखो—

मकड़ी, भौंरा।

अप्राणी विषयक

(नगर, ग्राम)

लाहौर शहर

शीर्षक

भूमिका—पञ्जाब की राजधानी, रावी (ईरावती) के बायें तट पर। विद्या-पीठ।

जलवायु, आकार, जन-संख्या—जल वायु अच्छा, ग्रीष्म में अति गरम

और शीत में बहुत ठण्डा। परिधि बहुत लम्बी, जनसंख्या लगभग साढ़े तीन लाख।

पुरानी इमारतें, अन्य द्रष्टव्य-स्थान—किला, शाहलमार और शाहदरा उद्यान, जामा मसजिद, अनारकली बाज़ार, हाईकोर्ट, पोस्टआफिस, ठण्डी सड़क।

विशेष विवरण—विद्या-पीठ।

प्रस्ताव

लाहौर पंजाब की राजधानी है। पहले इसका शासन छोटे लाट के अधीन था, अब नये सुधार के अनुसार यहाँ बड़ा लाट रहता है। यह रावी (इरावती) के बायें तट पर बसा हुआ है। मुसलमान राज्य का यह एक बड़ा गढ़ रहता रहा है। इसके चारों ओर पक्की दीवार थी जो कि १९०६ में गिरा दी गई। इस के साथ एक छावनी भी है जो कि शहर से लगभग ५,६ मील की दूरी पर है और जिसे मियाँमीर कहते हैं।

भूमिका

कहा जाता है कि यह श्री रामचन्द्र के सुपुत्र लव के नाम पर प्रतिष्ठापित किया गया था। तब इसका नाम लवपुर था। पीछे बिगड़कर यह लाहौर कहलाने लगा। कुछ सौ वर्ष पूर्व यह एक राजपूत राज्य की राजधानी भी रहा है। जब यह मुसलमानों के हाथ आया तो उस समय इसका शासन हिन्दुओं के हाथ में था, मुसलमानों से इसे सिक्खों ने छीना। पश्चात् सिक्खयुद्ध में यह अंग्रेजों को मिल गया। अब तक इसपर अंग्रेजों का ही अधिकार है।

प्रारम्भिक इतिहास

यों तो इसका जलवायु बहुत अच्छा है किन्तु आजकल अधिक जनसंख्या के कारण यह बिगड़ गया है। ग्रीष्म में यह बड़ा गरम और सरदी में ठण्डा होता है। इस की परिधि कई कोस तक लम्बी है। शहर के गिरदे

जलवायु, आकार, जनसंख्या

कई दरवाज़े हैं। जनसंख्या के विचार से यह पंजाब के शहरों में सबसे बड़ा है। इसमें लगभग साढ़े तीन लाख मनुष्य रहा करते हैं जिनमें पारसी, क्रिश्चियन आदि कतिपय अन्यदेशीय जातियों के अतिरिक्त, मुसलमान, हिन्दू और सिक्खों की संख्या क्रमशः ज़्यादा है।

पुरानी इमारतें, अन्य द्रष्टव्य स्थान

यह बहुत पुराना स्थान है और प्रायः किसी न किसी राज्य की राजधानी रहता रहा है। इसलिए यहाँ पुरानी इमारतें बहुत हैं। कई उनमें खण्डहर पड़े हैं। शहर के पास ही एक बड़ा भारी पक्का किला है और उसके पास जामा मसजिद है। दोनों के मध्य में महाराजा रणजीतसिंह की समाधि है। शहर से कोई छः मील की दूरी पर शालामार उद्यान है। इसमें प्रतिवर्ष एक बड़ा भारी मेला लगता है। इस उद्यान में सैकड़ों फव्वारे लगे हैं। जब यह चलाये जाते हैं तो इसकी शोभा बढ़ जाती है। शहर के दूसरी ओर लगभग ४ मीलके अन्तर पर शाहदरा नामक एक छोटासा कस्बा है जहाँपर सुप्रसिद्ध शाहजहाँ का मकबरा है। पुराने शहर के बाहर एक बड़ा खुला अनारकली बाज़ार है, आजकल जितना यह प्रसिद्ध है उतना कोई दूसरा नहीं। यह अकबर की चहेती वेश्या अनारकली के नामपर प्रतिष्ठित है। कहते हैं कि अनारकली को अकबर ने जीते ही कबर में गाड़ दिया था। अंग्रेजों के समय की इमारतों में हाईकोर्ट, पोस्टआफिस, इंपीरियल बैंक, अजायबघर, चिड़ियाघर और अन्य कई स्थान द्रष्टव्य हैं। अनारकलीके अन्तसे लेकर कई मीलोंकी दूरी तक ठण्डी सड़क है जिसके दोनों ओर बड़े बड़े व्यापारियों की दुकानें, अंग्रेज अफसर और देशी अमीरों की कोठियाँ हैं। गवर्नमेण्टहौस भी इसी सड़क पर है, इसी सड़क के मध्य में महारानी विक्टोरिया की प्रतिमा है। रेलवे स्टेशन बहुत अच्छा बना है यहाँ से कितनी ही लाइनें

निकलती हैं। स्टेशन के पास एक बड़ा भारी वर्कशाप है।

लाहौर की मुख्यता का सबसे विशेष कारण यह है कि यह शिक्षा-विभाग का केन्द्र है। इसे यदि विद्यापीठ कहा जाय तो अनुचित न होगा। इसमें कितने ही कालेज हैं, जिनमें सब मिलाकर लगभग ८००० छात्र पढ़ते हैं। पञ्जाब का विश्वविद्यालय भी यहाँ ही है। कालिजों के अतिरिक्त कई स्कूल हैं। पञ्जाब के छोटे, बड़े राजकुमारों की शिक्षा के लिये एक चीफस् कालिज है।

विशेष विवरण

बनारस (काशी)

शीर्षक

भूमिका—गङ्गा के वाम तट पर स्थित, बनारस, काशी, वाराणसी नाम, बहुत बड़ा नगर। हिन्दुओं का तीर्थ स्थान। मन्दिर।

प्राचीन इतिहास—बहुत पुरानी, हरिश्चन्द्र कथा।

जलवायु, परिधि, द्रष्टव्य स्थान—जलवायु अच्छा, नाव से दृश्य। परिधि बहुत बड़ी। शिल्प कारीगरी, बनारसी कपड़े, पत्थर तथा पीतल के पात्र, खिलौने, प्रिन्स् आफ वेलस् हस्पताल, क्वीन्स् कालिज, हिन्दु विश्व-विद्यालय।

मेले—बुढ़वा मङ्गल, शिवरात्री इत्यादि।

संस्कृत पाठन—बड़े बड़े संस्कृतविद्वान्, हिन्दी नागरी प्रचारिणी सभा, हिन्दीकवि हरिश्चन्द्र का जन्मस्थान।

प्रयाग

शीर्षक

भूमिका—संयुक्त-प्रदेश में गङ्गा-यमुना के सङ्गम पर, बड़ा नगर, बहुत घना नहीं, पृथक् २ खण्ड, चौड़ी सड़कें। संयुक्त-प्रान्त की राजधानी।

इतिहास—पुरुरवा का राज्य, मुसलमानी राज्य, अङ्गरेज़ी राज्य।

धार्मिक—हिन्दुओं का तीर्थस्थान, त्रिवेणी, माघ मेला।

विद्या—विश्व-विद्यालय, मेयोर कालिज, कायस्थ पाठशाला आदि, ला कालिज होस्टल, हिंदी का केन्द्र।

द्रष्टव्य स्थान—हाईकोर्ट, अल्फ्रेडपार्क, खुसरो बाग़, यूनिवर्सिटीहाल।

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो—

दिल्ली, पटना, कलकत्ता, काश्मीर।

नदी, पर्वत

गंगा

शीर्षक

भूमिका—भारतवर्ष में सबसे प्रसिद्ध, भगीरथ के तपोबल से आकाश से अवतीर्ण, हिंदुओं की पूज्य।

प्रभव और प्रसार—हिमालय के पश्चिमोत्तर से निकल बंगालखाड़ी में गिरती है। स्थानभेद से नामभेद। गढ़वाल से गंगोत्री। वहां से चलकर अलकनन्दा से मिलकर हरिद्वार से होकर क्रमशः प्रयाग, कानपुर होती हुई बंगाल पहुँच जाती है।

उपकार—व्यापार को लाभ, तटस्थ नगरों के मेलों में लाखों की उपस्थिति, पंडे, जल पीने के लिये उत्तम। तटस्थ जंगलों में साधु महात्माओं की तपस्या। प्रधान नहर रुड़की।

प्रस्ताव

हिन्दुस्तान भर में गङ्गा सबसे प्रसिद्ध नदी है। वास्तव में इस का प्रभव हिमालय में है किन्तु पुराणों में इसकी उत्पत्ति के विषय में बड़ी विचित्र कथा आती है।

भूमिका

जिस समय कपिल की क्रोधाग्नि से सगर के साठ हज़ार पुत्र दग्ध होगये थे तो उस समय उनके उद्धार के अर्थ गङ्गा के जो पहले अन्तरिक्ष में बहती थी, भूमण्डल पर उतारने की आवश्यकता पड़ी। सूर्य्यवंश के बड़े बड़े राजाओं ने यत्न किया किन्तु किसी से कुछ न बन पड़ा। अन्त में गङ्गा को अन्तरिक्ष से उतारने का सौभाग्य भगीरथ को ही प्राप्त हुआ। पहले यह आकाश से शिव की जटा में गिरी, पुनः वहाँ से इसका प्रवाह पृथ्वी पर पहुँचा। इस कारण हिन्दू इसे अतिपूज्य और पवित्र मानते हैं।

पर्वतराज हिमालय के पश्चिमोत्तर प्रदेश से निकलकर लगभग १५०० मील तक बहती हुई अन्त में यह बंगाल की खाड़ी में गिरती है। गङ्गा के भागीरथी, जाह्नवी, सुरनदी आदि अनेक नाम प्रसिद्ध हैं। गढ़वाल में कोई १३,८०० फुट की ऊँचाईसे निकलकर यह १०मील की दूरी पर गङ्गोत्री के मन्दिर के पास पहुँचती है। वहाँ से प्रायः २० मील तक चलकर इसमें अलकनन्दा का प्रवाह मिल जाता है। तबसे यह गङ्गा कहाने लग जाती है। वहाँ से बड़े बेग से चलकर यह हरिद्वार में से बहती हुई प्रयाग जा निकलती है। वहाँ इसमें यमुना और सरस्वती भी मिल जाती हैं। जहाँ पर यह तीनों नदियाँ मिलती हैं उसे सङ्गम या त्रिवेणी कहते हैं। यह स्थान हिन्दुओं का बड़ा पवित्र तीर्थ माना गया है। वहाँ से कानपुर होती हुई यह बनारस में पहुँचती है। मार्ग में इसमें कर्मनाशक, गोमती, घाघरा, गण्डक, कोशी आदि अनेक छोटी बड़ी नदियाँ मिलती हैं। अन्त में गाज़ीपुर, पटना, भागलपुर होती हुई बंगाल में चली जाती है।

प्रभव और प्रसार

जब रेलगाड़ी का प्रचार नहीं था तो इसके तटस्थ नगरों का व्यापार इसी के द्वारा होता था। अब भी इससे व्यापार को बहुत लाभ हो रहा है क्योंकि इसके तट पर हिन्दुस्तान के बड़े बड़े मुख्य व्यापारी शहर पटना, कानपुर आदि विद्यमान हैं।

उपकार

इससे कई नहरें निकाली गई हैं जिससे हजारों एकड़ बंजर भूमि उपजाऊ बन गई है। सबसे प्रधान नहर रुड़की के पास बहती है।

गङ्गा के माहात्म्य के कारण हरिद्वार, प्रयाग आदि नगरों में प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में लोग उपस्थित होते हैं, कुम्भ आदि बड़े २ मेले जुटते हैं, जिससे सैकड़ों कोसों की दूरी के लोगों को परस्पर मिलने तथा देश सुधार की सोच के लिए अवसर मिल जाता है। इससे एक बड़ी हानि यह हुई है कि तीर्थस्थानों पर पण्डे, पुजारी लोग चढ़ावे की आमदनी से निरुत्साह, आलसी और व्यभिचारी हो गये हैं।

इसका जल पीने में बड़ा उत्तम और स्वादु है। यदि सम्भाल कर रखा जाय तो वर्षों तक उसमें कृमि आदि नहीं पड़ते।

गङ्गा के तट पर बड़े बड़े घने जङ्गल हैं जिनमें साधु महात्मा लोग तपस्या करते करते अपनी सारी आयु बिता देते हैं। यह भी इसके माहात्म्य का एक कारण है।

हिमालय

'हिमालय' 'हिम' और 'आलय' का बना हुआ संस्कृत शब्द है, इसका अर्थ 'बरफ का घर' है। इसका कारण यह है कि यह सदा बरफ से ढका रहता है। हिन्दू इसे शिव का स्थान समझते हैं इसलिये उनकी दृष्टि में यह पूज्य है। पुराणों में इसका बहुत वर्णन है। वहाँ पर लिखा है कि

भूमिका

इसकी कन्या पार्वती से शिव का विवाह हुआ था। महाभारत में आता है कि युधिष्ठिर आदि पाँच पाण्डवों ने इसी की कन्दिराओं में जाकर अपने शरीर छोड़े थे। हिमालय का सर्वोत्कृष्ट वर्णन कविकुल-गुरु भगवान् कालिदास ने 'कुमारसम्भव' में किया है।

प्रसार और वर्णन

यह हिन्दुस्थान के उत्तर पश्चिम से पूर्व तक १५०० मील लम्बा चला जाता है और इसकी चौड़ाई ८० से १५०मील के लगभग है। इसकी ऊँचाई एक सिरे से दूसरे तक एकसी नहीं रहती, यदि कहीं पर यह इतना ऊँचा है कि इसके समान संसार भर में ही कोई होगा, तो अन्य स्थानों पर यह इतना नीचा भी है कि प्रायः भूतल प्रदेशों के बराबर होजाता है। यह एक लम्बा शृङ्खला-बद्ध पर्वत है। बीच बीच में बड़े २ गहरे गढ़े आजाते हैं जिनमें से नदी नाले होकर बहते हैं। इसमें किञ्चिनचिङ्गा, धौलागिरि और एवरिष्ट सर्वोच्च शिखर हैं। इनमें एवरिष्ट की ऊँचाई २९००२ फुट है। हिमालय में जो जगहें २००० फुट से ९५०० फुट की ऊँचाई पर हैं, वहाँ पर कभी कभी बरफ गिरती है। ६५०० फुट की ऊँचाई पर सरदी में सदा बरफ पड़ती है, किन्तु जो शिखर १६००० फुट की ऊँचाई पर हैं वहाँ पर सदा बरफ रहती है।

इसमें कई नगर और ग्राम भी बसे हुए हैं, जिनका शासन प्रायः छोटे बड़े रजवाड़ों के अधीन है। इसमें नेपाल सबसे बड़ी रियासत है। काश्मीर और भूटान भी अच्छे बड़े राज्य हैं, इनमें काश्मीर अत्युत्तम प्रदेश है। शिमला, नैनीताल, दार्जिलिङ्ग, मंसूरी आदि कई एक स्थान अंग्रेजों के अधिकार में हैं। यहाँ पर प्रतिवर्ष गरमी में भारत सरकार तथा अन्यान्य प्रान्तीय शासकों के दफ्तर जाया करते हैं।

इन नगरों के लोगों के वर्ण शीत की प्रधानता के कारण गोरे और शरीर बड़े पुष्ट और बलिष्ठ होते हैं। वे लोग हमारे देशों के

लोगों की तरह छली और कपटी नहीं होते। भिन्न भिन्न स्थानीय लोगों के भिन्न भिन्न खान, पान और आचार होते हैं। इन लोगों को सुरापान का महाव्यसन लगा हुआ है। इनके स्त्री पुरुषों में परस्पर परदा नहीं होता।

सिंह, बाघ, रीछ, बन्दर आदि सभी प्रकार के जानवर यहाँ पाये जाते हैं। प्रतिवर्ष कितने ही प्राणियों की जानें इनके कारण जाती हैं।

उपकार

इस पर्वतराज से जगत् भर को साधारणतः और भारतवर्ष को विशेषतः अनेक लाभ पहुँचते हैं। इससे जेल्हम, चुनाब, व्यास्मा, यमुना, ब्रह्मपुत्र आदि कतिपय नदियाँ निकलकर स्थल प्रदेशों में जनता का बहुत उपकार कर रही हैं। इसके जङ्गलोंसे जितनी लकड़ी निकलती है वह या तो मकान बनाने के काम आती है या जलाने के। इसका जलवायु अत्युत्तम है। कई असाध्य बीमारियों से ग्रस्त लोग वहाँ जाकर केवल जल वायु सेवन से चंगेभले होजाते हैं। तपेदिक के बीमारों के लिए धर्मपुर आदि स्थानों में हस्पताल बने हैं। यहाँ बहुत खानें हैं जिनमें से अमूल्य खनिजपदार्थ निकाले जाते हैं। अभीतक इस ओर किसी का ध्यान नहीं पड़ा, परन्तु विज्ञानवेत्ताओं का विचार है कि हिमालय जितना बरफ का घर है उतना खनिज पदार्थों का भी है। अनेक साधु महात्मा गहरी कन्दिरा और घने जङ्गलों में जाकर परमात्म-भजन में आयु बिता देते हैं। भारतवर्ष की वर्षा बहुधा इससे प्रभावित होती है। जो जलपूर्ण वायु हिन्द महासागर से उठकर इससे टकराता है वह ठण्डा होकर वर्षारूप में बदल जाता है। यह भारत के उत्तर की ओर एक ऐसी दृढ़ परिधि का काम देता है जिसको कोई शत्रु भी पार नहीं कर सकता। इसी पर भारत और तिब्बत की सीमा मिलती है।

हिमालय हिन्दुओं के मुख्य मुख्य तीर्थस्थानों का घर है। प्रतिवर्ष केदारनाथ, बद्रीनाथ, अमरनाथ आदि की यात्रा के लिए हज़ारों यात्री जाते रहते हैं।

प्रश्न

ज्वालामुखी और जेल्हम नदी पर प्रस्ताव लिखो।

ऐतिहासिक इमारत

ताजमहल

शीर्षक

भूमिका—जगद्विख्यात, समाधि स्थान, आगरे में यमुना के तट पर।

कारण, निर्माण काल और समय—१६३१–१६४८ तक १७ वर्षों में बना, २०००० मनुष्य प्रतिदिन काम करते थे, शाहजहाँ का अपनी बेगम से प्रतिज्ञा का परिणाम।

दृश्य—बाहर से किले की तरह चारों ओर बड़ी बड़ी दीवारें, सर्वतः सुन्दर उद्यान, चार कोनों पर लाल पत्थर के मीनार, संगमरमर का चबूतरा, बहुमूल्य पत्थरों के बेल बूटे, चान्दनी रात में नदी का दृश्य, कारीगरों की खूबी, आजकल के और पुराने कारीगरों की तुलना।

उपसंहार—दुनिया को विस्मयजनक, भारत की नामवरी।

प्रस्ताव

ताजमहल को कौन नहीं जानता ? संसार भर में इस की प्रसिद्धि हो चुकी है। यह सम्राट शाहजहाँ की बेगम मुमताज़महल का स्मारक समाधि-मन्दिर है। यह आगरे के मैदान में यमुना के तट पर खड़ा है।

भूमिका

कहते हैं कि एक दिन मुमताज़ महल ने अपने स्वामी शाहजहाँ से पूछा 'क्या आप मुझे मेरे मरने के बाद भी याद रखेंगे ?' शाहजहाँ ने उत्तर दिया—केवल मैं ही न भूलूँगा किन्तु आप को संसार में चिरस्मरणीय बना दूँगा।' ताजमहल शाहजहाँ की उस प्रतिज्ञा का परिणाम है। मन्दिर के भीतर मुमताज़ बेगम की कब्र है और ऊपर महल है, इसलिए इसे ताजमहल कहते हैं।

निर्माण काल और समय

यह १६३१ से लेकर १६४८ तक बराबर १७ वर्ष बनता रहा। इस के बनने में प्रतिदिन लगभग २०००० मज़दूर और असंख्य कारीगर काम करते रहे। इस पर तीस लाख रुपये लागत आई है। आज कल पहले तो ऐसा भवन बनना ही असम्भव है किन्तु यदि बन भी जाय तो लागत लाखों के स्थान में करोड़ों की हो।

बाहर से जाते ही दूर से चारों तरफ की ऊँची २ दीवारें देखकर यह जान पड़ता है कि कोई मुगलिया किला खड़ा है। परन्तु पास पहुँचते ही इसका रंग ही बदल जाता है। महल के चारों तरफ बड़ा सुन्दर उद्यान है। इसमें सरू वृक्षों की सजावट और इधर की हरियावल ऐसी रम्य है कि देखते ही मन लट्टू हो जाता है। सड़कों के दोनों तरफ हरे वृक्षों की श्रेणियाँ देख कर मन में यही जान पड़ता है मानों सड़क के दोनों ओर सुन्दर वस्त्र पहिने मुग़लिया राज्य के सिपाही खड़े हैं। आगे बढ़ कर १८६ वर्ग फीट एक संगमरमर का चबूतरा दिखाई देगा, वहाँ बैठ कर उद्यान की छबि निहारते ही कोसों की थकावट दूर भाग जाती है। चार कोनों पर चार मीनार हैं। उन पर चढ़ कर ताजमहल का दृश्य नये ढङ्ग का ही दिखाई देता है। ताज की दीवारों के साथ टकराती हुई यमुना बह रही है। चाँदनी रात में यमुना के जल में

दृश्य

ताज के प्रतिबिम्ब को देख मन में जो शान्ति-प्रवाह बहने लगता है उसे वर्णन नहीं किया जा सकता। ताज के भीतर का दृश्य तो कुछ औरही अनोखा है। संगमरमर की सफेद दीवारों पर रंग २ के बहु-मूल्य पत्थरों के बेलबूटे ऐसे काटे हुए हैं कि कभी २ मनुष्य भूलकर उन्हें सच्चा उद्यान समझ बैठता है। इन्हें देखते २ मन नहीं भरता। और चाहे कुछ भी हो, परन्तु इसे देख एक भाव उठे बिना नहीं रहता। जिन कारीगरों ने इसे बनाया है उनकी प्रशंसा करते जिह्वा नहीं थकती, और अपने आप आज कल के कारीगरों से उनकी तुलना हो जाती है। ताज को बने सैकड़ों वर्ष हो गये हैं किन्तु इसकी सुन्दरता और दृढ़ता में थोड़ी कमी भी नहीं आई। जहाँ कहीं पर बीच २ में इसकी मरम्मत हुई है वहाँ कहे बिना ही आज कल के कारीगरों की पुरातन कारीगरों से निकृष्टता सिद्ध हो जाती है।

यूरोपीय संसार में दुनिया के सात चमत्कार कहे गये हैं। किन्तु ताजमहल को आठवाँ चमत्कार कहना कोई अत्युक्ति न होगा।

उपसंहार

ताजमहल आदि कतिपय चमत्कारिक वस्तुओं के कारण ही भारत का मस्तक संसार की सभ्य जातियों में ऊँचा हो रहा है।

प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में एतद्देशीय व अन्यदेशीय यात्री इसे देखने को आते हैं और प्रत्येक अपने २ भावों के अनुकूल यहाँ से शिक्षा ले जाते हैं। कुछ तो इसे देख संसार की क्षणभङ्गुरता पर विश्वस्त हो जाते हैं, कई कह बैठते हैं कि मानुषिक शक्ति के सामने कुछ भी असाध्य नहीं। अनेकों के मनों में इसे देख शान्ति समा जाती है, इसकी छटा को देख सौन्दर्य्योपासक कवि की कल्पना गगनचुम्बी भावों से विताड़ित एवम् निनादित होती होगी। वही इसकी सर्वाङ्ग सुन्दरता के वर्णन में सफलता लाभ कर सकता है, साधारण मनुष्य नहीं।

अशोक स्तम्भ

भूमिका—अशोक प्रायः स्तूप बनवाकर उन पर अनुशासन लिखवाता था। यह उसी प्रकार का स्तम्भ। प्रथम अम्बाला ज़िले में शिवालक पर्वत के पास तोपहर गाँव में स्थापित। फिर फीरोज़ाबाद में लाकर कोटला दुर्ग में स्थापित।

आयतन—गोलाई नीचे ९$\frac{३}{४}$ और चोटी पर ६$\frac{१}{२}$ फीट। नीचे से खोखला।

दिल्ली कैसे लाया गया—पहले रूई के ढेर लगवा कर उन पर इसे गिराया कि टूट न जाय। फिर कोई १० हज़ार आदमियों की सहायता से ४२ पहियों वाली गाड़ी में रख कर यमुना नदी में बड़ी २ नावों पर लदवाया। इस प्रकार कोटले में आगया।

ऐतिहासिक सम्बन्ध—इस पर ईसा के ३०० वर्ष पहले के ४ अनुशासन खुदे हुए हैं। विशालदेव चौहान के १२०८ के दो लेख। इस पर चढ़कर आस पास के खंडहरों का मनोहर दृश्य दिखाई देता है।

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो—

दरबार साहिब, लाहौर का दुर्ग।

कोयला

भूमिका—दहनशील खानिज पदार्थ, वर्ण, बनस्पति से प्राप्य।

उत्पत्ति—मतभेद, नदी के किनारे वा जलयुक्त भूमि के जंगल पानी में डूब गये और उस स्थान पर नये जंगल बन गये, इस प्रकार पुनः जंगल डूब कर उन का काले रंग का ठोस पदार्थ बन गया, उसे कोयला कहते हैं।

भेद—अनेक भेद, लकड़ी का कोयला, पत्थरी कोयला, कैण्डल कोल इत्यादि।

कैसे निकाला जाता है—भूमि में गढ़ा खोद कर निकालनेवाले मजदूर नीचे उतर कर इसे निकाल लाते हैं। अनेकों के जीवन नष्ट होते हैं।

मुख्य उत्पत्तिस्थान—ग्रेट ब्रिटन, यूनाइटेड स्टेटस्, जर्मनी, एशिया, फ्रांस, चाइना, हिन्दोस्तान।

लाभ—घरों में रसोई बनाना, धातु पिघलाना, गैस और कोलतार निकालना, इञ्जिन, कलें चलाना। कोलतार से अनेक वाणिज्य के पदार्थ निकलते हैं।

उपसंहार—मनुष्य के बड़े उपकार की वस्तु, इसके लिये अनेक युद्ध, वाणिज्य इस पर निर्भर, कोल स्ट्राइक।

प्रस्ताव

भूमिका

कोयला उन खानिज पदार्थों में से है जो दहनशील होते हैं। इसका वर्ण काला होता है। खोज करने से मालूम हुआ है कि यह बनस्पति से बनता है।

उत्पत्ति

इसकी उत्पत्ति के विषय में अनेक मत हैं, किन्तु आजकल यह मत प्रामाणिक माना गया है कि नदी के किनारे के जङ्गल यदि पानीमें डूब जायँ तो उनके ऊपर दूसरे जङ्गल खड़े हो जाते हैं। कालान्तर में उसी तरह यह जङ्गल भी पानी में डूब जाते हैं। इस प्रकार पुनः २ नीचे की लकड़ी ऊपर के जङ्गलों की लकड़ी के दबे रहने से एक काले रंग का ठोस पदार्थ बन जाता है, इसे कोयला कहते हैं।

भेद

इसके कई भेद हैं। सबसे प्रसिद्ध लकड़ी का कोयला और पत्थरी कोयला होते हैं। लैङ्काशायर में कैण्डल कोयला बड़ा प्रसिद्ध है। इसे कैण्डल कोयला इस लिए कहते

हैं कि जब यह जलता है तो इसकी ज्वाला कैंडिल (मोमबत्ती) की तरह प्रकाश करती है।

जहाँ इसके मिलने के कोई चिन्ह मालूम होते हैं वहाँ पर गढ़े खोदकर मजदूरों को नीचे उतारा जाता है। मज-

कैसे निकाला जाता है

दूर कोयले को काट काट कर वाहर लाते हैं। कोयले की खानों में असंख्य लोगों की जानें जाती हैं, क्योंकि दीपक लेजाकर थोड़ीसी असावधानता हुई नहीं और खान में आग लगी नहीं। आजकल तो कई तरह के रक्षा-दीपक (Safety Lamps) बन गए हैं जिनसे खानों में प्रकाश होते भी आग नहीं लगती।

ग्रेट ब्रिटन, संयुक्तराज, जर्मनी, फ्रांस, एशिया और चीन देशों

प्राप्ति के मुख्य स्थान

में कोयला बहुत होता है। हिन्दुस्तान में भी कोयला होता है। बंगाल का कोयला सब में प्रसिद्ध है।

इससे मनुष्य के कई काम सुधरते हैं। घरों में यह लकड़ी के स्थान उपयुक्त होता है। लोहा, सोना आदि बड़े २

लाभ

कड़े धातु कोयले की भट्टी में पिघलाये जाते हैं। कोयले से गैस बनती है जिसका बड़ा तीखा प्रकाश होता है। इससे कोलतार भी निकाला जाता है, जिसमें अनेकों व्यवसाय के पदार्थ भरे पड़े हैं। रेल के इञ्जिन, मशीनों की कलें कोयले से ही चलती हैं।

कोयला मनुष्य के बड़े उपकार की चीज़ है। जब से इसकी उपयोगिता मालूम हुई है तभी से यह जगत् में

उपसंहार

बड़ी अशान्ति का कारण हो गया है। इसी के लिए राष्ट्रों में परस्पर युद्ध छिड़ जाते हैं। जिसके पास बहुत कोयला होता है वही राष्ट्र अपने को दूसरों से बड़ा

समझता है क्योंकि इसी पर वाणिज्य व्यवसाय का निर्भर है। इसी से कोयला निकालने वाले मजदूरों की भी बहुत बढ़ती हो रही है। जब कभी यह लोग स्ट्राइक कर दें तो देश के सभी व्यवसाय बन्द हो जाते हैं।

लोहा

भूमिका—सब से अधिक उपयोगी, बहुत भारी, धूसर वर्ण का।

प्राप्तिस्थान—खानों में अन्य पदार्थों से मिश्रित कच्चा लोहा (ore), आग में शुद्धि। इङ्गलैण्ड, फ्रांस, स्वीडन, अमेरिका में बहुत खानें, विहार प्रदेश में बहुत खानें।

प्रकार—तीन प्रकार, गलाया हुआ, पीटा हुआ और इस्पात। प्रत्येक प्रकार के बनाने की विधि और उसका उपयोग।

उपयोगिता—शस्त्र, खेती की कलें, मशीनें इसी से बनती हैं। लोहा और सभ्यता, रासायनिक प्रयोग।

उपसंहार—भारत में प्राचीनकाल से प्रयोग, युरोप में इसके कारखाने, भारत में ताता कम्पनी का काम।

सुवर्ण

भूमिका—सर्वोत्तम व बहुमूल्य खनिज धातु।

आकार, वर्ण—ठोस परन्तु गलाने से द्रव, रंग-पीला उज्ज्वल।

प्राप्ति-स्थान—खानों में और नदियों के तटों पर, अफ्रीका, कोलम्बिया, अस्ट्रिया, ब्राजिल, भारत आदि देशों में बहुधा प्राप्त।

उपकार—भूषणों में प्रयुक्त, सोने का सिक्का, औषध।

उपसंहार—विशुद्धि के लिए प्रसिद्ध, लोग इसकी प्राप्ति के लिए उत्सुक।

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो—

लवण, चांदी, हीरा।

नैसर्गिक वस्तु

ग्रहण

भूमिका—ग्रहण—संस्कृत शब्द, अर्थ-पकड़ना, पौराणिक मत—राहु तथा केतु का चन्द्र सूर्य पर आक्रमण, हिन्दुओं का दान, तीर्थ यात्रा।

वैज्ञानिक मत—सूर्य तथा पृथ्वी के मध्य में चन्द्र आजाने से सूर्य-ग्रहण, चन्द्र तथा सूर्य के मध्य में पृथ्वी आजाने से चन्द्रग्रहण।

सूर्य ग्रहण के भेद—पूर्ण ग्रहण, अपूर्ण ग्रहण, मंडलाकार ग्रहण।

चन्द्र ग्रहण के भेद—पूर्ण, अपूर्ण।

प्रस्ताव

भूमिका

'ग्रहण' संस्कृत शब्द है। इसका अर्थ पकड़ना है। पुराणों में आता है कि राहु, केतु और सूर्य्य तथा चन्द्र में किसी कारण वैर हो गया। अतः जब कभी सूर्य्य वा चन्द्र इनके सामने आजाता है तो वे झट इसे ग्रस लेते हैं। चन्द्र के आक्रान्त होने पर चन्द्रग्रहण और सूर्य्य के आक्रान्त होने पर सूर्य्यग्रहण होता है। ग्रहण के अवसर पर हिन्दू लोग लाखों रुपये दान कर देते हैं। हरिद्वार, प्रयाग आदि तीर्थों पर स्नान के लिए लाखों की भीड़ जमा होती है। सूर्य्यग्रहण के समय कुरु-क्षेत्र में लाखों मनुष्य इकट्ठे होते हैं।

वैज्ञानिकमत

पृथ्वी और चन्द्रमा को सूर्य्य से प्रकाश मिलता है। पृथ्वी एक वर्ष में सूर्य्य की परिक्रमा करती है, और चन्द्रमा अठाईस दिनों में पृथ्वी के गिरद घूम जाता है।

जब चन्द्रमा सूर्य्य और पृथ्वी के बीच में आजाता है तो सूर्य्य का प्रकाश पृथ्वी पर न पड़ कर बीच में ही रुक जाता है और पृथ्वी पर उसकी छाया पड़ने लगती है। इसे सूर्य्य ग्रहण कहते हैं। यह अमावस्या के दिन होता है।

जब पृथ्वी सूर्य्य और चन्द्र के मध्य में आजाती है तो सूर्य्य का प्रकाश चन्द्र पर नहीं पड़ सकता, इसे बीच में ही पृथ्वी रोक देती है। इसे चन्द्र ग्रहण कहते हैं। यह पूर्णिमा की रात्रि को होता है।

सूर्य्य तथा चन्द्र से अतिरिक्त अन्य तारागण का भी ग्रहण होता है किन्तु उनका हमारे जीवन से कोई सम्बन्ध न होने के कारण उनका ज्ञान किसी को नहीं।

सूर्य ग्रहण के बाद

जब चन्द्र का पूर्ण बिम्ब सूर्य्य के सामने आ जाता है तो पूर्ण सूर्य्य ग्रहण होता है। जब चन्द्र के एक भाग की छाया सूर्य्य पर पड़ती है तो अपूर्ण ग्रहण होता है। इसके अतिरिक्त मण्डलाकार सूर्य्य ग्रहण तब होता है, जब चन्द्रमा का पूर्ण बिम्ब सूर्य्य के सामने आ जाता है, किन्तु उसके सूर्य्य के गोल से छोटा होने के कारण सूर्य्य के गिरद एक मण्डलाकार प्रकाश का चक्र रह जाता है।

चन्द्र ग्रहण के भेद

चन्द्रग्रहण या तो पूर्ण होता है या अपूर्ण किन्तु मण्डलाकार कभी नहीं होता।

सूर्य, चन्द्र, धूमकेतु, तारागण

भूमिका

रात्रि, विशेष कर कृष्णपक्ष की रात्रि में, यदि हम गृह की छत पर बैठ कर आकाश की ओर देखें तो वहाँ हजारों नहीं लाखों की संख्या में छोटे बड़े चमकते हुए गोलाकार पदार्थ पायेंगे। आकाश उस समय ऐसा प्रतीत है मानों पृथ्वी के ऊपर चमकीले बेलबूटों से सजा

हुआ एक वितान तना हुआ है, ये तारे हैं। शुक्ल पक्ष की रात्रियों में जो एक गोलाकार बड़ा सा पिण्ड दिखाई देता है और जिस से रात्रि में शीत प्रभा निकल कर लोगों को आनन्दित करती है वह चन्द्र है। जो तेजःपिण्ड दिन के समय सभी भूमण्डल को प्रकाशित करता है वह सूर्य्य है। वैज्ञानिकों ने खोज से पता लगाया है कि सभी ग्रह उपग्रह पहले पहल तेजःपुञ्ज थे। क्रमशः सभी से प्रकाश निकलता गया। अब सूर्य्यलोक के अतिरिक्त और सभी लोकों से प्रकाश निकल जाने से वे ठण्डे होगये हैं, और उनमें जो प्रकाश दीखता है वह सूर्य्य का ही दिया हुआ है। कई चन्द्र आदि लोक इतने ठण्डे होगये हैं कि उन में कोई जीव नहीं रह सकता। हमारी पृथ्वी अभी इतनी ठण्डी नहीं हुई, इसलिए इसमें प्राणी रह सकते हैं।

मिथ्या विश्वास

इन सब सूर्य्यादि ग्रह उपग्रहों को देखकर हमारा विश्वास हो जाता है कि पृथ्वी सबसे बड़ी है और चन्द्रादि ग्रह सबसे छोटे हैं। यह भूल है। वस्तुतः इन ग्रहों में लाखों ग्रह पृथ्वी से कई गुणा बड़े हैं और अधिक अन्तर के कारण छोटे मालूम होते हैं। सूर्य्य को ही लीजिये। इस का प्रकाश पृथ्वी पर ८½ मिनट में पहुँचता है। प्रकाश की गति ९३००० कोस प्रति सैकण्ड है। अतः वह पृथ्वी से ४ करोड़ ६५ लाख कोस दूर हुआ। इसके अतिरिक्त कई सूर्य्य से भी बड़े ग्रह हैं, जो पृथ्वी पर से नजर नहीं आते। अतः उनका अन्तर सूर्य्य से भी कहीं बढ़कर है। इसी प्रकार वैज्ञानिकों ने चन्द्र को पृथ्वी से दो सौ चौवालीस हज़ार मील की दूरी पर ठहराया है।

सूर्य्य

सूर्य एक तेजःपिण्ड तारा है। इसीसे सभी को प्रकाश मिलता है। इसमें इतना तेज है कि वहाँ पर सभी पदार्थ द्रवरूप में हैं। जब इतने करोड़ कोसों की दूरी पर

बैठे यहाँ के लोग सूर्य्य की प्रखर किरणों से व्याकुल हो जाते हैं, तो इसका स्वयं अन्दाज़ा लगा लें कि वहाँ कितना प्रकाश होगा। हम लोगों को तो देखने में यह मालूम होता है कि सूर्य्य पूर्व से पश्चिम की ओर अस्त होता है, किन्तु यह भ्रम है। वास्तव में सूर्य्य स्थिर है और पृथ्वी सूर्य्य के गिरद घूमती है। यह अपनी धुरी पर चौबीस घण्टों में घूम जाती है, जो भाग सूर्य्य के सामने रहता है वहाँ दिन रहता है और दूसरे भाग में रात्रि रहती है। इस प्रकार चौबीस घण्टों में दिन रात होजाती है। ३६५¼ दिन में पृथ्वी सभी सूर्य्यमण्डल के गिरद घूम जाती है। यह वर्ष होता है। सूर्य्य की थोड़ी बहुत गर्मी के लिहाज़ से वर्ष में भिन्न२ ऋतु बदलते रहते हैं। जब पृथ्वी और सूर्य्य के मध्य में चन्द्र आ जाय तो चन्द्रग्रहण होता है।

चन्द्र

चन्द्र भी सूर्य्य की तरह पहले तेजः-पिण्ड था, परन्तु इससे प्रकाश निकल जाने से वह ठण्डा होगया है। इस में जो प्रकाश दीखता है वह सूर्य्य का दिया हुआ है। यदि कभी तीव्र दृष्टि से देखा होगा तो इसमें काले २ धब्बे मालूम पड़े होंगे। पुराणों में लिखा है कि यह कश्यप ऋषि की स्त्री अहल्या के साथ दुराचार का फल है। किन्तु वैज्ञानिकों ने यह ठहराया है कि ये चन्द्रलोक के उत्तर और पश्चिम में पर्वतों की रेखायें हैं जो भूमि से नज़र आती हैं। पहले पहल चन्द्र लोक में भी भूलोक की तरह प्राणी निवास करते थे, किन्तु अब नहीं।

जैसे पृथ्वी सूर्य्य के गिरद घूमती है वैसे चन्द्र भी पृथ्वी के गिरद २७½ दिन में घूम जाता है। उस अन्तर में जिस भाग में सूर्य्य का प्रकाश नहीं पड़ता वहाँ अन्धकार रहता है। वह कृष्ण पक्ष होता है। इससे अतिरिक्त शुक्लपक्ष होता है। इस तरह घूमते घूमते जब पृथ्वी सूर्य्य और चन्द्र के बीच में आजाती है तो चन्द्र ग्रहण होजाता है।

पुच्छलतारे धूमकेतु कहलाते हैं। यह अनेक प्रकार के होते हैं।

धूमकेतु

किसी की एक, किसी की दो और किसी की दो से भी अधिक पुच्छें होती हैं। लोगों का यह विश्वास है कि इनका आकाश में दिखाई देना अनिष्ट-सूचक है किन्तु वैज्ञानिक लोग इस विश्वास की पुष्टि नहीं करते। जहाँ पहले कभी वर्षों के बाद एक केतु दृष्टिगोचर होता था वहाँ आजकल दूरवीक्षण आदि यन्त्रों की सहायता से अनेकों धूमकेतु प्रतिवर्ष आकाशमण्डल पर दौरा लगाते दीख पड़ते हैं।

तारागण

सूर्य्य तथा चन्द्र के अतिरिक्त लाखों ग्रह, उपग्रह हैं जिन्हें तारे कहते हैं। यह सूर्य्य के प्रकाश से प्रकाशित हैं। इनमें कई छोटे और कई सूर्य्य से भी बड़े और प्रकाशमान हैं किन्तु वे इतने दूर हैं कि उनका प्रकाश अभी तक भूमण्डल पर नहीं पहुँचा। इनमें बुध, शुक्र, पृथ्वी, बृहस्पति, शनैश्चर, युरेनस, नेपचून—यह मुख्य हैं। इनकी गति कम ज्यादा है। कई तारे आपस में इतने नज़दीक हैं कि उनका नाम एक साथ लिया जाता है। जैसे सप्तर्षि—आदि।

उपसंहार

जितना इस विषय की ओर ध्यान दें और इस पर चिन्तन करें उतना ही परमात्मा की महत्ता पर विश्वास दृढ़ होजाता है। लाखों ग्रह, उपग्रह एक एक सैकण्ड में लाखों मील की यात्रा करलें और कहीं पर थोड़ा भी विघ्न न हो यह ईश्वरीय शक्ति के सिवा किसका काम है?

इन्द्र-धनुष

भूमिका—बरसात में जिस ओर सूर्य बादलों में छिपा हो उसके सामने की ओर अनेक रंगों का धनुष के सामन अर्द्ध गोलाकार।

उत्पत्ति—सूर्य्य की किरणों में सात रंग, इन्हीं के बादलों पर पड़ने पर सूर्य्य के सामनेवाली दिशा में इन्द्र-धनुष बनना।

शोभा—मोर पंख के समान। संस्कृत कवियों द्वारा इसका वर्णन।

शुभाशुभ का फल—पश्चिम में हो तो बहुत वर्षा का सूचक, और पूर्व में हो तो वर्षा का अभाव।

भूकम्प

भूमिका—भूकम्प का अर्थ पृथ्वी का हिलना। पृथ्वी के सभी भागों में होता है। विशेषतः उन स्थानों में अधिकतर जहाँ ज्वालामुखी पहाड़ समीप हों।

कारण—पृथ्वी के भीतर अग्नि के ताप से भूमि के फट जाने से उसमें से द्रवीभूत पदार्थों का निकलना। तोपों का सा शब्द।

परिणाम—शहरों के शहर नष्ट हो जाना, हज़ारों की मृत्यु।

उदाहरण—कांगड़े के भूचाल का दृश्य। इसी कारण जापान में लकड़ी के गृह।

उपकार—पृथ्वी के भीतर से नये २ खानिज धातु तथा द्रव्यों का भूमि पर आजाना। लाभों की अपेक्षा हानि अधिक।

उपसंहार—पौराणिक मत में पृथ्वी शेषनाग के सिर पर खड़ी है। भूमि पर अधिक पापों के बोझ से शेष का सिर हिलने से भूकम्प होना।

प्रश्न

इनके शीर्षक बनाकर प्रस्ताव लिखो—

विद्युत्, तड़ित्, उल्कापात।

मेला-उत्सव-त्यौहार

विजया दशमी (दशहरा)

भूमिका—हिन्दू उत्सव, आश्विन की शुक्ला दशमी।

ऐतिहासिक सम्बंध—इस दिन रामचन्द्र ने रावण का बध किया था।

उत्सव-वर्णन—भारतवर्ष के प्रत्येक भाग में मनाया जाता है। विजया-दशमी से एक सप्ताह पहले से रामलीला। रामायण का पाठ, दशमी के दिन रावण कुम्भकर्ण की कागज़ी प्रतिमा को जलाना। लोगों की भीड़। बंगाल में दुर्गा पूजा।

उपकार—वीर-स्मृति। आचारण-शुद्धि। पुरातन काल से सम्बन्ध। रामादि के जीवनों से शिक्षा। बड़े २ मंगलमय कार्यारम्भ। दूर दूर से लोगों का परस्पर मिलाप। व्यापार-वृद्धि।

अपकार—लोगों का मद्यसेवन।

उपसंहार—इसकी त्रुटिओं को दूर कर मनाया जाना चाहिये, रामादि के जीवनों पर व्याख्यान होने चाहिएँ, लोगों का इकट्ठे होकर सामाजिक और राजनैतिक विचार, स्वदेशी वस्तुओं की प्रदर्शिनी।

प्रस्ताव

भूमिका

विजयादशमी हिन्दुओं का बड़ा पवित्र त्यौहार है। इसे विजया दशमी इसलिए कहते हैं कि सहस्रों वर्ष पूर्व मर्य्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी ने इस दिन रावण पर विजय प्राप्त की थी। यह आश्विन शुक्ला दशमी के दिन बड़े समारोह के साथ मनाया जाता है।

ऐतिहासिक सम्बन्ध

कौन हिन्दू होगा जिसे रामचन्द्र के नाम और उसके जीवन से परिचय न हो? उनका नाम भारतवर्ष के प्रत्येक नर नारी के जिह्वाग्र पर बसा हुआ है। कैकेयी के अनुरोध पर जब श्रीराम अयोध्या से निकल कर बनों में रहने लगे तो सूर्पणखा के कहने पर रावण इनकी पत्नी सीता को चुरा कर लङ्का ले गया। रामचन्द्र और उन का भाई लक्ष्मण समुद्र पर पुल बंधवाकर लङ्का में पहुँचे और उन्होंने युद्ध में रावण के सभी पुत्र पौत्र, भाई बन्धुओं का नाश कर आश्विन शुक्ला दशमी को रावण का भी बध कर दिया। इसी विजय के उपलक्ष्य में यह उत्सव किया जाता है।

उत्सव का वर्णन

भारत का कोई भाग न होगा जहाँ पर किसी न किसी रूप में यह त्यौहार न मनाया जाता हो। विजयादशमी से एक सप्ताह पूर्व ही बड़े २ शहरों में रामलीला शुरू हो जाती है। कई स्थानों में तो एक महीना पहिले ही से रामलीला होने लग जाती है। बनारस के पार रामनगर में यह लीला बड़े समारोह से की जाती है। वहाँ के राजा ने इसके लिए बड़ा २ सामान बनवा रखा है। इस अवसर पर उसके हज़ारों रुपये खर्च हो जाते हैं। जब दशमी का दिन आता है तो उस दिन रावण और कुम्भकर्ण की ऊँचे २ बांस और रंगीन काग़जों की प्रतिमा बनाकर उनको जलाया जाता है। इस मेले पर इधर उधर के गाँवों से आकर हज़ारों लोग इकट्ठे होते हैं और आनन्द उत्सव मनाते हैं। बंगाल में यह उत्सव दुर्गा-पूजा के रूप में मनाया जाता है, क्योंकि रामचन्द्र ने विजय यात्रा से पूर्व दुर्गा-पूजन किया था। कतिपय स्थानों में प्रतिपदा से दशमी तक रामायण का पाठ होता है। राजपूताने के वीर राजपूत इस दिन भैंसे का बध करते हैं।

जिस देश के लोग अपने वीरों का आदर नहीं करते वा उनकी स्मृति में उत्सव नहीं करते उससे बढ़कर कोई

उपकार

कृतघ्न नहीं। इस उत्सव को मनाकर हिन्दुओं ने अपने को उस अधम पाप से विमुक्त किया है। इस उत्सव से लोगों के आचरण पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। रामचन्द्र की पितृभक्ति देखकर किसका हृदय उसका अनुकरण करने को नहीं उत्सुक होता? सीता ने स्वजीवन से नारीसमुदाय के सामने पतिव्रतधर्म का कितना महान् आदर्श रख दिया है। भरत की न्यायपरता और लक्ष्मण की भ्रातृभक्ति किसे नहीं लालायित करतीं? राम की वीरता स्मरण कर मरे हुओं के दिलों में भी कितनी शक्ति भर जाती है!

सीता का धैर्य्य, हनूमान की स्वामिभक्ति और अन्य वीरों की कार्य-परता और वीरता देखकर कौन नहीं चाहता कि भारत में उन जैसे वीर लोगों का पुनः प्रादुर्भाव हो? इसी त्यौहार के कारण भारत के आर्य्य लोगों का अपने उन पूर्वजों से सम्बन्ध बना हुआ है जिन्हें हुए हज़ारों शताब्दियाँ गुज़र गई हैं।

यह दिन इतना मङ्गलमय समझा गया है कि जब किसी को कोई मङ्गल कार्य्य करना होता है तो वह बिना सोचे विचारे उसे इस दिन कर लेता है। लोगों का दूर २ से एकत्रित होकर परस्पर परिचय और लाखों रुपयों का व्यापार होजाता है।

ऐसे मेलों पर लोग, प्रायः ग्रामीण लोग, मद्यसेवन करते हैं।

अपकार

हज़ारों रुपयों की शराब बिक जाती है।

हिन्दुओं के पास यह एक बड़ा विचित्र त्यौहार है। यदि इसमें परिष्कार कर दिया जाय तो यह देशोन्नति का एक

उपसंहार

बड़ा साधन हो सकता है। इन दिनों रामादि के जीवनों पर ऐसे व्याख्यान होने चाहिएँ जिनसे लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़े। आर्य्यसमाज-आदि कतिपय संस्थाओं

की इस तरफ प्रवृत्ति हो भी गई है। ऐसे ही मेलों पर एकत्रित लोगों के सम्मेलन होकर उनमें सामाजिक और राजनैतिक सुधार के विचार हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त स्वदेशी वस्तुओं की प्रदर्शनियों के द्वारा लोगों में स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार किया जा सकता है।

दिवाली

भूमिका—हिन्दुओं का त्यौहार। संस्कृत शब्द-दीपावली, अर्थ-दीपक श्रेणी। कार्तिक में अमावस्या के दिन दीप जलाना।

ऐतिहासिक सम्बन्ध—रामचन्द्र का बन से लौटकर अयोध्या-प्रवेश।

विधि—गृहों की सफाई, दीप जलाना, लक्ष्मी पूजा।

उपकार—घरों की सफाई, रोगजनक कीड़ों का नाश।

अपकार—द्यूत खेलना।

उपसंहार—व्यापारियों की वर्ष समाप्ति, साल भर के हानि लाभ का विचार।

मुहर्रम

भूमिका—मुसलमानों का सबसे बड़ा त्यौहार। चन्द्र गणना के अनुसार तिथि, इसलिये नियत नहीं।

ऐतिहासिक सम्बन्ध—मुहम्मद साहब की एक ही कन्या के पति हज़रत अली खलीफा हुए। तदन्तर उसके दो बेटे हसन और हुसेन। हसन की विष प्रयोग से हत्या। हुसेन का करबला के मैदान में बध। उसके उपलक्ष्य में मुहर्रम उत्सव।

विधि—मुहर्रम मास के शुक्लपक्ष की द्वितीया से लेकर दस दिन शीया मुसलमानों में शोक। रोना पीटना, मरसीहे पढ़ना, ताजिये बना कर घुमाना, अन्तिम दिन घोड़ा। ताजिया और घोड़े का करबला में ले जाना।

उपसंहार—दंगा फसाद, हिन्दुओं का इसमें भाग, हिन्दू मुसलमानों का परस्पर प्रेम। अरबी लोग इसे पवित्र मानकर खुशियाँ मनाते थे। पर अब शोक का मास। सुन्नी लोग इस प्रकार मनाना धर्म विरुद्ध मानते हैं।

रक्षाबन्धन (श्रावणी)

भूमिका—श्रावण मास की अन्तिम तिथि श्रावणी। हिन्दुओं का बड़ा पवित्र त्यौहार।

इतिहास—प्राचीन समय में ऋषि लोगों का यज्ञ, उसमें राजा, महाराजाओं की उपस्थिति। वैदिक मन्त्रों से यज्ञोपवीत, यज्ञदीक्षा में लाल कङ्कण बांधना। फिर परिवर्तन से बहिनें अपने भाइयों को कङ्कण बांधने लगीं। मध्यकाल में राखी बांधकर अपना भाई बनाना, मुसलमानों के राज्य काल में जब कभी कोई बलवान पुरुष किसी असमर्थ अबला पर अत्याचार करना चाहता तो वह झट किसी बलवान राजा को राखी भेज देती और वह उसे बहिन समझकर उसकी रक्षा करता। उदाहरण—करुणावती का बहादुरशाह से डर कर हुमायूँ को राखी भेजना।

उपसंहार—ईश्वर करे हिन्दुओं के दिलों में इस त्यौहार को देखकर पुनः पुरानी प्रथा का प्रचार हो।

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो—

होली, रामनवमी, वसन्त पञ्चमी।

खेल

फुटबाल

भूमिका—अंग्रेज़ों का खेल, हिन्दुस्थान में इसका बहुत प्रचार।

सामग्री—खुला मैदान, एक फुटबाल, दोनों ओर ग्यारह २ खिलाड़ी, दोनों ओर गोल।

विधि—दोनों ओर के खेलाड़ी मैदान में, मध्य में खेल आरम्भ। प्रत्येक तरफ के खिलाड़ी दूसरों के गोल की ओर गेंद ले जाकर उनके गोल में से गेंद निकालना चाहते हैं। दूसरी पार्टी रोकती है। यदि गोल में से गेंद निकल जाय तो पराजय। एक मध्यस्थ।

लाभ—स्वास्थ्य, एकता, आधिपत्य में कार्य।

हानि—चोट, मृत्यु कभी २।

उपसंहार—अच्छा खेल, परन्तु अनुकरण से जातीय खेलों की अधोगति। स्कूल, कालिज, और सेनाओं में टूर्नामेंट।

प्रस्ताव

भूमिका

फुटबाल अंग्रेजी शब्द है। इसका अर्थ है पाँव से खेलने का गेंद। हिन्दी मे इसके लिए 'पाद-कन्दुक' शब्द घड़ लिया गया है। वास्तव में यह अंग्रेज़ों का खेल है किन्तु आज कल हिन्दुस्थान में इसका इतना प्रचार हो गया है कि क्या बूढ़ा क्या बच्चा सभी इसको जानते हैं।

सामग्री

इस खेल के लिए एक खुला और चौड़ा मैदान चाहिए। दोनों ओर के खिलड़ियों की कुल संख्या मिलकर बाईस होती है। एक चमड़े का बना हुआ फुटबाल होता है जिसके बीच में एक रबड़ का बना गेंद होता है उसे वायु से फुला दिया जाता है। इस कारण यह इतना हलका होता

है कि एक ठोकर से मैदान के दूसरे सिरे तक पहुँच जाता है। मैदान की चौड़ाई में दोनों तरफ मध्य में एक लम्बा चौड़ा दरवाजा सा बना रहता है जिसे गोल कहते हैं। खेल में एक मध्यस्थ होता है जो निरीक्षण करता रहता है।

जब खेल आरम्भ होने लगता है तो मध्यस्थ (अम्पायर) सीटी बजाता है और दोनों ओर के खिलाड़ी मैदान में आकर अपने २ स्थानों पर खड़े हो जाते हैं। सीटी की दूसरी आवाज़ पर खेल शुरू होजाता है। मैदान के मध्य में गेंद रखा होता है और एक ओर का खिलाड़ी उसे ठोकर लगा कर खेल शुरू कर देता है। एक ओर के सभी ग्यारहों खिलाड़ियों का यह कर्तव्य होता है कि दूसरी पार्टी के गोल में से गेंद निकालें और दूसरों का अपने गोल की रक्षा करना होता है। यदि गोल से गेंद निकल जाय तो गोलवाली पार्टी का पराजय हो जाता है। फिर पहले की तरह मध्य से खेल शुरू हो जाता है। जब तक नियत समय समाप्त न हो यह खेल होता रहता है और समय के अन्त में जिस पार्टी ने दूसरों के गोल में से अधिक संख्या में गेंद निकाल लिये हों उनकी विजय होती है। मध्यस्थ को खेल में बड़ी तीव्र दृष्टि रखनी पड़ती है।

विधि

यह बड़ा स्वास्थ्यकर खेल है। इससे शरीर बड़ा हृष्ट, पुष्ट और फुर्तीला रहता है और एकता में काम करने की शिक्षा मिलती है। दोनों ओर के खिलाड़ियों को अपने २ कप्तान (नायक) के अधिकार में रहना पड़ता है। इससे किसी के आधिपत्य में रह कर काम करने की आदत पड़ जाती है। जिस स्कूल, कालिज व अन्य संस्था की भेजी हुई टीम हो, उसकी प्रतिष्ठा की रक्षा उनका परम धर्म होता है। इस से स्वदेशाभिमान (Patriotism) की बड़ी शिक्षा मिल सकती है।

लाभ

खेल में कभी २ ऐसी बड़ी चोट लग जाती है कि पुरुष जीवन

हानि — पर्यन्त उस अंग को खो तक बैठता है। कई वार चोट से मृत्यु भी हो जाती है।

यह बड़ा अच्छा खेल है किन्तु भारत में इसके प्रवेश से जातीय खेलों को कोई पूछता तक नहीं। इसका

उपसंहार — इतना प्रचार है कि कोई स्कूल, कालिज व सेना-विभाग खाली नहीं जिस में यह खेला न जाता हो। प्रतिवर्ष बड़े २ टूर्नामेण्ट होते हैं जिन में हज़ारों की भीड़ जमा होकर इन्हें देखती है।

क्रिकेट का खेल

भूमिका—अंग्रेजों का खेल किन्तु भारत में भी बड़ा प्रचार।

सामग्री—खुला मैदान, छः विकट (किलियां), दो बैट (बल्ले), गेंद, दस्ताने, लैगार्ड, (जंघा-रक्षक,) २२ खिलाड़ी, २ मध्यस्थ।

विधि—खेल के आरम्भ में २२ गज के अन्तर पर विकट गाड़ते हैं। खेलने वालों में से दो खिलाड़ी बैट लेकर आते हैं। गेंद देने वाला एक ओर से गेंद फेंकता है, दूसरा बैट से प्रहार कर उसे दूर फेंक देता है। यदि गेंद किलियों को लग जाय तो वह आदमी चला जाता है और दूसरा आता है। फिर दूसरा बाल लेकर खेल करता है। इस प्रकार जब दस आदमी चले जायँ तो दूसरी पार्टी वार लेती है। जब गेंद देनेवाला गेंद फेंके और बैट वाला उस गेंद को बैट से दूर फेंकदे, तो दोनों ओर के बैट वाले दौड़ते हैं और गेंद आने से पहले जितनी वार एक दूसरे की विकटों तक पहुँचता है उतनी रनस् (दौड़ें) होती हैं। जिस पार्टी की रनस् अधिक हों वह विजय पाती है।

लाभ—स्वास्थ्य, पुष्टि, देखने और अंदाज़ करने की शक्ति। एकता, आधिपत्य में रहकर काम, देशभक्ति।

हानि—चोट-आदि ।

उपसंहार—धनियों का खेल, इस से देशी खेलों की अवनति । अन्त-र्जातीय क्रिकेट के मैच, टूर्नामेण्ट ।

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो ।

कबड्डी, आंखमिचौनी, हाकी ।

उद्भिद् विषयक

(वृक्ष, पौधे, लता, फूल आदि)

वट वृक्ष (The Banyan Tree)

भूमिका—एक विशाल वृक्ष, आकार बड़ा, पत्ते चौड़े ।

उत्पत्ति—बहुत छोटे बीज से इतना विशाल वृक्ष, शीघ्र बरोहें निकल पृथ्वी पर लग जाती हैं । प्रायः जहां कहीं इसका बीज और जल हो वहीं उगजाता है । कूए, मन्दिरों तथा सरोवरों के पास ।

आयु—दीर्घायु, कांड के सूख जाने पर बरोहों के सहारे हज़ारों वर्ष खड़े रहना । उदाहरण-प्रयाग का अक्षयवट और कलकत्ते के बोटानीकल गार्डन में बट वृक्ष ।

उपकार—छाया शीतकाल में गर्म और गर्मी में शीत, शाखाओं में पक्षिवास, लकड़ी बहुत काम की नहीं । घनी छाया के कारण पथिकों का आश्रय और ग्रामों की पंचायतें ।

प्रस्ताव

वट एक बड़ा विशाल वृक्ष है । इसी कारण इसे वृक्षराज भी कहा जाता है । भारतवर्ष में विशेषतः और अन्य देशों में सामान्यतः यह मिलता है । इस का आकार इतना बड़ा और फैला हुआ होता है कि

भूमिका

संसार भर में कोई वृक्ष इस की तुलना नहीं कर सकता। इस के पत्ते बड़े चौड़े होते हैं।

इसका बीज सरसों के दाने से भी छोटा रहता है। यह एक ईश्वरीय शक्ति की महिमा है कि इतने छोटे से बीज से इतने विशाल वृक्ष की उत्पत्ति हो जाती है। अन्य वृक्षों की अपेक्षा इस की वृद्धि जल्दी होती है। यह इतना ऊँचाई की ओर नहीं बढ़ता जितना फैलाव की ओर। ज्यों २ यह बड़ा होता है इसकी शाखाओं से बरोहें निकल कर नीचे भूमि पर लग जाती हैं, यहाँ तक कि कुछ काल बाद वे बड़े २ स्तम्भ दिखाई देने लगते हैं और इन्हीं के ऊपर इसकी लम्बी २ शाखायें आश्रित रहती हैं। इसकी शाखाओं से छोटी २ बड़ी मजबूत टहनियाँ नीचे लटकती रहती हैं। जिन्हें पकड़ कर बच्चे झूला करते हैं।

उत्पत्ति

यह वृक्ष प्रायः देवमन्दिरों, जलाशय और नदियों के तट पर होता है क्योंकि वहीं पर इसे जल भी मिलता रहता है। इसी कारण हिन्दू लोग इस की पूजा किया करते और इसके मूल में जल डालते हैं।

इस वृक्ष की आयु बड़ी लम्बी होती है। प्रधान काण्ड के सूख जाने पर भी हज़ारों वर्षों तक यह बरोहों के आश्रय ही खड़ा रहता और पृथ्वी से रस पान करता रहता है। प्रयाग का अक्षयवट इतना पुराना है कि लोग उसे अनादि काल से उत्पन्न हुआ मानने लगे हैं। कलकत्ते के बोटानिकल गार्डन में एक बड़ा विशाल वटवृक्ष है। उसके नीचे साढ़े तीन सौ स्तम्भ-समान बरोहें खड़ी हैं। वह इतना विस्तृत है कि उसके नीचे सात हज़ार के लगभग आदमी रह सकते हैं। कहते हैं कि यह उस समय भी विद्यमान था जब अलग्ज़ेण्डर ने भारत पर आक्रमण किया।

आयु

शीतकाल में इसकी छाया गर्म और गरमी में ठण्डी होती है। इसी कारण यह मनुष्यों को बड़ा लाभप्रद है। दूर दूर के पथिक इस के नीचे आकर विश्राम करते हैं। इस की छाया इतनी घनी होती है कि वर्षा होने पर भी पानी नीचे नहीं टपकने पाता। इसकी शाखाओं में सैकड़ों पत्ती अपने २ घोंसले बना कर रहते हैं और इसके फल खाते हैं। इसकी लकड़ी इतने काम की नहीं होती, परन्तु पत्तों से पत्तलें बनती हैं। इसका दूध अनेक औषधों में प्रयुक्त होता है। प्राय: छोटे २ गाँवों के बाहिर कोई न कोई ऐसा वृत्त रहता है जिस के नीचे ग्रामवासी चारपाई बिछा कर आराम करते हैं। ग्राम की पंचा-यतों की बैठकें भी इसी के नीचे लगती हैं। शास्त्रों में वटवृत्त लगाने का बड़ा पुण्य कहा है।

उपकार

प्रश्न

इन पर प्रस्ताव लिखो—पीपल, नीम।

फल

आम

भूमिका—सर्वोत्तम, उद्भिद् श्रेणी।

उत्पत्ति स्थान—उत्पत्ति उष्ण देश, किन्तु प्राप्य सर्वत्र।

आकार प्रकार—आकार-लम्बा, गोल, सुराहीदार, रंग-पहले हरा, पकने पर पीला, कई पकने पर भी हरे, प्रकार दो—(बीजू) बिज्जू और कलमी।

रोपण विधि—बीजू-बीज से उत्पन्न, कलमी-आम की काण्ड छील कर उस के साथ अन्य पौधे का छिलका उतार कर बांधना फिर

उसको काट कर अलग कर देना। ऊपर से सिर काट देने पर कलम। उसके फल कलमी। उनके प्रकार, स्वाद।

मंजराना आदि—माघ में मंजराना, वसन्त पंचमी के दिन मंजरी पकना, भादों तक आम मिलते हैं। कई साल तक रहते हैं।

उपकार—कच्चे से चटनी, अचार, मुरब्बा, पकने पर स्वादिष्ट, लकड़ी से संदूक, मेज़, कुरसी, किवाड़, आदि, पत्ते पशु-खाद्य।

उपसंहार—सभी नहीं फलते, मंजरी गिरना, हिन्दुओं का पूज्य, कोयल, वसंत।

प्रस्ताव

भूमिका — आम का पेड़ उद्भिद् श्रेणी का एक वृक्ष है। इसे सब वृक्षों में उत्तम समझते हैं। अतः इसे वृक्षराज कहते हैं। इस का फल इतना प्रसिद्ध है कि सभी भूमण्डल पर इस के समान दूसरा कोई स्वादिष्ठ नहीं।

उत्पत्तिस्थान — यह उष्ण देशों में फलता है। भारत, लङ्का तथा कई यूरोपीय देशों में यह होता है। कोई देश ऐसा नहीं जहाँ पर यह प्राप्य न हो। इस का कारण यह है कि जिन देशों में यह नहीं होता वहाँ इसे कच्चा तोड़ और बन्द कर भेज दिया जाता है। इस को पकते कई दिन लगते हैं, अतः वहाँ पहुँच कर खाने लायक हो जाता है।

आकार, रङ्ग, प्रकार — आम का आकार बहुत तरह का होता है। कई तो कुछ लम्बे रहते हैं, कई गोलाकार और प्रायः सभी सुराही-दार। पहले पहल इसका रङ्ग हरा होता है पीछे ज्यों २ यह पकता जाता है त्यों २ पीला होता जाता है। कई आम सिन्दूरी भी होते हैं। और कई पकने पर भी हरे रहते हैं। आम दो प्रकार के होते हैं, बीजू और कलमी।

बरासत में पृथ्वी में बीजू (आम की गुठली) गाड़ देते हैं। कुछ देर बाद वह अङ्कुरित होकर क्रमशः वृक्ष बन जाता है। आम के पौधे का छिलका उतार कर उसके साथ जिस पौधे की कलम देनी हो उस को वैसे ही छिलका छील कर बांध देते हैं। कुछ काल के बाद पौधे को काट और अलग कर उसका सिर काट देते हैं। तब यह कलम तैयार हो जाती है। उसे रोपण करने से वृक्ष हो जाता है। बीजू पेड़ का आकार बहुत ऊंचा और चौड़ा होता है। इसकी छाया भी बड़ी घनी रहती है। इस के पत्ते लम्बे होते हैं। कलमी आम आकार में छोटा होता है। इसकी शाखायें भी छोटी किन्तु पत्ते चौड़े होते हैं। बीजू आम की गुठली बड़ी, रस पतला और रेशा अधिक होता है। कोई २ बिना रेशा के गुदेदार भी होता है। यह अच्छा स्वादु होता है। कलमी आम से यह बहुत सस्ता बिकता है। कलमी आम गुदेदार होता है। उसकी गुठली बहुत छोटी होती है। इस में रेशा बिलकुल नहीं होता। यह बीजू आम से ज्यादा स्वादिष्ठ होता है। इस के प्रान्तीय भेद से अनेक नाम हैं। मालदह, सहारनपुरी, लङ्गड़ा और बम्बैया उन में मुख्य हैं। बीजू आम से यह महँगा रहता है इस लिए निर्धन पुरुषों के भाग्य में नहीं।

रोपणविधि

माघ मास में आम मञ्जराते हैं। वसन्त पञ्चमी के दिन इन की मञ्जरी पक कर खाने के लायक हो जाती है। चेत में इन में फल लगने लगते हैं और भादों तक आम रहते हैं। जब इन में मञ्जरी लगती है तो इन्हें कोयलें खाकर अपने स्वर को मञ्जु बनाती हैं। उन दिनों जिधर जायें कोयल के कलरव से श्रवण आनन्दित हो जाते हैं।

मञ्जराना आदि

आम की मञ्जरी से भ्रमर रस लेजाकर मधु बनाते हैं। कच्चे आम चटनी, मुरब्बा और आचार के काम आते हैं। आम का रस निकाल कर उसे सुखा देने से अमावट बन जाती है, पकने पर ये बड़े स्वादिष्ठ होते हैं। इस लिए इसे अमृतफल कहा है। आम गरम होते हैं इस लिए इन के खाने के बाद लोग दूध की लस्सी पीते हैं।

उपकार

इस की लकड़ी मेज़, कुर्सी, तिपाई, किवाड़ और सन्दूक बनाने के काम आती है। इस के पत्ते पशुओं का खाद्य हैं।

हिंदूमत में यह बड़ा पूज्य वृक्ष है। हवन आदि में इस के तोरण बना कर लटकाये जाते हैं, कलश के गले पर इसके पत्ते बाँधे जाते हैं। हवन में इसकी लकड़ी जलाई जाती है। संस्कृतकाव्यों में आम्र का ज़िकर आता है। जहाँ कहीं वसन्त का वर्णन हो कोई कवि भी इस संबंध में कोकिला और आम्र का वर्णन किये बिना नहीं रह सकता

उपसंहार

आम के पेड़ों में मञ्जरी इतनी भर कर लगती है कि यदि सभी मञ्जरी फल जाय तो पेड़ के टूटने तक की संभावना है। इस लिए आँधी से मंजरी गिर कर कम होती रहती है।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो।

जामन, अनार, नारंगी।

चाय

भूमिका—झाड़ीदार पौधों की श्रेणी का, सदा हरित, पश्चिम से आया।

जन्मस्थान, प्राप्तिस्थान—चीन जन्मभूमि। अब आसाम, लंका, ब्राज़ील, जावा, जापान में उपजती है। सर्वत्र प्राप्य।

रोपण और काटने की विधि—पहाड़ी भूमि। चैत वैसाख में बीज रोपण-काल। पौधे बड़े होने पर खेत में अलग २ रोपना। चार पांच हाथ लम्बा होने पर पत्ते काटना। चार फसल। पहली फसल सुगन्धित और बहुमूल्य। अन्तिम पौधे की आयु।

तैयार करने की विधि—पत्तों को आग पर भूंज कर दबा कर सुखाने से हरी चाय। किन्तु आहिस्ता २ सुखाने से काली चाय।

प्रयोग विधि—जल गर्म करके चाय को उस में छोड़ना। परिमित चाय पीना चाहिए अधिक पीने से हानि। चीनी लोग बिना दूध के पीते हैं।

लाभ—आलस्य दूर कर सजीवता। थकावट नाशक, शरीर की बलिष्ठता। चाय के व्यवसाय से लाभ।

उपसंहार—इस के विषय में चीनियों में प्रचलित कथा। शीत प्रधान देश और पश्चिमीय देशों में प्रयोग। हिन्दुस्थान में प्रचार। सरकार की ओर से मद्य के स्थान में चाय का प्रचार।

धान (Paddy)

भूमिका—अन्न श्रेणी का उद्भिद्।

प्राप्तिस्थान—भारत (बंगाल, बिहार, काश्मीर), अमेरिका, अफ्रिका।

आकार, वर्ण, प्रकार—घास की तरह हरा। अनेक प्रकार, जैसे बेगमी, बासमती, दुधराज इत्यादि।

रोपणकाल और विधि—विशेषतः वर्षाकाल। नीची जमीन, वर्षा की आवश्यकता। आषाढ़ के आरम्भ में बीज खेत में डालना। भादों, कार्तिक और आश्विन में पकना। काटने के बाद कूट कर मशीनों के द्वारा चावल बनाना। बहुत वर्षा, कम वर्षा दोनों बाधक।

लाभ—भारत में प्रधान भोजन। जल्दी पचने वाला। इस से अनेक स्वादु भोजन, खीर—आदि।

उपसंहार—हिन्दुओं में देवपूजा के समय चावलों का प्रयोग, धान की खेती की शोभा-नीचे जल, ऊपर हरे पौधे और शिखर पर धान के सिट्टे। वायु में बहती हुई नदी के समान दृश्य।

अभ्यास

गेहूँ, कपास का पौधा—इन पर प्रस्ताव लिखो।

गुलाब

भूमिका—गुलाब झाड़ीदार श्रेणी का पौधा—फूल की शोभा-पुष्पराज।

उत्पत्तिस्थान—पहले फारिस, पुनः अन्य यूरोपीय देश, अफ्रीका, चीन, भारत में काश्मीर और गाज़ीपुर।

आकार, रंग, प्रकार—बहुत छोटे से कमलफूल तक-अनेक रंग आकार भेद से २५०० प्रकार—

रोपणविधि—एक बित्ते की डंटी काट कर रोपना—पत्तियाँ निकलने पर दूसरी जगह रोपना।

वर्णन—फूल के नीचे पाँच पत्तियाँ—पत्तों में छिपी कलिका, फूटने पर गुलाब, बीच में केशर, डंटी पर काँटे।

लाभ—पूजा पाठ में उपयोग—गुलाब जल, इत्र, तेल।

उपसंहार—काँटे के विषय में कहावत—यूरोपीय गुलाब सुन्दर—देशी सुगन्धित।

प्रस्ताव

गुलाब का पौधा झाड़ीदार श्रेणी का है। कोई फूल भी गुलाब के फूलों की बराबरी क्या सौन्दर्य में और क्या सुगन्धि

में, नहीं कर सकता। जिस उद्यान में गुलाब की फुलवाड़ी हो वह सुगन्धि से महक उठता है। इसलिए इसे फूलों का राजा कहते हैं।

उत्पत्तिस्थान

फारिस गुलाब की जन्म भूमि है। वहाँ से धीरे २ फैल कर अब यह भूमण्डल के कोने २ तक पहुँच गया है। कोई देश ऐसा नहीं जहां पर यह न उपजता हो। अफ्रीका, चीन और भारत में बहुलता से पाया जाता है। इङ्गलैण्ड में इसके बाईस प्रकार मिलते हैं। हिन्दुस्तान में काश्मीर गुलाब का घर है। गाजीपुर में लोग इसके खेत उपजा कर गुलाब का वाणिज्य करते हैं। वहाँ पर गुलाब के इत्र के कितने ही कारखाने हैं।

आकार रंग, प्रकार

गुलाब का आकार छोटे से छोटा और कमल फूल के बराबर बड़ा भी होता है। बहुधा जङ्गली गुलाब का आकार छोटा रहता है। इसका मुख्य रंग हलका लाल होता है, अतः यह रंग भी गुलाबी रंग कहलाने लगा है। किन्तु इसके अतिरिक्त उसके गूढ़ा लाल, पीला आदि अनेक रंग हैं। इसके मुख्य दो भेद हैं—

देशी और विलायती। किन्तु रंग ढंग, आकार, सुगन्ध आदि के भेद से इसके २५०० तक प्रकार मिलते हैं।

रोपणविधि

इसकी डंटी को एक २ बित्ता काट कर भूमि में रोप देते हैं। जब उन में पत्तियाँ निकल आती हैं तो उन्हें निकाल कर अन्यत्र रोपा जाता है। इनको यदि एक श्रेणी में रोपा जाय तो वह एक ऐसी घनी झाड़ी सी बन जाती है कि उससे पार होना कठिन हो जाता है। पहाड़ी गुलाब तो स्वयं उपजता है। इसका रंग तो बड़ा अच्छा होता है किन्तु इसमें सुगन्धि नहीं होती।

पत्ते टहनी निकलने के बाद इसके शिखर पर छोटी छोटी कलिकायें निकलने लगती हैं। पहले वे पत्तों में

वर्णन — छिपी रहती हैं पर धीरे २ फूट कर बाहिर निकलने लगती हैं। फूल के भीतर पीले रंग का केशर रहता है। ज्यों २ फूल खिलता है उस की महक फैलने लगती है। फूल के नीचे पाँच पत्तियाँ रहती हैं। इसकी डंटी काँटेदार होती है।'

गुलाब के फूलों का पूजा पाठ में बड़ा उपयोग होता है। इस

लाभ — से गुलाबजल व इत्र निकालते हैं गुलाब का तेल वड़ा सुगन्धित रहता है।

गुलाब के साथ कांटे होने से यह कहावत प्रसिद्ध हो गई है कि 'कोई गुलाब का फूल बिना कांटे का नहीं।'

उपसंहार — इसका अभिप्राय यह है कि कोई लाभ बिना कठिनाई झेलने के नहीं होता। विलायती गुलाब का इतना सुगन्ध नहीं होता जितना देशी गुलाब का। विलायत में इसकी शोभा, रंग ढंग पर लोग मुग्ध हैं और भारत में इसकी सुगन्धि पर।

ईख (Sugar cane)

भूमिका—ईख घास जाति का।

उत्पत्तिस्थान—उष्ण देशों में बहुत। पहले पहल भूमध्य सागर के पूर्वी तट पर ही, अब चीन, ब्राजिल, अमेरिका, इजिप्ट, भारत में।

ईख की खेती—फागुन, चैत में रोपना। भूमि जोत कर एक २ हाथ गुल्ली गाड़ना। कई बार पाटना और कोड़ना। कार्तिक में तैयार।

गुड़ चीनि आदि—ईख के रस को ओढ़ा कर गुड़। रस बहुत साफ कर चीनी—चीनी से मिश्री। चीनी की मशीनें—जावा की चीनी।

लाभ—मिठाई, तजारत।

उपसंहार—कई मीठे फलों से चीनी परन्तु ईख की बहुत अल्पमूल्य।

ऋतुएं

वर्षा

भूमिका—भारत की छः ऋतुओं में द्वितीय, आषाढ़ से भादों तक। प्रान्तभेद से समय आगे पीछे।

वैज्ञानिक कारण—जल का भाप बन कर वायु में मिलना। मेघ बनना। पानी बरसना। वर्षा ऋतु में मानसून पूर्व समुद्र पंजाब तक। पश्चिम समुद्र की भाप गुजरात आदि प्रान्तों में।

प्राकृतिक दृश्य—आकाश मेघाच्छन्न। बिजली, गर्जन, इन्द्रधनु इत्यादि। भूमि पर जल, हरियाली, मेंडकों की दरदराहट।

लाभ—खेती को लाभ। वायु शुद्धि। गर्मी से छुटकारा।

दोष—पङ्क, घरों में रह कर आलस्य। वर्षा के पीछे मलेरिया ज्वर, दूसरी बीमारियां। कीट, पतङ्ग।

उपसंहार—वर्षा न होने से दुर्भिक्ष। जल की कमी।

प्रस्ताव

भूमिका

भारत की छः ऋतुओं में वर्षा दूसरी ऋतु है। इस का समय श्रावण भादों तक है किंतु प्रांतभेद से समय आगे पीछे थोड़ा बहुत हो सकता है।

वैज्ञानिक कारण

सूर्य्य की गर्मी में पानी भाप बन कर हलका हो जाता है और वायु में मिल जाता है। वहाँ ठण्डक पाकर यह जम जाता है। यही मेघ कहलाता है। जब और अधिक सर्दी लगती है तो वही भाप फिर पानी में परिवर्तित हो कर बरफरूप में बरसने लगती है।

गर्मी में जब बहुत सा समुद्र का पानी भाप से बादल बन जाता है तो उसे मानसून् कहते हैं। पूर्व समुद्र से मानसून् चल कर

बङ्गाल से होती हुई पञ्जाब तक चली आती है और वहाँ पर ऊँचे हिमालय के कारण आगे नहीं जा सकती। पश्चिम समुद्र की मानसून गुजरात आदि देशों में जाती है और वहाँ पर पर्वतों से टकरा बरसने लगती है।

प्राकृतिक दृश्य

वर्षा में आकाश की अद्भुत शोभा होती है। मेघों की कृष्ण घटा से आच्छादित होकर आकाश कालरात्रि की शोभा धारण करता है। कई बार ऐसा होता है कि कई दिनों तक सूर्य्य भगवान् के दर्शन नहीं होते और कभी २ ऐसा भी होता है कि एक ही दिन में सूर्य्य बीसों वार छिपता और निकलता है। जिधर देखो बिजली की कड़क और बादल की गरज सुनाई देती है। कोसों तक पृथ्वी जल में डूबी रहती है। हरियाली की बहार चारों ओर दिखाई पड़ती है। मेंड़कों की टरटराहट से सर्वत्र कोलाहलसा मचा रहता है।

लाभ

भारत कृषिप्रधान देश है। इसलिए इसकी समृद्धि वर्षा पर ही निर्भर है। वर्षा से वायु शुद्ध हो कर स्वास्थ्य-प्रद हो जाता है और सभी रोग के कीड़े बह जाते हैं। गर्मी से संतप्त लोग टकटकी लगाये वर्षा की ओर निहारते रहते हैं। जिस वर्ष वर्षा न हो उनके क्लेश का कोई ठिकाना नहीं।

दोष

वर्षा से कूचे, बाज़ार सभी पङ्कमय हो जाते हैं। कई दिनों तक लोग घरों से नहीं निकलते और आलस्य में पड़े रहते हैं। बर्षा के पीछे जो दूषित वायु आकाश और भूमि से निकलती है उससे चारों ओर मलेरिया और अन्य रोग फैल जाते हैं। जब कीट, पतङ्ग, बिच्छू आदि के बिलों में पानी भर जाता है तो सभी बाहर निकल कर लोगों को कष्ट देने लगते हैं।

यदि किसी वर्ष वर्षा न हो तो दुर्भिक्ष पड़ जाता है और अकाल-

उपसंहार — पीड़ित प्रजा अनाहार से मरने लगती है। कई बार कूप तड़ागादि में पानी सूख जाता है और लोगों को वह पीने के लिए भी नहीं मिलता।

ग्रीष्म

भूमिका—भारत की ऋतुओं में पहली। ज्येष्ठ आषाढ़।

वैज्ञानिक कारण—सूर्य भूमि के पास आता है।

वर्णन—दोपहर की गर्मी, गर्म लू, नदी नाले शुष्क।

लाभ—भूमि में उपजाऊ शक्ति की वृद्धि। शरीर से पसीने द्वारा मल निकलना।

दोष—कालरा आदि रोग। बहुत गर्मी से मृत्यु।

उपसंहार—गर्मी में लोग पहाड़ों पर जाते हैं। वायसराय तथा प्रान्तिक शासक भी पहाड़ों पर जाते हैं। धनी लोग बिजली के पंखे लगाते हैं।

अभ्यास

वसन्त पर प्रस्ताव लिखो

संकीर्ण (Miscellaneous)

रेलवे स्टेशन

भूमिका—रेल के खड़े होने का स्थान है। क्षण में शहर बस जाना।

बाहरी दृश्य—टाँगा, गाड़ी, कुली, टिकटघर।

अन्दर का दृश्य—प्लेट फार्म, दीवारों पर इश्तिहार, लोगों की भीड़, सौदा बेचनेवाले, लोगों की उत्सुकता, गाड़ी आना, चढ़ने उतरने की घबराहट। गाड़ी का चला जाना, मित्रों का वियोग।

भारत की ऋतुएं

भूमिका—भारत में प्रधान ऋतु तीन—ग्रीष्म, वर्षा, शीत। किन्तु अनुभव से छः—ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त, शिशिर, वसन्त। वैशाख से चैत तक बारह मास क्रमशः छः ऋतुओं में विभक्त।

कारण—पृथ्वी का सूर्य के गिरद घूमते समय सूर्य के समीप व दूर हो जाना।

ग्रीष्म—धूप कड़ी, गरम लू, नदी नाले शुष्क, दिन बड़े रातें छोटियाँ। कीट पतङ्ग। हैज़ा, प्लेग का प्रकोप। पशुओं की दुर्दशा।

वर्षा—आकाश मेघाच्छादित, चित्त में शान्ति। बिजली की कड़क, बादल की गर्जन, नदी नाले जलपूर्ण, बाज़ार, कूचों में कीचड़, खेती रोपना, किसानों का आनन्द, वृक्ष लता हरे।

शरद्—बादल किन्तु वर्षाऽभाव। नदीजल निर्मल, बन, उपवन शोभा, मलेरिया।

हेमन्त—पर्वतों पर हिम, सायंकाल कुहरा, पेड़ों के पत्ते गिर जाते हैं, हाथ पांव जाड़े से ठिठुराते हैं।

वसन्त—ऋतुराज। न गर्मी न सरदी। मन्द सुगन्धित वायु। नये पत्ते। वृक्ष पुष्पित। वसन्त पञ्चमी, होली, त्यौहार।

उपसंहार—ऐसा ऋतु परिवर्तन भारत के सिवा अन्य कहीं नहीं। इङ्गलैण्ड में वसंत, ग्रीष्म, शरद् और शीत, उत्तर और दक्षिण ध्रुवों में केवल शीत।

हवाई जहाज़

भूमिका—आकाश में चलने फिरने का साधन।

आविष्कार—पहले गुबारे, पहले पहल अमेरिका में तजरुबे, राइट साहब ने १९०५ में एक दोपत्ती (Biplane) बनाया, लोगों

का उत्साह बढ़ा, कई वायुयान बनने लगे, अधिक उन्नति पिछले दस वर्षों में, विशेषतः पिछले यूरोपीय युद्ध में।

वर्णन—चील का आकार, एल्यूमिनियम जैसे हलके धातु का बना। उद्धारकयन्त्र से उठाना उतारना, शीर्ष पतवार से इधर उधर फेरना, बीच में बैठने का स्वभाव।

वैज्ञानिक सिद्धान्त—हलका पदार्थ भारी के ऊपर तैरता है, वायुयान से वायु-निष्कासनयंत्र द्वारा वायु निकाल कर वायु से हलकी कोलगैस का भरना।

भेद—अनेक भेद, वाक्स काइट पतङ्ग के नमूने का। ग्लाइडर (दो-पंखा, एक दूसरे के ऊपर) वायुयान के तीन भेद—एकपत्ती (एक पंखवाला), दोपत्ती (दो पंखवाला), तिपत्ती (तीन पंखो-वाला), जर्मन के प्रसिद्ध ज़ेपलिन जहाज़।

लाभ—युद्ध में शत्रु पर गोलों की वर्षा, शत्रु की सेना और हरकत की खबरें लाना, शान्ति समय में आकाश यात्रा, रेल से शीघ्र गति, डाक लाने का शीघ्रगति साधन, भारत से लण्डन तक छः दिन का रास्ता।

उपसंहार—पुरातन समय में प्रकार, राम का पुष्पक में अयोध्या लौटना।

समुद्र

भूमिका—महासागर की बड़ा भाग। रत्नाकर, सरित्पति—आदि अनेक सार्थक नाम।

आकार, रंग, प्रकार—पृथ्वी से तीन गुना, गहराई भूमि की ऊँचाई से ज़्यादा। जल खारा, कहीं लाल, कहीं काला, कहीं पीला जल मिट्टी के भेद से।

उत्तर महासागर, अटलाँटिक महासागर, प्रशान्त महासागर,

भारत सागर, अरब समुद्र, लाल सागर, काला सागर आदि कई भेद।

उपकार—दूसरे देशों से सम्बन्ध, व्यापार वृद्धि, रत्न आदि का लाभ, वर्षा का कारण, जीवों का वासस्थान, नमक की प्राप्ति।

दृश्य—तट पर खड़े होकर आकाशसमान असीम, सूर्योदय तथा सूर्यास्त की शोभा, जहाज़ों का आँधी में डूबना।

उपसंहार—सगर के पुत्रों से खुदा हुआ, वैज्ञानिक सिद्धान्त।

नदी

भूमिका—अनावश्यक जल को समुद्र में ले जाने के लिये प्राकृतिक नाली।

कैसे बनती है—सरोवरों, वर्षा, तथा बर्फ के पानी से बन कर मार्ग में छोटे बड़े नालों से मिल कर बड़ी हो जाती है।

गुण—तटों को तोड़ना, मिट्टी, मल का बहाना, नये मार्ग बनाना!

लाभ—नहर निकाल कर खेतों में पानी, वायु को शीतल करना, जहाज़ों द्वारा व्यापार।

पर्वत

भूमिका—स्थल से ऊँचा, समुद्र की सतह से १०० अथवा अधिक ऊँचा।

भारत के पर्वत—हिमालय में विन्ध्य इत्यादि, हिमालय का मौंट एवरिस्ट संसार में सब से ऊँचा।

वर्णन—कहीं पर वृक्ष, कहीं पर जड़ी बूटी, कहीं बरफ, कहीं गढ़े और कहीं सरोवर, अपूर्व शोभा।

लाभ—जाति तथा देशों की प्राकृतिक सीमा, वर्षा में सहायक, जल वायु स्वास्थ्यकर, बहुत सी नदियों के स्रोत।

बाईसिकल

भूमिका—पहियेदार, घोड़े की नक़ल, पहले लकड़ी की परन्तु भद्दी, लोहे की बन कर बड़ी विख्याति, रबड़ के टायर से शीघ्र गति, धीरे २ उन्नति, बेरोक चलने वाली (Freewheeled).

लाभ—शीघ्र यात्रा, व्यायाम ।

उपसंहार—थोड़े ख़र्च की सवारी, सरकस के खेल ।

प्रातःकाल

भूमिका—प्राकृतिक शोभा—सुखद और सुगन्धित समीरण—चित्त की शान्ति ।

सूर्य्योदय—पूर्व में सूर्य्योदय की शोभा—धीरे २ पृथ्वी पर प्रकाश । वृक्षों पर पक्षिगण की चहचहाट, बन्य पशुओं का उठना ।

प्राणियों की जागृति—मनुष्यों की स्वकार्य्यासक्ति—कृषकों का खेती के लिये जाना ।

लाभ—मन में बिस्फूर्ति, ईश्वरस्मरण, कार्यक्षमता, प्रातःशयन रोगकर ।

रेलगाड़ी

भूमिका—यात्रा के लिए सुखद सवारी, भाप की शक्ति से गति ।

इतिहास—जार्ज स्टीफन्सन का आविष्कार, उपरान्त जेम्स वाट की इञ्जिन के विषय में उन्नति, १७३० में सवारी के लिये प्रयोग, भारत में लार्ड डलहौसी के समय से प्रयोग ।

भेद, गति इत्यादि—डाकगाड़ी, एक्सप्रेस, पसिञ्जर और मालगाड़ी । गति २० से ४० मील तक, मालगाड़ी माल ढोने के लिये, सवारी के चार दर्जे ।

गाड़ी से पूर्व अवस्था—यात्रियों की आपत्ति, डाकुओं की लूट ।

लाभ—व्यापार की सहायता, अकाल में दूर देशों से अनाज लाना, युद्ध में सहायता, लाखों की आजीविका।

हानि—गाड़ियों के टकराने से मृत्यु, रेल से मनुष्य आलसी, विदेशी व्यापारियों द्वारा अन्न अधिक मात्रा में देश से बाहर ले जाना।

उपसंहार—कम्पनियों की रेलों से विदेशियों को लाभ, सरकारी रेलों से हिन्दुस्तान को लाभ।

२—विवरणात्मक

जीवनचरित्र [शासक]

अशोक

भूमिका—मौर्यकुल में तृतीय, बुद्धधर्म के प्रचार से विख्यात।

जन्म, पितृकुल परिचय आदि—जन्मतिथि अनिश्चित, बिंदुसार का पुत्र। स्वभाव से साधु।

राज्यकाल और विशेष घटना—ईसा के पूर्व २७२ से २३२ तक। राज्यविस्तार, राज्यधानी। कालिंगविजय। नरहत्या से घृणा। बुद्ध धर्मानुयायी। तीर्थयात्रा। पशुबध-निवारण। पशुचिकित्सा, हस्पताल। स्तूपों पर शासन, आज्ञाओं तथा बौद्धधर्मनियमों को खुदवाना। बौद्धमहासभा।

देहान्त—ईसा के २३२ वर्ष पूर्व।

उपसंहार—अनेक प्रचलित आख्यायिकायें। सब से बड़ा राजा।

प्रस्ताव

भूमिका

जिस मौर्य कुल के जन्मदाता सम्राट चन्द्रगुप्त थे उसी कुल में महाराज अशोक तृतीय राजा थे। बुद्धधर्म के प्रचारकों और अनुयायियों में इनका पहला नाम है। इसी कारण इनका शुभ नाम संसार भर में प्रसिद्ध है।

इनका जन्म कब हुआ इस का अभी तक ठीक ठीक पता नहीं लगा। इनके पिता का नाम विन्दुसार था। ये स्वभाव से बड़े साधु और परिश्रमी थे। किसी को कष्ट देना ये पाप समझते थे। इसी लिये ये राजर्षि अशोक के नाम से प्रसिद्ध हो गये हैं।

जन्म, पितृकुल परिचय—आदि

जब इनके पिता का देहान्त लगभग ईसा के २७२ वर्ष पहले हुआ तो राज्य-भार अशोक को उठाना पड़ा। कहते हैं कि इनका अभिषेक इस से भी दो साल पीछे हुआ था। इन्होंने अपने बाहुबल से राज्य का विस्तार आगे से बहुत बढ़ा दिया। बंगाल, उड़ीसा तथा गोदावरी और कृष्णा नदियों का मध्य प्रदेश इन्हीं के अधीन था। पाटलिपुत्र (पटना) इनकी राजधानी थी। कलिङ्गविजय के बाद जब इन्हें मालूम हुआ कि इन्हीं के कारण लाखों प्राणियों की हत्या हुई है तो इन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ और उसी दिन प्रतिज्ञा कर छोड़ी कि आगे को कभी रणक्षेत्र में नरहत्या नहीं करेंगे। इनके जीवन पर बुद्ध धर्म का बड़ा प्रभाव पड़ा। ये भी उसीके अनुयायी होकर उसका प्रचार करने लगे। कुछ काल बाद महाशय उपगुप्त के साथ सभी बौद्ध तीर्थों की इन्होंने यात्रा की और जहाँ कहीं गये लाखों रुपये दान दे दिये। इनके राज्य में पशुओं का मारना ही निषिद्ध न था, किन्तु इन्होंने पशुओं की चिकित्सा के लिये हस्पताल भी खोल दिये थे। नई इमारतें बनवाने का इन्हें बड़ा शौक था। इन्होंने सैकड़ों स्तूप बनवाये थे जिन पर इनकी आज्ञाएँ और बुद्धधर्म के नियम खुदवाये थे। अपने राज्यकाल में इन्होंने एक और बड़ा काम किया। इन्होंने एक बौद्ध महासभा निमन्त्रित की जिसमें उन सभी बुराइयों का संशोधन किया गया जो उन दिनों बौद्ध मत में प्रचलित हो गई थीं।

राज्यकाल और उसकी विशेष घटनायें

इनका देहान्त ईसा के २३२ वर्ष पूर्व हुआ। उस समय मौर्य-राज्य अफगानिस्तान, बलूचिस्तान, सिन्ध, काश्मीर, नेपाल और दक्षिण में कुछ प्रान्त छोड़ कर सभी हिन्दोस्तान में फैल चुका था।

देहान्त

अशोक के सम्बन्ध में बहुत आख्यायिकाएँ प्रचलित हैं। कहते हैं कि अशोक इतने निर्दय थे कि राज्याभिषेक से पहले उन्होंने अपने सब भाइयों का बध कर दिया था। एक और आख्यायिका प्रचलित है कि एक दिन उन्होंने अपने अन्तःपुर की ५०० स्त्रियों को जीते जी जला दिया था। किन्तु ये सभी निर्मूल हैं। बल्कि इसके विरुद्ध यह सिद्ध हो चुका है कि हिन्दुस्तान के ऐतिहासिक राजाओं में अशोक के पल्ले का एक भी दयालु राजा नहीं मिलता। क्या प्रजाशासन में, क्या बुद्धिमत्ता में, क्या उदारता तथा स्वधर्मानुरागित्व में उसने कमाल कर दिया था।

उपसंहार

अकबर

भूमिका—मुसलमान राजाओं में बड़ा प्रसिद्ध, न्यायपरता में विख्यात, मुग़ली साम्राज्य का प्रतिष्ठापक।

जन्म, पितृकुल परिचय आदि—जन्म १५४२ ई० में। पिता का नाम हुमायूँ। पिता की मृत्यु पर १४ वर्ष की आयु।

राज्यकाल और उसकी विशेष घटनायें—चार वर्ष तक राज्यकार्य उन का पितृव्य बैराम करता रहा। हेमू से युद्ध। अकबर का राज्य-भार अपने हाथ में लेना। बैराम का बध। राज्यविस्तार समस्त भारतवर्ष में। राज्य के काबुल, लाहौर आदि १५ सूबे · हिन्दुओं से सद्‌व्यवहार। जज़िया उठा लेना।

मृत्यु—मृत्यु १६०० ई० में।

उपसंहार—उस के राज्य में विद्वानों का सत्कार, धार्मिक सभाओं में धर्मचर्चा। राज्यकर। अबुलफ़ज़ल का लिखा अकबरनामा।

गुरु गोबिन्दसिंह

भूमिका—सिक्खों का दशम गुरु। हिन्दुमात्र से सत्कृत।

जन्म, पितृकुल परिचय आदि—पटना में १६६० ई० सन् में जन्म। पिता का नाम गुरु तेगबहादुर।

जीवन की विशेष घटनायें—औरङ्गज़ेब से पितृबध के कारण वैर। बीस वर्ष तक हिमालय में तपस्या। पिता का पद लेकर खालसा पन्थ चलाया, औरङ्गज़ेब से युद्ध। गुरु गोबिन्दसिंह के जीवित पुत्रों को दीवारों में गढ़वाया जाना। औरङ्गज़ेब से सन्धि करना अस्वीकार। सिन्ध के मुग़ल गवर्नर का पराजय। पुनः औरङ्गज़ेब के निमन्त्रण का अस्वीकार।

मृत्यु—५४ वर्ष की आयु में एक पठान के हाथ से मृत्यु।

उपसंहार—सिक्खों में नवीन जागृति का संचार, हिन्दुमात्र की धर्मरक्षा।

महाराणा प्रतापसिंह

भूमिका—राजपूतों में अतिप्रसिद्ध, कारण।

जन्म, पितृकुल परिचय आदि—पिता का नाम उदयसिंह। जन्म-स्थान चित्तौड़। उदयसिंह की कायरता। चित्तौड़ का राज्य अकबर के हस्तगत।

राज्य और विशेष घटनायें—१५७२ में उदयसिंह का देहान्त। सबसे छोटा लड़का जयमल उत्तराधिकारी। उस समय में मेवाड़ की दुर्दशा। प्रतापसिंह और सलीम में हल्दीघाटी में युद्ध, प्रतापसिंह का युद्धभूमि छोड़ जाना। कमलमीर के किले में रहना। मुग़लों

से फिर युद्ध। प्रताप का जंगलों में छिपे रहना, वहां अनेक विपत्तियां। पुनः सेना इकट्ठी कर शत्रु से चित्तौड़ बिना और सभी राज्य का लौटा लेना।

मृत्यु—१६६७ में, मृत्यु-शय्या पर चित्तौड़ की स्वतन्त्रता की चिन्ता।

उपसंहार—वीरता की मूर्ति। पक्का राजपूत। स्वदेशाभिमान।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

चन्द्रगुप्त, श्रीहर्ष, शिवाजी, पृथ्वीराज, क्लाइव, अलैग्ज़ैण्डर।

जीवन-चरित (लेखक)

तुलसीदास

भूमिका—हिन्दीजगत् में चमकता हुआ सूर्य। रामायण के कारण प्रसिद्धि। पहला नाम रामबोला।

जन्म, पैतृक कुलपरिचय—जन्मकाल लगभग सम्वत् १५९९। इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे, राजापुर, जिला बांदा के निवासी। पिता निर्धन। इनकी बाल्यावस्था में पिता का देहान्त। कान्यकुब्जी व सरयूपारीण ब्राह्मण। धर्म वैष्णव।

जीवन की विशेष घटनायें—स्त्री से अत्यन्त प्रेम। वैरागी बनना, तीर्थस्थानभ्रमण। काशीवास। रामभक्त। अकुटिल स्वभाव।

मृत्यु—लगभग १६८० सम्वत्।

लेखक—हिंदी भाषा के अद्वितीय कवि। रामायण के प्रणेता। निर्भय लेखक।

उपसंहार—इनकी रामायण की प्रसिद्धि। इनके अनुयायी।

प्रस्ताव

हिन्दीजगत् के आकाश में महात्मा तुलसीदासजी सूर्य्यसमान चमक रहे हैं। इनकी समानता के हिन्दी में कुछ और कवि भी हैं किन्तु जितना इनका नाम भारत वर्ष के कोने २ में गूंज रहा है उतना अन्य किसी का नहीं। इसका एकमात्र कारण इनका बनाया श्रीरामचरित मानस है। इनका पहला नाम रामबोला था।

भूमिका

इनका जन्म काल सम्वत् १५९९ के लगभग माना गया है। इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे था। ये राजापुरा, जिला बांदा के निवासी एक ब्राह्मण थे। ये किन ब्राह्मणों में थे इसमें अभी तक मतभेद चला आता है। कई इन्हें कान्यकुब्जी ब्राह्मण बताते हैं और कई सरयूपारीण। इनका धर्म वैष्णव था। आत्माराम की आर्थिक दशा कुछ अच्छी न थी। अभी रामबोला (तुलसीदास) छोटा ही था कि ये चल बसे।

जन्मकाल, पैतृक कुल परिचय आदि

जब ये विवाहयोग्य हुए तो इनका विवाह दीनबन्धु पाठक की कन्या रत्नावली से हो गया। इनका प्रेम अपनी स्त्री से इतना बढ़ गया कि क्षण के लिए भी उस का वियोग नहीं सह सकते थे। एक दिन इनकी स्त्री अपने पितृगृह में गई। ये उसका वियोग न सह सके और सीधे उसके पीछे वहीं पहुँच गये। इसपर उनकी स्त्री को लज्जित होना पड़ा और क्रोध में आकर उसने कहा कि 'जितना प्रेम आप मेरे साथ करते हैं उतना ही ईश्वर से करते तो आपका परलोक सुधर गया होता।' इन शब्दों ने उनके हृदय पर बड़ा असर किया। ये घर छोड़ निकल गये और गुसाईं रामानन्द के शिष्य बन गये। जब ये विरागी सम्प्रदाय में जा मिले तो इनका

जीवन की विशेष घटनायें

नाम गुसाईं तुलसीदास रक्खा गया। विरागी बनने के बाद ये प्रायः तीर्थस्थानों में घूमते रहे। अयोध्या में इनका अधिक आना जाना रहता था, किन्तु काशी इनका मुख्य निवास-स्थान था जहाँ इनके स्मारकस्थान अभी तक विद्यमान हैं। पहले हनुमानफाटक फिर पीछे गोपालमन्दिर में रहते रहे। गोपालमन्दिर भी इन्हें वल्लभीय गुसाइयों के द्वेष के कारण छोड़ना पड़ा। फिर अस्सीघाट में जा रहे और वहाँ पर रामलीला करते रहे। इनका स्वभाव बड़ा सरल था और कुटिलता का इनमें नाममात्र भी न था। सब को ये सीधा सीधा सुना देते थे। रामभक्ति इन में पराकाष्ठा तक पहुंची हुई थी। जिस किसी से ये राम नाम सुनते थे उससे प्रेम करने लग जाते थे। कहते हैं एक बार एक ब्राह्मण किसी हत्या के पाप की निवृत्ति के लिए प्रार्थना कर रहा था। ज्यों ही गुसाईं जी ने उसके मुखसे राम नाम सुना उसे अपने साथ भोजन खिला लिया।

मृत्यु इनकी आयु जब ८० वर्ष की थी तो इनका देहान्त लगभग १६८० में हो गया।

लेखक हिन्दी भाषा के ये बड़े अगाध कवि थे। इनका बनाया ग्रन्थ एक से एक चढ़ा है, तो भी जितनी प्रसिद्धि रामचरित मानस (रामायण) की हुई है उतनी और किसी की नहीं। जिस विषय का इन्होंने वर्णन किया है उसमें कमाल कर दिया है। इनके वर्णन में बड़ी स्वाभाविकता रहती है। अलङ्कारों के प्रयोग में इनकी चातुरी की कोई तुलना नहीं कर सका। लिखने में ये किसी से डरते नहीं थे। इन्होंने किसी राजा महाराजा की झूठी प्रशंसा से अपनी कविता को भ्रष्ट नहीं किया है।

उपसंहार जो सौभाग्य इनको मिला है वह और किसी के भाग्य में नहीं। इनकी बनाई रामायण इतनी प्रसिद्ध होगई है कि

भारत में कोई ही हिन्दू होगा जो इससे परिचित न हो। वैरागी सम्प्रदाय की तो यह धर्मपुस्तक मानी जा चुकी है। भक्त लोग इसकी गाथा करते करते श्रान्त नहीं होते।

वाल्मीकि

भूमिका—आदि कवि। संस्कृत के अनुष्टुप् श्लोकों के जन्मदाता।

जीवन घटनायें—प्रथम दस्युओं का जीवन। जीवन में परिवर्तन। तपश्चर्या, महाकवि। रामायण रचना।

लेखक—संस्कृत के अद्वितीय कवि। भाषा सरल। वर्णन प्रौढ़।

उपसंहार—रामायण की प्रसिद्धि। रामभक्ति।

शेक्सपीयर

भूमिका—अंग्रेज़ी के विख्यात कवि।

जन्म, पैतृककुल परिचय आदि—जन्मतिथि २३ अगस्त, १५६४ सन्। जन्मस्थान—वारविक शायर में स्टैटफोर्ड-आन-हावन ग्राम। पिता का नाम—जान शेक्सपीयर, माता का नाम मेरी अडन।

बाल्यकाल—स्टैटफोर्ड के स्कूल में प्रथम शिक्षा। चौदह वर्ष की अवस्था में स्कूल छोड़कर पिता के साथ अजीविका कमाने लगना, सोलह वर्ष की आयु में अपने से आठ साल बड़ी स्त्री के साथ विवाह।

जीवननिर्वाह—बाईस साल की आयु में लण्डन जाना। लण्डन थियेटर में कर्मचारी। फिर ब्लैक फ्रायर्स थियेटर में। तब से नाटक लिखने शुरू करना। जल्दी प्रसिद्धि। ग्लोब थियेटर का स्वामी। धन एकत्र कर फिर १६१३ में अपने ग्राम में निवास और जमींदारी करना और नाटक लिखना।

मृत्यु—मृत्युकाल २३वीं अप्रैल १११६, कारण—सुरापान से ज्वर।

लेखक—अंग्रेज़ी का अद्वितीय कवि। अपने समय का प्रतिनिधि कवि। भाषा सरल। उपमा अलंकार का प्रयोग। स्वाभाविक वर्णन।

उपसंहार—जितना इनका मान है उतना किसी राजा महाराजा का भी नहीं, इनके कारण इंगलिश जाति का मान।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

कालिदास, सूरदास, कबीर, मिल्टन, महावीरप्रसाद।

जीवनचरित (देशभक्त patriots)

दादाभाई नौरोजी

भूमिका—भारतसेवक।

जन्म, पैतृककुलपरिचय—१८२५ ई० में जन्म, बम्बई में। पिता एक पारसी पुरोहित। चार वर्ष की आयु में पिता का देहान्त। इनकी माता के यत्न से शिक्षाप्रबन्ध।

बाल्यकाल—बड़े प्रतिभाशाली, श्रेणी में प्रथम, १८४५ में कालिज-शिक्षासमाप्ति।

जीवन—एलिंफस्टन कालिज में पहले सहकारी अध्यापक, पीछे अध्यापक, स्टुडेण्टस लिटरेरी कान्फरेंस की स्थापना, स्त्रीशिक्षाप्रचार। गुजराती 'रास्तगोफ्तार' पत्र के सम्पादक। कामा कम्पनी की इंगलैण्डवाली शाखा के संचालक। वहां पर राजनैतिक मामलों में भाग। सिविल सर्विस की परीक्षा के लिये आन्दोलन। उस में सफलता। १८६९ में भारत में लौट आये। फासेट कमेटी के आगे इंगलैण्ड में साक्षी। बड़ौदा के दीवान बने। १८८५ में बम्बई की कौंसिल के सभासद्, कलकत्ता कांग्रेस के सभापति,

पार्लियामेंट के सभासद्, १८९३ में लाहौर कांग्रेस और १९०६ में कलकत्ता कांग्रेस के सभापति, प्रथम वार इनके आधिपत्य में कांग्रेस में भारत-स्वराज्य का प्रस्ताव पास हुआ।

मृत्यु—३० जून १९१७ में, बम्बई में।

उपसंहार—स्वावलम्बन के उदाहरण, सरलस्वभाव, स्वदेशभक्त, मरते समय तक भारतोन्नति की शिक्षा, दिव्य मूर्ति, मृत्यु से भारत को हानि।

महात्मा गोखले

भूमिका—नवीन भारत के सुपुत्र, स्वावलम्बन से उच्च पद।

जन्म, पैतृक कुल परिचय आदि—जन्म सन् १८६६ में कोल्हापुर के अन्तर्गत छोटे गांव में, पिता कोकण जाति का निर्धन ब्राह्मण, इनका नाम गोपालराव, पिता का नाम कृष्ण, इसलिये महाराष्ट्र की प्रथा के अनुसार पूरा नाम गोपालकृष्ण गोखले।

बाल्यकाल—बड़ी तीव्र बुद्धि, श्रेणी में प्रथम, अठारह वर्ष की अवस्था में बी. ए.

जीवन—न्यू इंगलिश स्कूल के अध्यापक, उसी कालेज में प्रोफेसर। दक्षिण एज्यूकेशनल सोसाइटी के जीवनावधि सभासद्। महात्मा रानाडे से परिचय। पच्चीस वर्ष की अवस्था में बम्बई प्रान्तिक कान्फरेन्स के और १८९५ में पूने की कांग्रेस के मन्त्री। बाम्बे यूनीवर्सिटी के फैलो। विलायत में कमीशन के सामने इनकी भारत के खर्च के पड़ताल पर साक्षी। पूना की प्लेग में निर्भयता से लोगों की सेवा, छत्तीस वर्ष की अवस्था में बम्बई कौंसल के सभासद। १९०२ में वायसराय की कौंसल के मेम्बर। १९०५ में विलायत के डेपुटेशन के मेम्बर। वहां कुछ स्वास्थ्य विगड़ गया। १९०६ में बनारसकांग्रेस के सभापति। भारतसेवा

समिति स्थापन। दक्षिणअफ्रीका की यात्रा। पब्लिक सर्विस कमीशन के मेम्बर।

मृत्यु—१९ फर्वरी, १९१६ में मृत्यु। सभी भारत में शोकसभाएं।

उपसंहार—सरल स्वभाव। सादा जीवन। लोकमत के बड़े पक्षपाती। कौंसल में बड़ा प्रभाव। उनकी वक्तृता। देश के सच्चे सेवक। मृत्यु से भारत को हानि। उनका स्मारक।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, मि० रानाडे, धनकुबेर ताता, सर सैयद अहमद।

अहल्याबाई

भूमिका

जगत्‌भर के इतिहास मे जितनी रमणियाँ हो गुजरी हैं उन में अहल्याबाई एक उच्च आदर्श की रमणी थी। किसी अंश में इसके जीवन पर दृष्टि डालो, उसे गुणों से पूर्ण पाओगे। इसी कारण यह बड़ी प्रसिद्ध थी।

जन्म, पितृकुल परिचय आदि

मालवाप्रदेश के पाथेरड नाम गाँव में सन् १७३५ में इसका जन्म हुआ था। इसके पिता का नाम आनन्द-राव था। ये बड़े सरलस्वभाव पुरुष थे। अधिक समय इनका ईश्वराराधन में ही लगता था। लोगों का यह विचार था कि यह उनकी ईश्वरभक्ति का ही फल था कि उनके गृह में अहल्याबाई जैसी सर्वगुणसम्पन्न लड़की उत्पन्न हुई।

माता पिता के आग्रह से अहल्याबाई ने थोड़ी सी शिक्षा प्राप्त कर ली थी। जब यह नौ वर्ष की हुई तो एक दिन होलकर वंश के राजा मल्हारराव अपने पुत्र खाण्डेराव के साथ पथेरड से गुज़र रहे थे। वह अहल्याबाई के अनुपम गुणों को देखकर उसपर मुग्ध हो गये। अन्त में उन्होंने आनन्दराव को कहला कर अहल्याबाई का विवाह खाण्डेराव से कर दिया।

बाल्यकाल

अहल्याबाई के सरल स्वभाव और आडम्बर-रहित जीवन से उसके सास ससुर उसपर मुग्ध हो गये।

कुछ समय के बाद अहल्याबाई का एक पुत्र और एक कन्या हुई। सन्तानमुख के अवलोकन का सुख अभी हुआ ही था कि इतने में, जब उसकी अवस्था बीस वर्ष की थी अहल्याबाई को पति-वियोग का दुःख सहना पड़ गया। जिस धैर्य और शान्ति से उसने उस दारुण दुख को सहा, इससे उसकी प्रशंसा और भी बढ़ती है।

जीवन वर्णन

खाण्डेराव की मृत्यु के बाद उनके पुत्र मालीराव को गद्दी पर बैठाया, किन्तु नौ महीने बाद वह भी चल बसा। अब अहल्याबाई को राज्य शासन अपने हाथों में ही लेना पड़ा। जैसा उसने राज्य का सुप्रबन्ध किया उसे देख चकित होना पड़ता है। कुछ दुष्टों के कहे कहाये रघुनाथराव इसका प्रतिद्वन्द्वी बन खड़ा हो गया। किन्तु इसकी बुद्धिमत्ता के आगे उससे कुछ न बन पड़ा और बिना लड़ाई किये ही लौट गया। इसके अतिरिक्त उसके सामने कितनी ही विघ्न-बाधायें उपस्थित हुई किन्तु कोई भी उसे धैर्य से विचलित न कर सकी।

कुछ काल बाद सन् १७९५ में भारत रमणियों की शिरोमणि इस जगत् को छोड़ चल-बसी।

मृत्यु

इसमें कोमलता, दया, सरलता आदि स्त्रियों के गुणों के साथ दृढ़ता, शूरता, साहस आदि पुरुषों के गुण भी भरे थे। इतनी सम्पत्ति को प्राप्त करके भी इसे अहङ्कार छुआ तक नहीं था। धैर्य्य इसमें इतना था कि विपत्ति पर विपत्ति पड़ने पर भी इसका धैर्य्य कभी विचलित नहीं हुआ। पति की मृत्यु के बाद ही पुत्र की मृत्यु, तदनन्तर लड़की के स्वामी की मृत्यु और कन्या का सती होना—ये सब कष्ट उस पर आये किन्तु उसने दिल नहीं तोड़ा।

गुण

स्वधर्म में यह बड़ी दृढ़ थी। इसने अनेक तीर्थों की यात्रा की और लाखों रुपये दान किये। इनपर सैकड़ों मन्दिर, धर्मशालायें, कूप आदि बनवा दिये। इनमें गया का विष्णुपद और काशी का अहल्याबाई का घाट प्रसिद्ध है।

सावित्री, सीता, दमयन्ती आदि पुरातन काल की स्त्रियों के विषय में हम बहुत कुछ पढ़ और सुन कर यही कह देते थे कि अब ऐसी स्त्रियों का होना असम्भव है। अहल्याबाई के जीवन से यह सिद्ध हो गया है कि कालक्रम से ऐसी रमणियाँ होती रहती हैं।

उपसंहार

सावित्री

भूमिका—आदर्शरमणी। पातिव्रत्य में अद्वितीय।

जन्म—मद्रदेशाधिपति अश्वपति का सन्तानाभाव। पुत्रार्थ तपस्या। सावित्री का जन्म। शिक्षा। सौन्दर्य।

विवाह—वरान्वेषण। द्युमत्सेन (अन्धऋषि) के पुत्र सत्यवान् से विवाह करने का निश्चय। नारद से सत्यवान की अल्पायु का ज्ञान। सावित्री की दृढ़ प्रतिज्ञा। अन्धऋषि के आश्रम पर सावत्री-सत्यवान् का विवाह।

जीवन—सास ससुर की सेवा, पति की दीर्घायु के लिये त्रिरात्रिव्रत। सत्यवान् का बन-गमन। उसके साथ बन में सत्यवान् की शिरोवेदना से मृत्यु। यम का सत्यवान् को लेने आना। सावित्री का पीछे २ चल पड़ना। यमसावित्रीसंवाद। ससुर की आंखों से दीखना और राज्यप्राप्ति, अश्वपति के सौ पुत्र और पति की प्राप्ति के तीन वर यम से पाना। सत्यवान् के साथ घर लौटना। सब भेद का खुलजाना।

उपसंहार—चरित्रसमालोचना, पतिव्रता, धैर्यवती, बुद्धिमती, दृढ़ कर्तव्यपरायणा।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

दमयंती, सीता, स्नेहलता।

विवरणात्मक

इतिहास विषयक (Historical)

महाभारत

भूमिका—महाभारत का सब को परिचय। महाभारत पुस्तक में वर्णन।

उसके नायक, स्थान और समय—कौरव और पाण्डव युद्ध। स्थान—कुरुक्षेत्र। कौरव, पाण्डव नायक। समय अनियत, बहुत पुराना।

उसके कारण—दुर्योधन आदि कौरवों की दुर्नीति।

वर्णन—धृतराष्ट्र और पाण्डु दो भाई। पाण्डु राजा बने, इस से धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्योधनादि को ईर्ष्या। पाण्डवों का राज्य, कौरवों का उन्हें द्यूत में पराजित कर निर्वास। निर्वास के बाद महाभारत युद्ध।

परिणाम—१८ अक्षौहिणी सेना में से १० आदमी बचे। पाण्डवों का राज्य।

हानि—भारत का सर्वनाश। भारतीय विद्याओं का लोप, अधःपतन, अनेक कुप्रथाओं का आरम्भ, वर्णसंकरता।

उपसंहार—महाभारत न होता तो भारत और ही होता।

प्रस्ताव

भूमिका

भारत में कौन ऐसा पुरुष होगा जिसे महाभारत के युद्ध के विषय में कुछ मालूम न हो। जिस पुस्तक में इस युद्ध का वर्णन है उसका नाम भी महाभारत ही है। यह पुस्तक संसारभर की पुस्तकों में सबसे बड़ी है। इसके लेखक पुरातन भारतवर्ष के प्रसिद्ध लेखक व्यास ऋषि थे।

युद्ध के नायक, स्थान और समय

युद्ध के मुख्य नायक एक ओर कौरव और दूसरी ओर पांडव थे। पांडवों के मुख्य सहायक श्रीकृष्ण थे। इनके अतिरिक्त भारतवर्ष के सभी योद्धाओं में से प्रत्येक ने किसी न किसीका पक्ष ले रक्खा था। पहले इसकी घटना का मुख्य स्थान हस्तिनापुर रहा है और पीछे इन्द्रप्रस्थ। युद्ध का आरम्भ व समाप्ति कुरुक्षेत्र के मैदान में हुई थी। अभी तक युद्ध के समय का कोई निश्चय नहीं। कोई लोग इस घटना को हुए लाखों वर्ष बताते हैं और कोई हज़ारों। अभी तक इसकी खोज हो रही है और आशा है कि शीघ्र ही कोई न कोई पूरा प्रमाण मिल जायगा।

वर्णन

सुप्रसिद्ध कुरुवंश में धृतराष्ट्र और पांडु दो भाई थे। धृतराष्ट्र जन्मान्ध थे, इस कारण उनके राज्याधिकारी होने पर भी पांडु ही को राज्यगद्दी पर बैठाया गया। धृतराष्ट्र के एक सौ लड़के थे, जिनमें दुर्योधन

सब से बड़े थे। पांडु के पाँच पुत्र थे जिनके नाम युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव थे। पांडु के मरने पर न्यायतः पाण्डवों को गद्दी मिली, पर दुर्योधन इस पर चिढ़ गये। जब उनसे और कुछ न बन पड़ा तो अपने मामा शकुनि के कहे पर उन्होंने कूट पाशों के द्वारा युधिष्ठिर को हराकर उनके चारों भाई तथा अर्द्धाङ्गिनी द्रौपदी को भी दाँव में जीत लिया। दुर्योधन की आज्ञा से उन्हें बारह वर्ष तक बनवास और एक वर्ष गुप्तवास करना पड़ा। बन में उन्हें अनेक कष्ट उठाने पड़े। अन्त में गुप्तवास का एक वर्ष विराट् राजा के यहाँ वेष बदलकर काटा। लौटकर उन्होंने अपने गुज़ारे के लिए दुर्योधन से राज्य का कुछ भाग माँगा। किन्तु दुर्योधन ने एक न सुनी और कोरा उत्तर दे दिया। इससे युद्ध अनिवार्य हो गया। श्रीकृष्ण आदि कतिपय महापुरुषों ने बीच में में पड़कर यह झंझट मिटाना चाहा किन्तु इसका कुछ फल न हुआ। युद्ध की तैरियाँ होने लगीं। दोनों ओर भारतवर्ष के धुरन्धर योद्धा दूर दूर से आ आ कर इकट्ठे होने लगे। प्रतिदिन हज़ारों की हत्या होने लगी। अनेक योद्धा वीरशय्या पर सोने लगे। बालब्रह्मचारी भीष्म, शस्त्राचार्य द्रोण, महावीर कर्ण आदि भारत के रत्न युद्धानल में आहुति हो गये।

परिणाम

अन्त में अठारह अक्षौहिणी सेना में से केवल सात आदमी पांडवों के और तीन कौरवों के पक्ष के बचे, शेष सभी मारे गये। युधिष्ठिर को हस्तिनापुर का सिंहासन मिला। सभी भारतवर्ष विधवाओं के आर्तनाद से गूँज उठा।

हानि

यह युद्ध भारत के सर्वनाश का कारण हुआ है। महाभारत के समय में भारतवर्ष सभी विद्याओं का केन्द्र था, किन्तु जब उन विद्याओं के ज्ञाता ही उस अग्नि में स्वाहा हो गये तो वे विद्याएँ कहाँ से बचतीं! उस

दिनसे हमारा देश उन्नति के उच्चतम शिखर से गिरता २ इस अधम दशा तक पहुँच गया है। उसी समय बाल्यविवाह की कुप्रथा का बीज बोया गया था जो क्रमशः अंकुरित होकर इतना महान वृक्ष बन गया है कि अब इस का उन्मूलन करना असंभव नहीं तो दुः-साध्य अवश्य हो गया है। इस महायुद्ध से नरसंख्या में इतनी कमी होगई कि कई वंशों के बीज तक नष्ट होगए। तभी से वर्ण-संकर पैदा होने लगे।

उपसंहार

यदि यह महाभारत युद्ध न हुआ होता तो भारत की दशा कुछ और ही होती। यदि और कुछ न होता तो कम से कम इसकी यह दुर्दशा तो न होती। आज कल जिन आविष्कारों और कला कौशल को देखकर लोग अचंभे में पड़ जाते हैं, महाभारत की पुस्तक पढ़ने से ज्ञात होता है कि उस समय के लोगों ने इन विद्याओं से कहीं बढ़ चढ़ कर अस्त्र शस्त्र, कलाकौशल की विद्याओं में कमाल कर दिखाया था। यहां तक कि उन में से कई शिलपकलाओं को लोग अब असम्भव और कल्पित कह बैठते हैं।

रामबनवास

भूमिका—रामायण में रामचरित, सब से प्रसिद्ध पुस्तक, हिन्दुओं की दूसरी बड़ी नामी पुस्तक, कर्ता वाल्मीकि, हिंदीरामायण का कर्ता तुलसीदास।

नायक, स्थान, समय—मुख्य नायक राम और रावण, इन के अति-रिक्त अनेक। स्थान—अयोध्या, पंचवटी, लङ्का आदि। समय कई हज़ार वर्ष पूर्व।

कारण—कैकेयी की ईर्ष्या। दशरथ का प्रण। राम का पित्राज्ञा-पालन।

वर्णन—दशरथ के पुत्राभाव, अन्त में चार पुत्र। राम का यौवराज्या-

भिषेकविचार, कैकेयी का राम को चौदह वर्ष का निर्वासन, दशरथ-मृत्यु, राम बनगमन, भरत का राज्य न लेना, पंचवटी में सीता-हरण, सेतु-बन्धन, रामरावणयुद्ध ।

परिणाम—सबन्धु रावण की मृत्यु, सीता का लौटाना, राज्याभिषेक ।

लाभ—रावणवध, पित्राज्ञापालन, भ्रातृभक्ति, पतिव्रताधर्म्म और अनेक गुणों के अद्वितीय उदाहरणों का संसार में प्रस्थापन ।

उपसंहार—रामनाम का भारतवर्ष में आदर, रामचरित से शिक्षा ।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

नलदमयन्ती, ध्रुवतपस्या, प्रह्लाद की ईश्वरभक्ति, राजा हरिश्चन्द्र, राजा शिवि ।

सिपाही-विद्रोह (The Mutiny)

भूमिका—हिन्दुस्थान में सब से भयंकर घटना । हिन्दुस्थानी सैनिकों का ब्रिटिश गवर्नमेंट के प्रतिकूल विद्रोह ।

समय—मई की १० तिथि, वर्ष १८५७ ।

स्थान—मेरठ में प्रारम्भ । पीछे कानपुर, लखनऊ, फ़ैज़ाबाद, देहली, बरेली, मुरादाबाद इत्यादि में ।

कारण—(१) देशी राज्यों को छीन कर अंग्रेज़ी राज्य में मिलाना । (२) नानासाहेब की पेन्शन बन्द करना । (३) रेल, तार, अंग्रेज़ी स्कूल आदि से पुराने लोगों में भ्रम । (४) बन्दूक के टोटे में गाय और सुअर की चर्बी का भ्रम ।

वर्णन—इन कारणों से विद्रोह । कारागारों से कैदियों की मुक्ति । लखनऊ के पुराने मुग़लों को बादशाह बनाना । ख़बर का देहली पहुंचना । वहां बारूद की मेगज़ीन का उड़ाना । कानपुर में ५०

अंग्रेज़ों की हत्या। पंजाब में लार्ड लारन्स की सहायता। नाव में अंग्रेज़ों का डुबोना। कानपुर में नानासाहिब। कानपुर में हेवलाक, अवध में कालिन केम्बल और दिल्ली में निकलसन और हडसन से विद्रोहियों का पराजय। झांसी में लक्ष्मीबाई और तातिया-टोपी का पराजय। १८५९ के अप्रैल से पूर्व सभी विद्रोही हस्तगत और परास्त।

परिणाम—ईस्ट इन्डिया के हाथ से महारानी विक्टोरिया के हाथ भारत का अधिकार। महारानी का घोषणापत्र।

उपसंहार—भारतीय लोगों की राजभक्ति।

प्रस्ताव

आज तक भारत में जितनी घटनायें हुई हैं उन में सिपाही विद्रोह बड़ी भयङ्कर और करुणाजनक थी। १८५७ ई० मई की दस तारीख़ के दिन हिन्दुस्थानी सिपाहियों में अचानक आग सी भड़क उठी जिसे शान्त करना उस समय किसी के हाथ न था। इसी आग में कितने ही अंग्रेजों की जानें आहुति हुईं।

भूमिका

यह आग पहले मेरठ में भड़की और वहीं से चिङ्गारियाँ उड़ कर दूर २ तक फैल गईं। थोड़े काल में ही यह ख़बर एक ओर पंजाब से होती पेशावर तक और दूसरी ओर अवध और छोटे बङ्गाल जा पहुँची। किन्तु विद्रोह का अधिक प्रकोप संयुक्तप्रदेश और देहली में ही रहा। संयुक्तप्रदेश के कानपुर, लखनऊ, फ़ैज़ाबाद, बरेली, मुरादाबाद आदि कितने ही नगरों में यह बड़ी धूम से प्रचण्ड रहा।

स्थान

इस का पहला कारण लार्ड डलहौज़ी की दुर्नीति थी। उस ने भारतीय राजाओं के राज्यों को छीन २ कर उन्हें बृटिश राज्य में मिलना आरम्भ कर दिया था।

कारण

दूसरा अंग्रेज़ी की शिक्षा, और पश्चिम से आये हुए नये नये वैज्ञानिक आविष्कारों से पुरातन विचार के हिन्दू और मुसलमानों के हृदयों में यह भ्रम हो गया था कि अंग्रेज़ी सरकार रेलयात्रा आदि के द्वारा उन्हें धर्मच्युत करना चाहती है। तीसरा यह कि सिपाहियों ने यह समझा कि जो बन्दूकें उन्हें दी जाती हैं उनके टोटे में गाय और सूअर की चर्बी लगी रहती है। इस अन्तिम भ्रम ने सिपाहियों के हृदयों में देर से सुलगती हुई आग में तेल का काम किया।

वर्णन

सब से पहले विद्रोहियों ने कारागारों को तोड़ कर उन में से कैदियों को स्वतंत्र कर दिया। फिर उन्होंने छावनियों पर आक्रमण किया जिस से सभी सिपाही उनके साथी होगये। जो कोई अंग्रेज़ उन्हें मिला उसे मार दिया। जब यह खबर दिल्ली पहुँची तो वहाँ के मुसलमान भी विद्रोह में शामिल हो गये। अंग्रेज़ी अधिकारियों से उस का दमन न होसका, इस लिये बड़ी होश्यारी से उन्होंने बारूद की मेगज़ीन को उड़ा दिया। कुछ दिन बाद यह खबर पंजाब, पश्चिमोत्तर प्रान्त और अवध बङ्गाल तक पहुँची। पंजाब में सर जान लारेन्स ने बड़ी होशयारी से पंजाब के सिक्खों को इस में शामिल होने से रोके रक्खा। कानपुर में लगभग पचास अंग्रेज़ों का बध किया गया। इसके अतिरिक्त सैकड़ों अंग्रेज़ स्त्रियाँ और बच्चे मार काट कर एक कूएँ में फेंक दिये गये। कानपुर की हत्या में नाना साहिब का बहुतसा हाथ था। हेवलाक और आऊटरैब कानपुर से लखनऊ पहुँचे। वहाँ पर आक्रान्त अंग्रेज़ों को बचाया। निकलसन और हडसन ने दिल्ली में विद्रोह का दमन किया। झाँसी में सर हूरोज़ ने लक्ष्मीबाई और तांतियाटोपी को मार भगाया। इस प्रकार दो वर्ष तक यह अग्नि प्रचण्ड रही। अन्त में १८५८ के अप्रैल के पूर्व पूर्ण शान्ति स्थापित हो गई।

इस घटना का यह परिणाम हुआ कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथों से भारत का अधिकार छीन कर महारानी विक्टोरिया के अधिकार में सौंपा गया। अधिकार लेते समय महारानी ने एक घोषणा-पत्र भेजा, जिस में भारतवर्ष की भावी शासननीति की पद्धति दी हुई थी। भारतनिवासी उसे आज तक बड़े आदर की दृष्टि से देखते हैं। जिन जातियों ने विद्रोह किया उन्हें भारतीय सेना में भरती करना बन्द कर दिया और महायुद्ध के समय फिर उन्हें सेना में भरती होने की अनुज्ञा मिली।

परिणाम

विद्रोह के इतना विस्तृत होने पर भी भारतीय जनता ने राजभक्ति का बड़ा परिचय दिया था। भारतीय सिपाहियों ने अंग्रेज़ों से मिलकर इस विद्रोह का दमन किया था नहीं तो अंग्रेज़ों की संख्या इतनी कम थी कि बिना हिन्दुस्तानियों की सहायता के न जाने उनकी क्या दशा होती।

उपसंहार

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

फ्रांस का विप्लव, जलियाँवाले बाग़ की हत्या।

महारानी विक्टोरिया का राज्यकाल

भूमिका—विलियम चतुर्थ के बाद १८३७ की २१ वीं जून को इङ्गलैंड का शासन घोषणापत्र।

संक्षिप्त चरित्र—१८१९ की २४वीं मई को जन्म। एक बर्ष बाद पिता की मृत्यु। १८३७ में रानी बनी।

राज्यकाल की प्रधान घटनायें—इलेक्ट्रिक, टेलीग्राफ का आविष्कार। विक्टोरिया का विवाह।

भारत का शासनाधिकार—कारण सिपाहीविद्रोह, १८५७ में कम्पनीराज्य का अन्त। राज्यकाल १८५७-१९०१ तक।

इनके राज्य में भारत में उन्नति—विज्ञान, कलाकौशल, व्यापार वृद्धि। इनकी पचीस वर्ष के बाद हीरा जुबली।

उपसंहार—राज्य में पूरी शान्ति। प्रजा सुखी।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

अकबर का राज्य, सप्तम एडवर्ड का राज्यकाल।

यूरोपीय महायुद्ध

भूमिका—यूरोप में पहले छिड़कर एशिया और अफ्रीका तक फैला। १९१४ से १९१८ तक रहा।

कारण—जर्मनी की राज्यवृद्धि की लालसा, सर्विया में आस्ट्रिया के राजकुमार की हत्या। यह अवसर पाकर जर्मनी की आस्ट्रिया को सहायता। अंग्रेज़, रूस और फ्रांस की सर्विया को मदद। टर्की का जर्मनी से मेल।

विवरण—पहले बैलजियम और जर्मनी की सीमा पर युद्ध। बैलजियम का कड़ा मुक़ाबला किन्तु पिसजाना। फ्रांस का बड़ा भाग जर्मनी के हाथ। भारतीय फ़ौज की सहायता। निर्बल होकर रूस की जर्मनी से सन्धि। ज़ार की हत्या। अमेरिका का जर्मनी के प्रतिकूल रण में प्रवेश। जर्मनी की हार।

सन्धि—कुछ शर्तों पर लड़ाई बन्द। १९१९ में सन्धि की शर्तों पर विचार। १९२० में हस्ताक्षर। जर्मनी का नीचा देखना। सन्धि की कड़ी शर्तें। कैसर की गद्दी छीनना। जर्मनी, टर्की और आस्ट्रिया को युद्ध का ख़र्च देना पड़ना।

उपसंहार—संसार में हलचल, अशान्ति, व्यापार की दुर्गति, करोड़ों की मृत्यु। विज्ञान के अपूर्व आविष्कार, विशेषकर व्योमयान और सबमैरीन का। लीग आफ़ नेशनूज़ की स्थापना।

१—जीवनचरित (धार्मिक और सामाजिक सुधारक)

बुद्ध

भूमिका—जगत्प्रसिद्धि। पहला नाम सिद्धार्थ।

जन्मकाल, पैतृककुलपरिचय—जन्मतिथि अनिश्चित। लगभग ५६७ ई० से पूर्व। जन्मस्थान कपिलवस्तु। पिता शुद्धोदन, माता मायादेवी।

बाल्यकाल और उस काल की विशेष घटना—वैराग्य, उसका जीवन पर प्रभाव, विवाह।

जीवन का वर्णन— पुत्रजन्म, गृहत्याग, तपश्चर्या, बुद्धगया पर ज्ञान। उपदेश, अहिंसाप्रचार, धर्मवृद्धि।

मृत्यु—कुशीनगर में ४८७ में देहत्याग। भस्म को बांटना। स्तूप, तीर्थस्थान।

उपसंहार—संसार में प्रख्याति। अशोक, हर्ष आदि अनुयायी। चीन जापान में अनुयायी। बुद्ध को अवतार मानना।

प्रस्ताव

भूमिका

कोई ऐसा पढ़ा लिखा न होगा जिसका बुद्ध नाम से परिचय न हो। इनका जन्म-नाम सिद्धार्थ था। पीछे इनका नाम बुद्ध होगया। इनके जन्म की तिथि का अभी तक पूरा निश्चय नहीं मिला। किन्तु बहुत खोज के बाद इतना मालूम हुआ है कि ईसा से लगभग ५६७ वर्ष पूर्व इनका जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम शुद्धोदन था जो उन दिनों में कपिलवस्तु में राज्य करते थे। इनकी माता का नाम माया-देवी था। जब इनकी माता पितृगृह में जा रही थी तो मार्ग में ही लम्बनीनामक बन में इनका जन्म हुआ था। सिद्धार्थ को उत्पन्न हुए अभी थोड़े दिन हुए थे कि मायादेवी चल बसी।

सिद्धार्थ की बुद्धि इतनी तीव्र थी कि छोटी आयु में ही वे सभी कुछ लिख पढ़ गये थे। उन्होंने एक दिन एक साँप पक्षी खाते और पक्षियों को चिऊँटियाँ खाते देखा। इस घटना को देखकर उनके मन में बड़ी चोट लगी। उससे उनके चित्त में यह समा गया कि संसार असार है। इसी विषय पर सोचते विचारते वह घण्टों खर्च कर देते। सिद्धार्थ की यह चित्त-वृत्ति देख शुद्धोदन सदा चिन्तित रहते क्योंकि सिद्धार्थ के बिना उनकी और कोई सन्तान न थी। बुद्ध का विवाह यशोधरानामक राजकुमारी से कर दिया गया। किन्तु इसका सिद्धार्थ पर कुछ असर न हुआ। वे पूर्ववत् चिन्ता-निमग्न रहने लगे।

बाल्यकाल और उस काल की विशेष घटना

एक दिन उन्होंने एक वृद्ध पुरुष को देखा जिसकी बड़ी बुरी दशा थी। कुछ दिन बाद फिर उन्होंने एक मुर्दा देखा। अब सिद्धार्थ से न रहा गया। घर छोड़ कर निकल पड़े। गृहत्याग के समय उनके एक बालक उत्पन्न हो चुका था। पहले वे भार्गव के आश्रम पर गये और कुछ साधुओं के कहने पर वहाँ योगाभ्यास करना आरम्भ कर दिया। वहाँ से चलकर वे अण्डमुनि के आश्रम पर पहुँचे। वहाँ पर विम्बिसारनामक एक नृप ने उन्हें बहुत समझाया और लौट जाने को कहा किन्तु सिद्धार्थ ने एक न मानी। आगे चल कर वे बोधिसत्त्व राजर्षि के आश्रम पर कुछ मुनियों के उपदेश से कठिन तपश्चर्या करने लगे। पूरे छः वर्ष तपस्या करते रहे। इससे उनके शरीर में अस्थियों के बिना कुछ न रह गया था। किन्तु सन्तोष-प्रद शान्ति फिर भी न हुई। एक दिन वहीं पर एक पीपल के नीचे बैठे थे कि उनके हृदय में ज्ञान की रश्मि प्रकाशित होगई। उस दिन से उनका नाम बुद्ध होगया और उस स्थान का नाम 'बुद्ध-

जीवनवर्णन

गया' पड़ गया। उन्होंने उस आनन्दस्रोत में स्नान कर अपने आप को ही संतुष्ट रखना अच्छा न समझा। उनका विचार था कि संसार का भला इसी में होगा कि समस्त संसार को भी इसी ज्योति का दर्शन कराया जाय। उस दिन से उन्होंने अपने धर्म का प्रचार करना आरम्भ कर दिया। उनके धर्म का निचोड़ यही है कि "अहिंसा परमो धर्मः।" धीरे धीरे उनका प्रचार फैलने लगा। लाखों लोग उनके अनुयायी हो गये। उनके पिता, स्त्री और सभी परिवार उनकी तरह भिक्षुक बनकर बौद्ध-धर्म का प्रचार करने लगे।

मृत्यु

एक दिन कुशीनगर में प्रचारार्थ जा रहे थे कि मार्ग में चुन्द नाम लुहार ने उन्हें भोजन खिलाया। उस भोजन के खाने से उन्हें आँव की बीमारी हो गई जिस से कुशीनगर में पहुंच कर ईस्वी सन् से ४८७ वर्ष पहले उनका देहान्त हो गया। उनके शव को ५८० कपड़ों की तह में लपेट कर एक सन्दूक में रक्खा गया। अन्त में उनकी अस्थियों और भस्म को आठ भागों में बाँट कर भूमि में गाड़ा गया और उन स्थानों पर आठ स्तूप बनवाये गये। बौद्धों के लिए चार तीर्थस्थान नियत किये गये—लुम्बिनी, सारनाथ, गया, कुशीनगर।

उपसंहार

संसार में जितने धर्म व संप्रदाय चले हैं उन सबमें बौद्ध-धर्म के अनुयायियों की संख्या बहुत रही है। इनकी मृत्यु के बाद इनके अनुयायियों ने बौद्ध-धर्म का जितना प्रचार किया है शायद ही उतना किसी और ने किया होगा! अशोक, हर्ष जैसे सम्राट् इसी धर्म के प्रचारक थे। आजकल भी चीन, जापान के लोग बहुत बड़ी संख्या में बौद्धधर्मावलम्बी हैं। हिन्दू लोग बुद्ध को अवतार मान कर पूजते हैं।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ।

भूमिका—भारत में बड़े प्रसिद्ध । सामान्य कुल में होकर विख्याति का नमूना ।

जन्मतिथि, पैतृककुलपरिचय—१८२० ईस्वी में वीरसिंह ग्राम (जि० मेदिनीपुर) में जन्म । पिता ठाकुरदास वन्द्योपाध्याय दरिद्र किन्तु उच्च कुल के ब्राह्मण । कलकत्ते में नौकरी ।

बाल्यकाल और उस काल की विशेष घटनायें—प्रथम ग्राम की पाठशाला में प्रविष्ठ होना । ९ वर्ष की आयु में कलकत्ते में संस्कृत कालेज में प्रवेश । लगभग ग्यारह वर्ष तक विद्याध्ययन । बड़े परिश्रमी । सब श्रेणियों में प्रथम । अध्यापक । वहां २० वर्ष की अवस्था में 'विद्यासागर' पदवी की प्राप्ति ।

जीवन का वर्णन—पढ़ना छोड़ते ही फोर्टविलियम कॉलेज में मुख्य पंडित । क्रमशः कालेज के सहकारी अध्यापक, पुनः अध्यक्ष (Principal), संस्कृत ग्रन्थों के लेखक । सहकारी इन्सपेक्टर । तीन वर्ष बाद सरकारी नौकरी छोड़दी । बाकी जीवन देश और समाज के सुधार में बिताया ।

उपकार—बालविवाह, वृद्धविवाह और बहुविवाह के विरोधी । विधवा विवाह के प्रचारक । बङ्गसाहित्य के जन्मदाता । होमियोपैथिक चिकित्सा के प्रवर्तक ।

मृत्यु—७१ वर्ष की आयु में, १८९१ ई० में मृत्यु ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

भूमिका—आर्य-धर्म के पुनरुज्जीवक । आर्यसमाज के जन्मदाता । पहला नाम मूलशंकर ।

जन्मतिथि, पैतृक कुलपरिचय—जन्म १८२४ ई० में, तिथि अनि-

श्रित, जन्मस्थान—काठियावाड़ गुजरात में मोरवी गाँव। पिता का नाम अम्बाशंकर, पैतृक वृत्ति—जमींदारी।

बाल्यकाल और उस काल की विशेष घटनायें—छोटी अवस्था में ही बहुत कुछ पढ़ गये। दसवें वर्ष शिवरात्रि व्रत। एक चूहे का शिवमूर्ति को भ्रष्ट करना। इससे उनका मूर्तिपूजा से विश्वास उठ जाना। उनकी भगिनी और चचा की मृत्यु से उन्हें संसार की असारता पर विश्वास। जब बीस वर्ष के थे तो माता पिता उनका विवाह करना चाहते थे किन्तु उन्होंने गृह त्याग दिया।

जीवन का वर्णन—१४ वर्ष की अवस्था में संन्यास। इधर-उधर से विद्याप्राप्ति। योगाभ्यास। मथुरा में विरजानन्द के शिष्य, गुरु-दक्षिणा। भारतयात्रा। पंडितों से शास्त्रार्थ, हरिद्वार में उपदेश। काशी शास्त्रार्थ। बम्बई में प्रथम आर्यसमाज स्थापन। पंजाब में आर्यसमाज। उनका प्रभाव।

मृत्यु—३० अक्तूबर १८९३ सन् में अजमेर में मृत्यु। दयनन्द-ऐंग्लो-वैदिक-कालिज और गुरुकुल-कांगड़ी उनके स्मारक।

उनके कार्य—मूर्तिपूजा-खण्डन। मृतकश्राद्ध-खण्डन। वैदिक-धर्म का पुनरुज्जीवन। बालविवाह-खण्डन। विधवाविवाह-मण्डन। सामाजिक सुधार। राजनैतिक विचार।

सामयिक घटना

एक सिनमा के थियेटर में अग्निप्रकोप

भूमिका—आग और बिजली का सदुपयोग वा दुरुपयोग।

समय, स्थान—लाहौर में क़िला गुजरसिंह के पास सिनमा के थियेटर में सन् १९२१ के जुलाई मास की १२तारीख़ को रात्रि के बारह बजे।

कारण—बिजली की आग।

विशेष विवरण—जब सिनमा का खेल होरहा था तो बिजली से आग लगी। लोगों का भागना। कर्मचारियों का जानें बचा कर भागना। लोगों में व्यग्रता। आग शान्त करने के उपाय। फायर इंजिन का आना। आग को शान्त करना।

फल—लगभग अस्सी हज़ार की हानि। कतिपय कर्मचारियों को चोट आना।

उपसंहार—ईश्वर की कृपा से कोई दूसरा मकान पास न था। बिजली या अन्य आग से बचने के उपाय।

प्रस्ताव

ईश्वर की सृष्टि में प्रत्येक पदार्थ का सदुपयोग और दुरुपयोग होता है। जितने कार्य्य आग वा बिजली से साध्य हैं उनका कोई ठिकाना नहीं किन्तु इन्हीं से जितनी हानि पहुँचने की भी सम्भावना है उसकी भी कोई सीमा नहीं। आग से समस्त नगर के नगर जल जाते हैं। यही आग एक सिनमा थियेटर के दाह का भी कारण हुई।

भूमिका

लाहौर में रेलवे स्टेशन के पास गुजरसिंह का किलानामक एक छोटासा गाँव है। इसके पास ही एक एम्पायर सिनेमा का भवन था। सन् १९२१ के जुलाई मास की १२ तारीख को रात्रि के बारह बजे उसमें आग लग गई। आग की प्रचण्ड ज्वालाओं से समस्त आकाश प्रकाशित हो गया। शहर के लोग घरों की छतों पर चढ़ चढ़ कर देखने लगे कि अकस्मात् इतना प्रकाश क्यों होगया।

समय, स्थान

भवन में अग्नि प्रवेश का कारण यह था कि जिस बिजली की बैटरी से सिनेमा का यन्त्र चल रहा था उसमें किसी दोष के आ जाने पर यन्त्र को आग लग गई। देखते २ ही आग सभी भवन में फैल गई।

कारण

उस समय खेल प्रस्तुत था। लोगों की भीड़ जुटी थी। इस आकस्मिक दुर्घटना को देख लोग भागने लगे। सब को अपनी २ पड़ी थी। पांच मिनट में सारा भवन खाली होगया। इतने में आग का प्रकोप भी बढ़ गया। जो कर्मचारी लोग यन्त्र पर काम कर रहे थे उनके लिए भागना कठिन होगया। उन में से दो तीन तो चारों तरफ की आग में घिर गये और यदि साहस न करते तो अवश्य वहीं स्वाहा होजाते। उन में से एक ने यन्त्र को बचाने का यत्न भी किया, किन्तु उस अकेले से कुछ न बन पड़ा। जिस किसी से बन पड़ा उसने आग शान्त करने का यत्न किया किन्तु आग का प्रकोप बढ़ता ही गया। दुर्दैवात् उस दिन वायु भी वेग से बह रहा था। उससे भी आग को फैलने में सहायता मिलती रही। इतने में टेली-फोन के द्वारा कमेटीघर को सूचना देदी गई और १० मिनट में फायरइञ्जिन पहुंच गया। फायरइञ्जिन की कोशिश से आध घण्टे में अग्नि शान्त होगई।

विशेष विवरण

इस आग से कम्पनी का लगभग अस्सी हज़ार का नुकसान हुआ। सिनमे का यन्त्र और उस तमाशे की तसबीर जल कर भस्म होगई। इससे अतिरिक्त भवन का बहुत बड़ा भाग और सभी बैञ्चें, कुर्सियां जल गईं। किसी की जान तो नहीं गई किन्तु चोटें कई लोगों को आईं।

फल

ईश्वर की कृपा से जिस स्थल पर यह भवन था उस के इधर उधर समीप और कोई मकान न था, नहीं तो क्या मालूम क्या दशा होती? जिस भवन में बिजली लगी हो वा बिजली से कोई यन्त्र चलता हो उस की रक्षा के लिये विशेष साधनों की आवश्यकता है। सब से पहले तो उसका किसी बीमे की कम्पनी द्वारा बीमा करा कर संरक्षित कर लेना चाहिए।

उपसंहार

एक रेलवे दुर्घटना

भूमिका—रेल के लाभ। किन्तु हानि भी। हानि—गाड़ियों का भिड़ जाना। एक मालगाड़ी और सवारीगाड़ी भिड़ गई।

स्थान, समय—लाहौर और अमृतसर के बीच अटारी के स्टेशन के पास। सन् १९१३ के मई मास की २२ तारीख को।

कारण—स्टेशन मास्टर की असावधानता। उसने मालगाड़ी को आने की आज्ञा देदी जब कि उधर अमृतसर से सवारीगाड़ी छुटी हुई थी।

विशेष विवरण—भिड़ने से धक्का। गाड़ियों में आग। लोगों की दुर्दशा। सैकड़ों की जानें गईं। सैकड़ों घायल हुए। बदमाशों की लूट। लाहौर से सहायता। घायलों को हस्पताल में लाया गया।

फल—गाड़ियों और इंजन के टूटने से लाखों की हानि। पटड़ी टूट गई। दो दिन सड़क बन्द रही, सैकड़ों जानें गईं। हज़ारों रुपयों का नुकसान। एक नवविवाहित युवक का स्त्रीसहित पिस जाना। स्टेशन-मास्टर पर अभियोग। उसे जन्मपर्यन्त काले पानीवास का कड़ा दण्ड।

उपसंहार—ऐसी घटनाओं को हटाने के लिये आने जाने की दो पटड़ियों की आवश्यकता।

१९१६ की बाढ़

भूमिका—वृष्टि न हो तो कष्ट, अधिक वृष्टि हो तो भी दुःख। इसी अधिक वृष्टि के कारण बाढ़ आई।

स्थान, समय—संयुक्त प्रदेश में १९१६ के अगस्त मास में गंगा में भयंकर बाढ़ आई। बनारस, गाज़ीपुर और बलिया जिलों में विशेष प्रकोप।

कारण—अतिवृष्टि ।

विवरण—१५ अगस्त को गंगा का जल बढ़ने लगा। फसल को नष्ट कर दिया। गांव के गांव जल में डूब गये। पशु बहने लगे। घर गिरने लगे। लोगों में हड़कम्पासा मच गया। कृषकों के पास कुछ भी न रहा।

सहायता—सेवासमिति, स्कूल और कालेज के विद्यार्थियों द्वारा सहायता। सरकार की सहायता। सहायता-फण्ड खुल गए।

हानि—अनेक ग्राम, पशु, मनुष्य जल-निमग्न हुए।

उपसंहार—ऐसी बाढ़ आगे कभी नहीं आई थी।

१९११ का देहलीदरबार

भूमिका—भारत वर्ष के लिए बड़ा शुभ दिन। पहली बार भारत सम्राट का हिन्दुस्थान में अभिषेक।

स्थान, समय—स्थान देहली। समय १९११ के दिसम्बर मास की १२ तारीख।

कारण—सम्राट जार्ज पंचम का अभिषेक।

विवरण—भारतीय राज्यों के सभी शासकों की उपस्थिति। हाथी पर बैठ कर महाराज की मण्डप की ओर यात्रा। लोगों का स्वागत। जलूस को दरबार भवन में पहुँचते चार घंटे लगे। बाज़ार की सजावट। दर्शकों की भीड़। पोलीस का इन्तज़ाम। लार्ड हार्डिंग की वक्तृता। दरबार में लोगों के लिए स्थान। रात्रि में दीपमाला और आतिशबाज़ी।

फल—बन्दियों की स्वतन्त्रता। बंगाल-विभाग का तोड़ना, ५००००००) रु० का शिक्षा के लिए दान।

उपसंहार—भारतीय लोगों का हर्ष और उत्साह।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

एक गृह में चोरी। विक्टोरिया की १८९७ की रत्न-जुबली। लाहौर की प्रदर्शिनी। एक आंधी। १८९७ का भूकम्प। लाहौर की कांग्रेस का अधिवेशन। एक दुर्भिक्ष। एक जहाज़ का डूबना।

संस्था, प्रथा (Institutions and customs)

पार्लियामेंट (British Parliament)

भूमिका—"पार्लियामेंट" शब्द फ्रेंच भाषा के एक शब्द से बना। अर्थ "मैं बोलता हूँ" जाति की प्रतिनिधि सभा।

विवरण—राजा, प्रजा और धनिकों के सम्मिलित अधिकार में। तीन भाग—राजा, धनिकसभा, जनतासभा। धनिकसभा राजा से और जनतासभा प्रजा से निर्वाचित। पार्लियामेंट में पास किये नियमों की राजाद्वारा स्वीकृति।

इतिहास—पार्लियामेंट के इतिहास में ब्रिटिशजाति का सारा इतिहास आ जाता है। इसका पूर्व रूप सैक्सनों का "विटेनजिमो" नाम पार्लियामेंट, मैग्नाचार्टा। प्रथम जनतासभा सन् ११२५ में। इस का ज़ोर बढ़ता रहा। १५८८ सन् का विप्लव।

स्वरूप—१९ वीं शताब्दी में पूर्णरूप में, प्रतिनिधि-संख्या। पहले धनिकों का प्रभाव बढ़ा हुआ। पीछे प्रजा का बढ़ गया।

कर्तव्य—इस के कर्तव्य-नियम बनाना, कर लगाना, खर्च पर अधिकार इत्यादि, शासन का कार्य कैबिनेट के हाथों में।

उपकार—इससे जाति का स्वराज्य सुरक्षित रहता है। प्रजा के मतानुसार अभ्युदय।

उपसंहार—ब्रिटिश पार्लियामेंट अन्य पार्लियामेंटों की जननी। जहां यह नहीं वहां यत्न से इसे प्रचलित करना चाहिए।

प्रस्ताव

भूमिका

'पार्लियामेण्ट' शब्द फ्रेञ्च भाषा के (Parlor) शब्द से निकला है। इस का अर्थ 'मैं बोलता हूँ' है। इस लिए 'पार्लियामेण्ट' शब्द का अर्थ 'तर्क वितर्क' है—अर्थात् वह संस्था जिस में तर्क वितर्क से से फैसला होता है। किसी जाति के प्रतिनिधियों की सभा को पार्लियामेण्ट कहते हैं। ब्रिटिश पार्लियामेण्ट इङ्गलैण्ड, स्काटलैण्ड और आयर्लैण्ड के निर्वाचित प्रतिनिधियों की सभा है।

विवरण

इस के तीन अङ्ग हैं। राजा, प्रजा और धनिक जन। इसलिए यह तीनों के अधिकार में है। धनिकों को निर्वाचित करना राजा का काम है किन्तु प्रजाजन स्वयं अपने में से योग्य व्यक्तियों को बहुमत से चुनकर पार्लियामेण्ट में भेजते हैं। केवल राजा ही पार्लियामेण्ट की बैठक बुला सकता है व उसे बन्द कर सकता है। धनिकों की संख्या प्रायः घटती बढ़ती नहीं, किन्तु प्रजा के प्रतिनिधि संख्या में बढ़ते जाते हैं। पार्लियामेण्ट जिन नियमों को पास करे उन का राजा द्वारा प्रमाणित होना आवश्यक है।

इतिहास

पार्लियामेण्ट का इतिहास लम्बा और जटिल है। इसे सारी ब्रिटिशजाति का ही इतिहास कहना उचित है। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि ब्रिटिशजाति नष्ट भ्रष्ट हो जाय यदि इसकी पार्लियामेण्ट न रहे। इङ्गलैण्ड में जो पहले पहल पार्लियामेण्ट प्रस्थापित हुई थी वह सैक्सनों के ज़माने में 'विटेन जिमोट' नाम सभा थी। पीछे इस में कुछ अदल बदल होता रहा। १२१५ में मैगनाचार्टाद्वारा यह प्रमाणित हो गई। इसका पार्लियामेण्ट नाम रखा गया और इस से सभी शासन का कार्य्य होने लगा। सन् १२६५ में जनता

सभा (House of Commons) की पहली बैठक बैठी। उस दिन से इस का प्रभाव बढ़ता गया किन्तु धनिकों के प्रभाव में साधारण प्रजा की अपेक्षा अधिक बृद्धि होती रही। १६८८ के विप्लव के बाद इसका प्रभाव और भी बढ़ गया।

१९ वीं शताब्दी में इस में कुछ और परिवर्तन कर दिये गये। उस दिन से यह प्रजाजनों की पूर्ण प्रतिनिधि हो गई है। अब धनिक सभा का प्रभाव बहुत घट गया है और जनतासभा की दिनों दिन बढ़ती है।

वर्तमान स्वरूप

केवल इसी के द्वारा ही नये नियम बनते और किसी नियम में घटाव बढ़ाव हो सकता है। बिना इस के कोई प्रजा पर टैक्स नहीं लगा सकता। जाति के कोष पर इस का पूरा अधिकार है। बाहिर के राष्ट्रों से कैसा व्यवहार होना चाहिये, संधि तथा विग्रह किस २ के साथ रहना चाहिये, इत्यादि बातों का निर्णय करना इसी के हाथ में है। प्रजा के निर्वाचित सभासदों में जिस पक्ष के प्रतिनिधियों की संख्या अधिक हो उनके नेता को राजा प्रधान मंत्री बनाता है और वह (प्रधान मन्त्री) अपनी मर्ज़ी से अन्यान्य मन्त्री चुन लेता है। इसे कैबिनेट कहते हैं। राष्ट्र का शासन इसी के द्वारा होता है।

कर्तव्य

पार्लियामेण्ट जाति के स्वराज्य को सुरक्षित रखती है। प्रजा जैसा चाहे अभ्युदय करने में स्वतन्त्र है। किसी एक व्यक्ति पर राज्यसत्ता का निर्भर नहीं होता।

उपकार

ब्रिटिश पार्लियामेण्ट को पार्लियामेण्टों की जननी कहते हैं। कारण यह कि जितनी अन्य प्रतिनिधि संस्थायें हैं सभी इसके पीछे बनी हैं और थोड़े बहुत अंशों में इसी का अनुकरण हैं। राष्ट्र के शासन के लिए यह सब से उत्तम संस्था मानी गई है।

उपसंहार

जहां पर यह न हो वहां इसके प्रतिष्ठापन करने का उद्योग करना चाहिए ।

दासक्रय-विक्रय

भूमिका—दासों का व्यापार सभ्यता के प्रतिकूल। किन्तु बहुत पुराने समय से प्रचलित । समाज में दासों का नीच पद ।

पुरातन इतिहास—एथॅन्स और स्पार्टा देशीयों की जब बढ़ती थी तो क्रीत दासों की संख्या स्वतन्त्र पुरुषों से बहुत ज़्यादा । रोम के बाज़ारों में इनके क्रय विक्रय का व्यापार ।

नवीन इतिहास—१५ शताब्दी में स्पेन और पुर्तगाल में हबशियों का व्यापार, इसी शताब्दी के आरम्भ में स्पेन और अमरीका में दासों का व्यापार । १७ वीं शताब्दी में इंगलैण्ड में इस व्यापार का ज़ोर ।

समाप्ति—पहले पहल क्केकरोंका इसके विरुद्ध आन्दोलन। १७८३ में पार्लियामेंट में इस व्यापार के रोकने का प्रस्ताव । अन्त में मा० शाप, नक्स्टन, फिलिप्स आदि के उद्योग से इंगलैण्ड और अमरीका में इसका बन्द होना । १८३३ में अंग्रेज़ी पार्लियामेण्ट ने सभी राष्ट्र में दासव्यापार बन्द कर दिया । १८६४ में अमरीका ने भी चालीस लाख दासों को स्वतन्त्र कर दिया । कई अर्धसभ्य देशों में अब भी यह प्रचलित है ।

उपसंहार—अचम्भा है कि इतनी देर तक यह कैसे चल सका । इससे लोगों की स्वार्थता और अमानुषिकता पाई जाती है ।

बाल्यविवाह

भूमिका—हिन्दुओं में प्रचलित। बहुत बुरी प्रथा । वर-बधू का विवाह से अपरिचय ।

मूलकारण—पुरातन महाभारत युद्ध में पुरुषों की मृत्यु के कारण शीघ्र सन्तानोत्पति की अभिलाषा। आधुनिक प्रचार मुसलमानी राज्य में। दुराचार से बचने के लिए कन्याओं को युवती होने से पूर्व ही विवाह देना। पर्दा भी इसी कारण और समय से प्रचलित। पौत्रमुख देखने की लालसा। उसी काल के ग्रंथों में कपोल कल्पित प्रमाण। बंगाल और संयुक्त व मध्य प्रदेश में अधिकता।

कल्पित दोष—बड़ी कन्या के कुल में रहने से कलंक। युवा जोड़े का विवाह में प्रेम नहीं होता। इनके उत्तर में यही कहना पड़ता है कि पश्चिम में युवा जोड़ों का विवाह होता है और इनमें कोई दोष नहीं। पुरातन समय में स्वयम्वर विवाह। बालिका श्वशुरगृह में कुछ काम नहीं कर सकती।

बालविवाह से हानि—शास्त्रीय ब्रह्मचर्य का भंग, लड़कों की पढ़ाई में बाधा। दुर्बल शरीर, निस्तेज मुख। उनकी सन्तान अति दुर्बल और क्षीण। लड़के की पिता की आमदनी पर निर्भरता। कुटम्ब में कलह।

शारदाबिल—१४ वर्ष की लड़की १८ वर्ष का लड़का।

उपसंहार—अब कुछ परिवर्तन। उपयुक्त विवाह कम से कम समय १६ वर्ष की कन्या और बीस वर्ष के लड़के का।

डाकविभाग

भूमिका—सब का परिचित। इस के द्वारा सभी संसार एकसूत्र में बद्ध।

इतिहास—प्रथा पुरानी। पुरातन काल में व्यष्टि रूप में। मुसलमानों के राज्य में घोड़ों पर। इस से अधिक व्यय, समय ज़्यादा। पुराने इंगलैंड में भी ऐसी ही दशा, मा० क्रामवेल का सुधार। १४३० से और सुधार। भारत में लार्ड डलहौसी के समय से प्रचलित।

शाखायें—चिट्ठी पत्री भेजने की शाखा। मनीआर्डरविभाग। सेविंगबैंकविभाग। रजिस्ट्रेशनविभाग। कुनैन बेचने का विभाग।

लाभ—दूर होने पर भी पत्रद्वारा समीप। आवश्यकता पर रुपये भेजना। रुपये जमा करा देना। मिलकर काम से बहुलाभ की शिक्षा। समाचारपत्र सुलभ।

उपसंहार—कार्यायल का काम बड़ी सावधानी से। डाकविभाग के अभाव से सभ्यता को हानि।

समाचारपत्र

भूमिका—नियत तिथियों पर भिन्न २ देशों के वृत्तान्त छाप कर लोगों तक सुलभ करने के साधन। इन में अनेक विद्वानों के अन्यान्य विषयों पर निबन्ध।

भेद—दैनिक, अर्धसाप्ताहिक, साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक और वार्षिक।

लेखक—कई पुरुष, परन्तु सम्पादक एक दो।

उद्देश्य—राजनैतिक विचारों को प्रजा तक पहुँचाना। सामाजिक सुधार के विषय में आन्दोलन। समाचार। सम्पादक के विचार। राजनैतिक सुधार के लिए आन्दोलन। सभ्य देशों के संवादों से परिचय। व्यापारिक विज्ञापन। कांग्रेस, सभा समाज की कार्यवाही। अन्यायी अधिकारियों की कड़ी समालोचना।

इनका प्रभाव—जो सुधार चाहें करा छोड़ते हैं। उदाहरण—बंगभंग, अमृतसर की नरहत्या-आन्दोलन। रौलटबिल विरोध।

इतिहास—पहला समाचारपत्र देहली में निकला। महारानी अलिज़बिथ के काल में पहला पत्र इंगलेंड में। भारत में इंडिया गज़ट नाम सरकार की ओर से १७४९ में।

उपसंहार—कई पुरुषों को इसके पढ़ने की लगन। मन बहलाव का साधन। कई पत्रों का व्यक्तियों से सम्बन्ध और कई का अन्यान्य समाजों से। इङ्गलैण्ड में लिबरल, लेबर और कन्सरवेटिव पक्षों के पत्र। भारत में नर्मदल, गर्मदल, कांग्रेस पार्टी के पत्र।

प्रदर्शिनी (Exhibition)

भूमिका—जहाँ पर अन्यान्य जातियों की कला कौशल के नमूने और आविष्कार दिखलाए जाते हैं। प्रथम प्रदर्शिनी इंगलैंड में १८५१ में। भारत में सब कांग्रेस अधिवेशनों के साथ। अन्य यूरोपीय राष्ट्रों में बड़ा प्रचार।

उपकार—एक दूसरे का माल देखकर अपनी उन्नति की अभिलाषा। आविष्कारों में एक दूसरे से बढ़ जाने की दौड़। व्यापारवृद्धि। देशीय आमदनी। अन्य देशों पर प्रभाव।

सफलता के साधन—अध्यक्ष और संचालक अच्छे योग्य पुरुष। उत्तम माल बनाने वालों को पारितोषिक। राजकोश से व्यवसायियों को रुपया करज़ देकर शिल्पवृद्धि।

उपसंहार—भारत का व्यापार परतंत्र। प्रदर्शिनियों के द्वारा इसको बढ़ाना चाहिए।

नाटक—(THEATRE)

भूमिका—अर्थ—जहाँ अभिनय का खेल किया जाय। शृङ्गार, हास्य और करुणा-रस प्रधान खेल। स्वांग बनाकर पात्रों की सजावट।

विवरण—रंगशाला, नेपथ्य, पड़दे, दर्शकों के लिये भिन्नश्रेणी के स्थान, पड़दा गिरना, अंक, समाप्ति।

पुराना इतिहास—बहुत पुराने समय से प्रचलित। प्राचीन भारत में

नाटकों का प्रचार। महाकवि भास के नाटक और भरत मुनि का नाट्यशास्त्र-विषयक परिश्रम तथा उसके अनन्तर यूनान में इसका प्रचार। पश्चात् अन्यान्य देशों में बड़े बड़े साक्रेटीस और सिसरो जैसे भद्र पुरुष अभिनय करते थे। इङ्गलैण्ड में शुभगुणों के दिखाने के लिए चर्चद्वारा प्रचलित, शैक्सपीयर व मिल्टन के नाटक। शैक्सपीयर स्वयं पात्र। भारत में सबसे पुराना। भारत का नाट्यशास्त्र सबसे पुराना। बहुत पुराने ग्रंथों में इसका ज़िकर। कालिदास, भवभूति के नाटक। पीछे देशी भाषा के नाटक। यूरोपीय तरीके पर। यह संस्था आज कल कम्पनियों के हाथ। इङ्गलैण्ड में प्रत्येक यूनीवर्सिटी के साथ।

लाभ—सुनने वालों का हृदय जैसा खेल हो वैसा उमड़ उठता है, मालूम होता है कि सब कुछ असली रूप में हो रहा है। अच्छे कामों का परिणाम सुख और बुरे कामों का दुःख—यह शिक्षा, मनबहलाव। समाज में सुधारक।

हानि—नाटक देखने की बुरी आदत। शृङ्गार रस के गीत और स्वांग देखकर आचार का बिगड़ना, बुरा सङ्ग। लोग केवल मन बहलाने जाते हैं, शिक्षा के लिए नहीं।

उपसंहार—सभी बुराईयों को दूर करदें तो अति लाभप्रद। यदि भले पुरुष स्कूलों में अच्छे सदाचारी लड़के और अध्यापक भाग लें तो सुधर जावेंगे।

यूनीवर्सिटी

भूमिका—एक संस्था जिसके अधीन कालिज हों, और जिसका कर्तव्य उच्च शिक्षा दान व परीक्षा देकर उच्च डिग्री देना।

उत्पत्ति—सर्वप्रथम भारत में यूनिवर्सिटियों का दूसरे रूप में प्रचार यथा (नालन्दा विश्वविद्यालय), इसके अनन्तर अन्य देशों में

अधिक सुव्यवस्थित रूप, इनकी उत्तरोत्तर अभिवृद्धि, अब भारत में यथा कलकत्ता, मद्रास, बाम्बे यूनीवर्सिटियाँ १८५७ में बनीं, पंजाब और अलाहाबाद की पीछे। तदनन्तर हिन्दु व मुसलमानों के प्रयास से बनारस में हिन्दू-यूनीवर्सिटी, अलीगढ़ में मुसलिम यूनिवर्सिटी, पीछे ढाका, लखनऊ, आगरा, नागपुर में, ये सभी विलायत की आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज के अनुकरण।

प्रबन्ध—सिण्डिकेट कार्यवाही करती है। सेनेट का अधिकार, चान्सलर प्रायः प्रान्ताध्यक्ष, वाइसचान्सलर, रजिष्ट्रार आदि कार्यकर्ता।

प्रकार—दो प्रकार की, शिक्षा-प्रधान और परीक्षा-प्रधान। हिन्दू-यूनीवार्सिटी, ढाका, लखनऊ आदि शिक्षा-प्रधान, अन्य परीक्षा प्रधान।

उपकार—उच्च शिक्षा की उन्नति। सभी उच्च शिक्षाओं को एक सूत्र में बांधना। विद्यार्थियों में एक दूसरे से बढ़ने की दौड़।

हानि—इसकी उन्नति से शिल्प की उन्नति की ओर ध्यान कम।

उपसंहार—इस कमी को हटाने का उद्योग। पुराने ढंग की यूनिवर्सिटिओं के स्थान में नये ढंग की का स्थापन।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—म्यूनिसिपैल्टी, विधवाविवाह, अछूत-प्रथा, स्त्रियों का पड़दा, उपनयनसंस्कार, विवाहसंस्कार, रक्षाबन्धन, सेविंगस् बैंक।

अविष्कार और शिल्प-कला ।

(Invention, art and manufacture)

वाष्पयंत्र ।

भूमिका—वाष्प और सभ्यता का सम्बन्ध । इससे मानुषी शक्ति की सहायता ।

इतिहास—हीरो साहब की खोज । १६१५ में फ्रांस-इंजिनियर का कुओं से जल निकालने के लिए वाष्पयंत्र का उपयोग । मार्क्विस ऑफ़ आर्चेस्टर की छानबीन । सर जेम्सवाट की उन्नति । जार्ज स्टीफनसन द्वारा इसका रेलवे-इंजिन में उपयोग ।

उपकार—सभी कलों में इसका उपयोग । जहाज़, रेल आदि में प्रयोग ।

उपसंहार—भारत में इसका प्रयोग कम ।

प्रस्ताव

भूमिका

एक अँगरेज़ी विद्वान ने कहा है कि शिल्प, कला आदि का बढ़ता हुआ प्रचार सभ्यता का लक्षण है । यह सर्वांश में ठीक है । कला आदि की सहायता के बिना मानुषी शक्ति से सभी धन्धों का चलते रहना असम्भवसा होगया है । जितना काम हज़ारों पुरुष अपने शरीर से पसीना निकाल कर दिन भर में कर सकें उतना एक कला द्वारा कुछ घंटों में तैयार हो जाता है । वाष्प में कलाओं की संचालनशक्ति है । यदि इसे कला मशीनों के प्राण कहा जाय तो अयोग्य नहीं ।

इतिहास

ईसा के १३० वर्ष पूर्व सिकन्दरियानिवासी हीरा साहब ने एक यन्त्र बनाया जो कि भाप की शक्ति से चलता था । इसके अनन्तर इसकी ओर किसी का विशेष ध्यान नहीं आकर्षित हुआ । १५५३ सन् में स्पेन के एक कप्तान ने एक जहाज़ बनाया जो कि भाप से

चलता था, किन्तु इसमें उसे विशेष सफलता न मिली । १६१५ में फ्रांस के एक इन्जिनियर ने भाप के प्रयोग से एक कुएँ से पानी निकाला। इसके बाद इसकी ओर लोगों का कुछ ज़्यादा ध्यान आकर्षित होने लगा और इसमें दिनोंदिन उन्नति होने लगी। मार्किस् आफ् अर्चेस्टर का भी इसमें कुछ हाथ था किन्तु विशेष उन्नति करने का सौभाग्य सर जेम्स वाट को ही मिला। उसके पास एक दिन एक इंजिन मरम्मत के लिए लाया गया। उसके विषय में खोज करते २ उसने १७६५ में एक इंजिन बना डाला जो भाप से चलने लगा । सर जेम्सवाट ने एक दिन आग पर रक्खी हुई देगची के ढक्कन को भाप की शक्ति से उछलते देखा । इसी से उसको भाप का ज्ञान हो गया। यह होते हुए भी सर जेम्सवाट ने भाप का कोई ज़्यादा प्रयोग नहीं किया । तब से इसका अधिक प्रयोग होने लगा है, जब से इससे रेलगाड़ी चलाने काम लिया गया । जार्ज स्टीफनसन ने सब कमी को पूरा कर संसार भर को अपना कृतज्ञ बना लिया है । १८३० में उन्होंने एक राकेट नाम इंजिन बनाया जो एक घंटे में उनतीस मील की यात्रा कर सकता था । इसके बाद रेलगाड़ियाँ चलने लगीं और पृथ्वी पर रेल की पटड़ी का जालसा बिछ गया। इसके पीछे भाप का प्रयोग अनेक तरह की कल मशीनों में होने लगा।

उपकार

भापके उपकार इतने हैं कि उनका नाम लिखते ही सैकड़ों पृष्ठ लिखे जायँ। क्या कोई रेलगाड़ी के उपकार भूल सकेगा ? हज़ारों कोसों का अन्तर इसकी कृपा से कुछ घंटों में ही कट जाता है। क्या किसी के मन में विचार तक उठ सकता था कि जिन देशों को प्रकृति देवी ने समुद्र द्वारा वियुक्त कर दिया है वे कभी संयुक्त होंगे ? जिधर देखें आज कल भाप का ही राज्य है। कपड़े की कल, आटा दाना पीसने

की मशीन, लोहा ढालने का यन्त्र और कई अन्य व्यवसायों की कलें भाप से ही चलती हैं। भाप ने वाणिज्य और शिल्प में नया युग उपस्थित कर दिया है।

भारत में इसका इतना उपयोग नहीं होता जितना पश्चिम में, तभी तो भारत उन्नति की दौड़ में इतना पिछड़ा हुआ है। निर्धनता ने यहां पर मानो पक्का डेरा डाल रखा है। किन्तु यदि भारत ने जीवित और स्वाधीन रहना है तो यह वाष्पप्रयोग में उदासीन नहीं रह सकता।

उपसंहार

मुद्रण-कला

भूमिका—प्रसिद्ध। मसी से पत्र पर लिखने की कला, साहित्य का मनुष्य जीवन से सम्बन्ध।

इतिहास—एसीरिया और बेबीलोन में ईंटों पर खुदे अक्षर। चीन में ईसा से एक शताब्दी पूर्व लकड़ी के ब्लाक से छपाई। बहुत समय तक यूरोप में भी इसी तरह। १४३९ में लारेन्स कस्टर ने सिक्के का टाइप और छापने की कल का आविष्कार किया। १४७१ में लण्डन में पहला मुद्रणयन्त्र स्थापित, फिर दूसरे रोम, पेरिस आदि देशों में प्रचार, उन्नति में जर्मनी का विशेष हाथ, शफर नामक धातु के अक्षर ढालना शुरू किया और स्टोन होप ने छापने की कल बनाई, १८१४ में इङ्गलैण्ड के 'टाइम्स' नामक पत्र के छापने के लिए पहली बार वाष्प का प्रयोग जिससे एक घंटे में २००० पृष्ठ छपते थे, इसके बाद मुद्रण के लिए बिजली का प्रयोग, एक घंटे में ३०००० पृष्ठों की छपाई। अब तो अक्षरों को कम्पोज़ करना, स्याही लगाना, काग़ज़ काटना, काग़ज़ रखना, छापना, उठाना एक ही मशीन से हो जाता है।

उपकार—मुद्रण-कला के अभाव में कष्ट। सैकड़ों वर्षों में किसी एक

ग्रंथ का लिखा जाना फिर उसका भी दूसरों को दुर्लभ होना, समाचार पत्रों के अभाव की पूर्ति, साहित्य की उन्नति, संसार में एक घंटे में हज़ारों पुस्तकें छपती हैं। कोई बात छिपी नहीं रहती।

कागज़ बनाना

भूमिका—मनुष्य शक्ति का अद्भुत चमत्कार। इसका संसार में प्रयोग, इसका सभ्यता से सम्बन्ध।

इतिहास—पुरातन समय में इसके स्थान में भारत और ईरान में पत्ते और वृक्षत्वचा का प्रयोग। फिर भूर्जपत्र पर पुस्तक लिखना इस लिए संस्कृत में कागज़ को पत्र (पत्ता) कहते हैं। कई इसकी आदि भूमि भारतवर्ष और कई चीन बताते हैं। संस्कृत के बहुत पुराने ग्रंथों में इसका उपयोग। अरब, ईजप्ट, स्पेन आदि में बहुत पीछे प्रचार, यूरोप में रोम के बादशाह फ्रेड्रिक दूसरे के काल में कागज़ बना, उनीसवीं शताब्दी में अच्छा कागज़ बनने लगा।

बनाने की बिधि—चिथड़े, सन, घास आदि को साफ़ कर उनकी बुकनी बनाना। उसका मसालों से मांड़ बनाना। चूना मिला कर उसे साफ़ करना। फिर उसे बड़े बड़े साँचों में ढालना, उसमें से पानी सूखकर कागज़ बन जाता है। एक प्रकार की सरेस लगाने से स्याही नहीं फैलती, कलों के द्वारा उनकी लंबाई चौड़ाई काटना।

प्रकार—कई प्रकार—रंगीन, सफ़ेद, पतला, मोटा, ग्लेज़, स्याहीचूस, हलका, भारी इत्यादि।

उपकार—पुस्तक, समाचारपत्र छापना। सभ्यता का इससे सम्बन्ध। शिक्षाप्रचार का साधन। डिब्बे आदि कई पदार्थ बनाना।

उपसंहार—भारत में इसकी कलें। किन्तु सफाई दूसरे देशों से कम। शोक है कि जो इस की आदिभूमि मानी गई है वहीं पर इसकी

न्यूनता। बांस से इसके बनाने का मसाला निकालने का विचार। भारत सरकार को इसकी उन्नति में प्रजा का हाथ बटाना चाहिये।

फोटोग्राफ़

भूमिका—जगत में एक चमत्कारिक आविष्कार। एक विशेष प्रकार से तैयार किये हुए शीशे पर प्रकाश के प्रभाव से किसी वस्तु का प्रतिविम्ब पड़ कर उसकी तसवीर खिंच जाना।

सामग्री—(केमरा) जिस में शीशा लगा रहता है और जिससे होकर वस्तु का प्रतिविम्ब पड़ता है। (लैन्स्) शीशा जिसमें से प्रति बिम्ब होकर प्लेट पर पड़ता। लैन्स् जितने साफ होंगे उतना प्रतिबिम्ब अच्छा होगा। (प्लेट) शीशा जिस पर प्रतिबिम्ब पड़ कर तसवीर खिंच जाती है। प्लेट जितना शीघ्रग्राही होगा उतना कम समय लगेगा और तसवीर अच्छी होगी।

उन्नति—पहले पहल शीशे पर प्रतिबिम्ब पड़ने के लिए बहुत देर लगती थी किन्तु आज इतना परिष्कार हो गया है कि एक क्षण में तसवीर खिंच जाती है। इसमें यहाँ तक उन्नति हो गई है कि चलते-फिरते पदार्थों की तसवीरें उसी क्रम में दिखायी जायँ तो वही दृश्य ज्यों का त्यों चलता हुआ दिखाई देने लगता है। इसे सिनेमेटोग्राफ़ कहते हैं।

उपकार—नक्षत्रविद्या का बड़ा उपकार। जो नक्षत्र दूरबीन द्वारा नहीं दिखाई देते उनका प्रतिबिम्ब फोटोग्राफ के केमरे पर साफ पड़ता है। मित्रमण्डली की इकट्ठी तसवीर, मृत सम्बन्धियों के मुख-दर्शन। यात्रियों के लिए आवश्यक।

कथा कहानी

उदर और अवयव

भूमिका—कहानियाँ कई तरह की। रोचक, शिक्षाप्रद इत्यादि।
वर्णन—अवयवों का परस्पर विचार। उदर को भोजन देना बन्द करना, अवयवों की शिथिलता।
परिणाम—अपने कुविचार का फल।
शिक्षा—एकता से रह कर परस्पर सहायता।

प्रस्ताव

भूमिका

कहानियाँ कई तरह की होती हैं। कुछ ऐसी होती हैं जिनका सम्बन्ध किसी अंश में इतिहास से रहता है। कई होती तो कल्पित हैं, किन्तु बड़ी रोचक होती हैं। बहुत सी ऐसी होती हैं जो सच्ची तो न हों किन्तु बड़ी शिक्षाप्रद हों। यह कहानी अन्तिम प्रकार की है।

वर्णन

एक समय शरीर के सभी अवयवों ने इकट्ठे होकर एक सम्मेलन किया, जिसमें यह प्रस्ताव उपस्थित हुआ कि उदर निखट्टू है, उसका पालन-पोषण बन्द कर दिया जाय। हाथों ने कहा कि—'हमें परिश्रम करना पड़ता है। एक तो भोजन बनाते हैं और दूसरा उठाकर उदर के लिए मुख में डालते हैं। पाँओं ने कहा—'देखो, हम कोसों चलते हैं। कई बार निरन्तर चलने से छलनी हो जाते हैं तो भी कष्ट उठाकर भी इसके लिए खाना लाते हैं और यह खाने के अतिरिक्त कोई काम नहीं करता। मुख बोला—'मुझे खाना चबाने में इतना कष्ट होता है कि कुछ कहा नहीं जा सकता!' निदान प्रत्येक अवयव ने उदर को निष्क्रिय ठहराने के लिए कुछ न कुछ कहा ही। अन्त में यह ठहराया गया कि आज से उदर के लिए कोई काम न किया जाय। निदान सब अवयवों ने अपना २ कर्त्तव्य छोड़ दिया।

परिणाम यह हुआ कि उदर में कुछ न पड़ने से सभी अवयव दुर्बल होने लगे। हाथों में पकड़ने तक की शक्ति न रही, पाँव चलने फिरने से रह गये, आँखों से दिखाई देना बन्द होने लगा। अन्त में जब सबका ऐसा ही हाल हो गया तो उनको अपनी मूर्खता का ज्ञान हुआ और पूर्ववत् अपना २ कर्तव्य कर उदर में अन्न डालने लगे। फिर क्या था! कुछ दिनों में ही वे पूर्ववत् पुष्ट और बलिष्ठ हो गये।

परिणाम

शिक्षा—एके में अपना अपना कर्तव्य पालने से सब हित सिद्ध होता है।

नेपोलियन और चित्रकार

भूमिका—सच्ची और शिक्षाप्रद कहानी।

वर्णन—एक चित्रकार का सन्देश लेकर नेपोलियन के पास आना। उसके मैले कुचैले कपड़े देख कर नेपोलियन को उसे दूर आसन देना। अन्त में नेपोलियन को उसका अद्वितीय चित्रकार होना विदित होना। जाते समय नेपोलियन का उठ कर उसे आदर से विदा करना। चित्रकार के पूछने पर कि आते समय मेरा आदर न करके आपने जाते समय क्यों इतना आदर किया नेपोलियन ने उत्तर दिया कि जो किसी का आते समय आदर होता है वह उसकी बाहरी तड़क-भड़क, कपड़े-लत्ते देख कर होता है और जाते समय उसके गुण देख कर होता है।

शिक्षा—बाहरी सजाव से इतना आदर नहीं होता जितना गुणों से।

यात्रा व भ्रमणवृत्तान्त

भूमिका—यात्रा के पूर्व का वृत्तान्त।

तिथि, किस स्थान से—श्रावण की तीसरी तिथि को लाहौर से चला

और बम्बई में उसी महीने की पांचवीं को पहुँच गया।

कारण—विलायत में शिक्षार्थ जाना।

वर्णन—लाहौर स्टेशन से टिकट लेना। गाड़ी पर चढ़ना।

मार्ग—मित्रों की विदाई। देहली, आग्रा, ग्वालियर, जयपुर,

आदि—दक्षिण के पहाड़ और मैदान से होकर जी० आई० पी०

के दृश्य—रेलवे के अन्तिम स्टेशन विक्टोरिया टरमिनस पर पहुँचा।
वहाँ दो तीन दिन का विश्राम। जहाज़ की यात्रा के लिए तैयारी।
सभी प्रकार के दृश्य, कहीं पहाड़, कहीं स्थल, कहीं नदी नाले,
कहीं मरु। स्टेशन पर अनेक दृश्य।

उपसंहार—भ्रमण प्रायः चित्ताकर्षक, अनुभववर्धक, किन्तु भारत की
रेलवेयात्रा की वर्तमान दशा शोचनीय।

प्रस्ताव

जब मैं बी० ए० परीक्षा उच्च कक्षा में पास कर सबमें से प्रथम ठहरा तो मेरे पिता को मुझे विलायत में डाक्टरी पढ़ाने की इच्छा होगई। दूसरे सम्बन्धियों ने इस का बड़ा प्रतिरोध किया किन्तु पिताजी शिलावत् दृढ़ रहे। अन्त में मेरे लिए किसी जहाज़ में एक स्थान रिजर्व कराने के लिए उन्होंने पत्र भेजा। आषाढ़ की २५ तारीख को हमें सूचना मिली कि हमारा जहाज़ श्रावण की आठवीं तारीख को बम्बई से चल पड़ेगा।

भूमिका

इस लिए हम सबका यही निश्चय ठहरा कि हमें श्रावण की तीसरी तिथि को लाहौर से चल पड़ना चाहिये। निदान उस दिन मैं और मेरे माता-पिता जो मुझे बम्बई तक छोड़ आने के लिए प्रस्तुत हो गए थे, लाहौर से बम्बई की तरफ़ चल पड़े।

तिथि, किस स्थान से किस स्थान तक

कारण और मार्ग के दृश्य आदि

जब हम लाहौर के स्टेशन पर पहुँचे तो हमें मालूम हुआ कि उसी दिन लाहौर के कालिजों में गर्मी की छुट्टी हुई है। इस कारण स्टेशन पर बड़ी भीड़ थी। एक के पीछे दूसरा टाँगा बाबुओं के सामान से लदा चला आ रहा था। रेल के कुलियों ने अपनी मजदूरी बढ़ा दी थी। टिकट की खिड़की के पास एक अनोखा दृश्य था। पढ़े लिखे बाबू भी गँवार लोगों की तरह एक दूसरे को धकेल कर आगे बढ़ने की कोशिश कर रहे थे। मुझे टिकट लेने में इतना कष्ट न हुआ क्यों कि मैंने पहले दर्जे का टिकट लिया था। हम अपने मित्रों के साथ, जो हमें लाहौर के स्टेशन तक विदा करने आए थे, प्लैटफार्म पर पहुँच गये। इतने में रेलगाड़ी भी धक धक करती आ पहुँची। प्रत्येक यात्री ने अपना माल असबाब उठा कर गाड़ी में बैठने की की। बहुत भीड़ होने के कारण कुछ दंगा फसाद भी हुआ किन्तु जल्दी शान्त हो गया। इतने में आधा घण्टा बीत गया और गाड़ी छुटने लगी। मेरे मित्र और सम्बन्धियों ने मेरे गले में पुष्पमाला पहनाई और हम गाड़ी में बैठ गये। जब गाड़ी चल पड़ी तो मेरे मित्रों ने बड़े आवेग से मेरी विदाई की। दूसरे दिन प्रातःकाल हम देहली के स्टेशन पर पहुँच गये। यह ऐतिहासिक और संसार में बड़ा पुराना शहर है। बहुत से राष्ट्रों की यह राजधानी रहती रही है। आज कल यह भारतीय शासन की राजधानी है। देहली से होते हुए हम आगरे में पहुँचे। यह नगर मुगलों के राजा शाहजहान की राजधानी था। इसमें ताजमहल और किला देखने योग्य हैं। अब हम यमुना से पार हो गये और कुछ यात्रा के पश्चात् ग्वालियर पहुँच गये। यह एक देशी रियासत है। वहाँ से चल कर हमारी गाड़ी जयपुर पहुँच गई। जयपुर एक राजपूत राजा की राजधानी है। यह नगर बड़ा रमणीय और देखने योग्य है। यहाँ से आगे पहाड़ी दृश्य दिखाई देने लगा। मध्यभारत

की रियासतों से होकर हम विंध्यपर्वत के घने जंगलों में प्रविष्ट हो गए। यहाँ की प्रकृति देवी की बड़ी विचित्र छटा थी। हरे वृक्षों पर बैठे हुए पक्षियों के कूजन से मन प्रफुल्लित हो जाता था। इसके बाद फिर हमें स्थल में आना पड़ा। मार्ग में कई छोटे बड़े ग्राम देखे। गाओं के पास किसान हल चला रहे थे। चारों ओर हरे २ खेतों में तरह २ के पौधे लहलहा रहे थे। कहीं पर रुई के श्वेत फूल कुछ और ही शोभा दिखा रहे थे। गाँओं के पास कुओं पर ग्रामरमणियाँ जल के घड़े सिर पर उठा कर भार उठाने के कष्ट को मधुर २ गीतों से हलका करती हुई बड़ी सुहावनी चाल चल रही थीं। अन्त में हमारी गाड़ी घाटों पर टेढ़े रास्ते से चढ़ने लगी। उस समय गाड़ी रेंगती दिखाई देती थी। मार्ग में कई सुरंगों से पार होना पड़ा, कई नदी नाले काटने पड़े। अन्त में हम बम्बई के विक्टोरियाटरमिनस नामक स्टेशन पर पहुँच गये। वहाँ पर मेरे पिता के एक मित्र थे। वह स्टेशन पर आये हुए थे। उन्होंने हमारा स्वागत किया और उन्हीं के यहाँ जाकर हम ठहर गए। जहाज़ चलने में अभी तीन दिन बाकी थे। इन्हीं दिनों में हमने बहुत तैयारी करनी थी। कुछ घण्टे विश्राम कर हम बाहिर घूमने निकले। बम्बई एक विचित्र शहर है। यह व्यापार का केन्द्र है। बड़ी २ अट्टालिकायें, कल कारखाने, व्यापरियों की दूकानें और बन्दरगाहें देख कर मन चकरा जाता है। हमारे तीन दिन एक क्षण की तरह गुज़र गये। अन्त में हमारे बिदा होने का दिन आ गया। उस दिन जहाज़ ने प्रातःकाल ही चलना था, इस कारण हमने रात्रि को ही तैयारी करली थी। प्रातःकाल होते ही बन्दरगाह में पहुँच गये और माता पिता ने मुझे आशीर्वाद देकर प्रेमाश्रु बहाते बिदा किया। मेरा जहाज़ समद्र को चीरता फाड़ता चला गया।

यात्रा से कई प्रकार के लाभ हैं। इससे मन संतुष्ट रहता है। जल वायु के बदलने से शरीर स्वच्छ हो जाता है

उपसंहार

और देश देशान्तर देख कर अनुभव बढ़ता है। किन्तु भारत में रेलों का प्रबन्ध अच्छा न होने से रेलयात्रा में इतने कष्ट उठाने पड़ते हैं कि कोई मनुष्य बिना ज़रूरी काम के कहीं जाने का साहस नहीं करता।

नाव की सैर

भूमिका

लाहौर में बहुत से कालिजों ने छात्रों के लिए नदी पर अपनी अपनी नावें रखी हुई हैं। जिस कालिज में मैं पढ़ता था उसकी भी नदी पर तीन किश्तियाँ थीं।

स्थान, समय, कारण

निर्जला एकादशी के अवकाश का दिन था। मैं और मेरे तीन और साथी प्रातःकाल के चार बजे ही नदी की ओर चल पड़े। वहाँ पहुँच कर कालिज की एक नाव लेली और दिल में यह ठान लिया कि आज लम्बी यात्रा करेंगे। ठीक साढ़े चार बजे नाव तट छोड़ कर रावी में बह चली। उस समय नदी का दृश्य बड़ा सुहावना था। मन्द मन्द वायु के झकोरों से चलायमान नदी में चन्द्रिका के प्रतिबिम्ब के पड़ने से प्रत्येक तरङ्ग में अनेक चन्द्र दिखाई देते थे। तट के दोनों ओर की हरियावल से चित्त में शान्ति समाने लगी। उसी दिन हमें अनुभव हुआ कि इसी कारण यति जन एकान्त जङ्गल में नदी तट पर ईश्वराराधन करते हैं। चप्पू छोड़ कर हम ने नाव को यथेष्ट चलने दिया और सब ने मिल कर वहीं सन्ध्योपासन किया। अहा! उस दिन जो हमें सन्ध्या-आराधन का आनन्द मिला उसे हम जन्म भर नहीं भूल सकते। हम ने फिर नाव चलाना शुरू किया। चप्पू चलाने से जो शब्द निकलता था, बिना उस के सर्वत्र शांति देवी का राज्य था। हाँ, बीच बीच में रामलाल की, जो हमारा साथी था, वंशीध्वनि से

सभी आनन्दसागर में बहे जाते थे। कहीं कहीं पर पक्षियों की चहचहाहट से आनन्द की सीमा और भी बढ़ जाती थी। सूर्य्य भगवान् के उदय होने से पहले हम छः मील तक निकल गये। उस समय थोड़ी दूर तक पीछे आती एक और नाव हमें दिखाई पड़ी। हमने अपनी नाव की गति मन्द कर दी। इतने में दूसरी नाव भी पीछे से आ पहुँची। यह भी हमारे ही कालिज ही की नाव थी। अब दोनों किश्तियाँ साथ साथ चलने लगीं। कुछ गाना बजाना शुरू हो गया। कभी कभी हँसी मसखरी भी बीच बीच में चाट का काम देती थी। कभी कभी आपस में नावों की दौड़ होने लग जाती थी। कभी हम आगे हो जाते थे और कभी पीछे। एक जगह पर पानी इतना कम था कि हमारी नाव तलस्पर्शी हो गई। हम में से दो छात्रों ने कपड़े उतार लङ्गोटे कस लिये और बाँसों से धकेल कर नाव को गहरे पानी में ले आये। इतने में दिन के दस बज गये, ऊपर की कड़ी धूप और अधिक परिश्रम के कारण क्षुधा ने बहुत सताया। उसी समय सामने एक आमों का उद्यान दिखाई पड़ा। उतरकर हम वहाँ पहुँचे और रखवालों को कुछ दे दिलाकर आम्र-रस से उदरपूरणा की। हम इतने श्रांत होगये थे कि आगे जाने को साहस न हुआ। नदी के बहाव के प्रतिकूल पीछे जाना और भी कठिन था, इसलिए हमने दोनों नावों को वहीं छोड़ दिया और पास के गाँव से दो टाङ्गे लेकर लाहौर में पहुँच गये। दूसरे दिन हमारा केवट स्वयं जाकर दोनों किश्तियाँ वापस ले आया।

उपसंहार

नाव की सैर बड़ी गुणकारी है। एक तो शुद्ध वायु सेवन से मनुष्य का स्वास्थ्य बढ़ता है दूसरे यदि स्वयं ही खे किया जाय तो व्यायाम से शरीर गठीला हो जाता है। पश्चिम के विद्यालयों में नाव का चलाना भी शिक्षा का एक अङ्ग समझा जाता है। इसी प्रारम्भिक शिक्षा से कई पुरुष नाविक सेना विभाग में बड़े बड़े उच्च पद प्राप्त कर लेते हैं।

नये युवराज की भारतयात्रा

(Prince of Wale's Indian visit)

भूमिका—प्रत्येक युवराज के लिए स्वराष्ट्र-यात्रा की प्राचीन प्रथा। पहले १९२० में भारत की नई कौंसिल को जारी करने के लिए आने का विचार। किन्तु रुग्ण हो जाने के कारण विचार छोड़ दिया। उनके स्थान में ड्यूक ऑफ़ कनाट भारत में आये। स्वस्थ होकर फिर युवराज १९२१ में भारत की ओर चल पड़े।

यात्रा—जिब्राल्टर से २४ अक्टूबर को रवानगी।

विवरण—१७ नवम्बर १९२१ को बम्बई पहुँच गये। पहुँच कर सम्राट् का सन्देश सुनाना। शिवाजी-स्मारक की नींव रखना। पुनः पटना, कलकत्ता, मद्रास, संयुक्त-प्रदेश, पंजाब आदि प्रांतों में घूमना, सर्वत्र कौंसिलों और म्युनिसिपैलिटियों से स्वागत, कलकत्ता और बनारस-यूनिवर्सिटियों में उन्हें 'डाक्टर ऑफ़ लॉ' की उपाधि वितरण करना। इसके अतिरिक्त बड़ी २ रियासतों को देखना। कराची से १४ मार्च को भारत से इंगलेण्ड को रवानगी।

लाभ—शासकों को अपनी प्रजाको आँखों से देखने से उनकी दशा का ज्ञान। भारतवर्ष जैसे आवश्यक किन्तु दूरस्थ देश का देखना आवश्यक। परस्पर मेल से राजा तथा प्रजा में घनिष्ठ सम्बन्ध।

उपसंहार—कांग्रेस का उनकी यात्रा का विरोध करना। जहाँ वे गये वहीं उसी दिन हड़ताल का होजाना। भारत नेताओं का उनके स्वागत में भाग न लेना।

इन पर प्रस्ताव लिखो—पहाड़ की सैर, हरिद्वार की यात्रा, जहाज़ का सफ़र।

विचारात्मक लेख (Reflective essays)

सत्य (Truth)

भूमिका—जिसे जैसा जानना उसे वैसा कहना, सत्य पुरुष का स्वाभाविक गुण ।

सत्य बोलने के लाभ— लोगों में सत्कार, विश्वासपात्रता, अभीरुता, हृदय की पवित्रता, शुभ लोक प्राप्ति । संसार व्यवहार सुगम ।

झूठ बोलने से हानि—ठग्गी की वृद्धि। झूठे पर से विश्वास उठ जाना। सिंह और बालक का दृष्टान्त, व्यापार में हानि । एक झूठ के छिपाने के लिए अनेकों झूठ बनाना, दोनों लोकों में निन्दा । जाति की निन्दा और अविश्वास ।

असत्य के प्रकार—गोलमोल, अत्युक्ति, चापलूसी, झूठी निन्दा इत्यादि ।

असत्य बोलने के कारण—पहले पहल आत्मरक्षा, पश्चात् झूठ की बान ।

सत्य का अभ्यास—बचपन से अभ्यास करते करते सत्य बोलने की आदत ।

दृष्टान्त—हरिश्चन्द्र, युधिष्ठिर, वाशिङ्गटन ।

उपसंहार—आजकल यह कहावत प्रसिद्ध है कि झूठ बोले बिना व्यापार नहीं हो सकता, इसकी निर्मूलता । जगत् की स्थिति ही सत्य के आधार पर ।

प्रस्ताव

जिस विषय को जैसे जानना उसे वैसे कह देना सत्य होता है । पुरुष को चाहिए कि बाणी से वही बोले जो मन में सोचे और जो कुछ बोले उसे कार्य्य में परिणत करे । सत्यता मनुष्य का स्वाभाविक गुण है क्यों कि पहले बालक कभी झूठ नहीं बोलता किन्तु पीछे लोगों की देखा-देखी उसे झूठ की बान पड़ जाती है ।

भूमिका

सच्चे पुरुष का लोग बड़ा आदर करते हैं। यदि यह मालूम हो जाय कि अमुक दुकानदार सत्य बोलता है तो उस का व्यापार दिन दुगुणी, रात चौगुनी वृद्धि करने लग जाता है। लोगों का वह विश्वासपात्र हो जाता है। सच्चा पुरुष किसी से नहीं डरता। एक कवि का कहना है कि 'साँच को आँच नहीं।' यह सर्वथा सत्य है। जब किसी पुरुष को यह ज्ञान हो कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ सत्य कह रहा हूँ तो उसका मस्तक सदा उज्ज्वल रहता है और वह किसी के आगे लज्जित होकर नहीं झुकता। उसका हृदय पवित्र रहता है। सत्यता ही सब गुणों का कारण है। जिसमें सत्यता हो उसमें और सभी गुण स्वयं आ जाते हैं।

सत्य बोलने के लाभ

सत्य बोलने से संसार का व्यवहार सुगम हो जाता है। संसार में यदि सचाई का राज्य हो जाय तो सभी अदालतें स्वयं बन्द हो जायँ, डाकुओं का निशान तक न रहे और मनुष्यमात्र का जितना समय, धन और व्यवसाय, आत्मरक्षा की सामग्री का आविष्कार करते व उसे इकट्ठा करते लगते हैं बच जायँ और वह अच्छे कार्यों मे लग सकें। यही नहीं, सत्य ही मोक्ष प्राप्ति की पहली सीढ़ी है।

झूठ से संसार में ठग्गी की इतनी अभिवृद्धि हो गई है कि कोई किसी पर विश्वास नहीं करता। पिता का पुत्र से, पुत्र का माता से विश्वास उठ गया है। एक दूसरे को परस्पर मित्र मित्र कहते हुए भी पुरुष हृदय में शङ्कित ही रहते हैं। जब कोई एक बार झूठ बोले तो कोई भी उसका विश्वास नहीं करता। कहते हैं एक बालक सदा 'शेर आया, शेर आया' यह चिल्लाया करता था। लोग उसे झूठा समझते थे। एक दिन सचमुच शेर आगया और उसके 'शेर शेर' चिल्लाते भी उसके पास कोई न पहुँचा। परिणाम यह हुआ कि शेर का वह ग्रास हो गया। भारत में झूठ बोलने से जितनी व्यापार में

झूठ बोलने से हानि

हानि हुई है उसका मान नहीं हो सकता। भारतीयों के मस्तक पर यह कलङ्क का टीका लग जा चुका है कि ये लोग सत्य नहीं बोलते। झूठ अकेला नहीं बोला सकता। एक बार झूठ बोल कर उसे छिपाने के लिए कई और झूठ बोलने पड़ते हैं।

असत्य भाषण से जितनी किसी एक व्यक्ति को हानि पहुँचती है उससे कई गुण बढ़ कर जाति को हानि पहुँचने की सम्भावना है। इसी लिए भारतीय लोगों का अन्य जातियों में मान नहीं।

झूठे के दोनों लोक बिगड़ जाते हैं। न इस लोक में कोई उसका आदर करता है न परलोक में उसे सुख की प्राप्ति होती है।

असत्य के प्रकार

असत्य के कई प्रकार हैं। किसी बात को स्पष्ट शब्दों में न कह कर उसे ऐसा गोल मोल बनाकर कहना कि जिसके कई अर्थ निकल सकें। यह भी एक प्रकार का झूठ है।

किसी वस्तु के असली रूप को बढ़ा कर कहना भी असत्य है। जो झूठी प्रशंसा केवल दूसरे को प्रसन्न और अनुकूल करने के लिए की जाय यह भी एक प्रकार का झूठ है। इसी प्रकार झूठी निन्दा भी झूठ है।

असत्य बोलने के कारण

पहले पहल पुरुष किसी भय से बचने के लिए, किसी लाभ की प्राप्ति के लिए वा किसी दोष निवारण के लिए झूठ बोलता है। इस में सन्देह नहीं कि उस समय उसे कुछ लाभ हो जाय किन्तु इसका यह परिणाम होता है कि शनैः शनैः उसे झूठ बोलने में कोई सङ्कोच नहीं रहता। उसे झूठ बोलने की यहाँ तक बान पड़ जाती है कि झूठ बोलते हुए उसे मालूम तक नहीं होता कि मैं झूठ बोल रहा हूँ।

जैसे झूठ बोलते २ झूठ की बान पड़ जाती है इसी प्रकार सत्य भाषण का अभ्यास करते २ पुरुष की ऐसी दशा हो जाती है कि उसके मुख से झूठ निकलना असम्भवसा हो जाता है ।

सत्य का अभ्यास

भारतवर्ष में कई ऐसे पुरुषरत्न हो चुके हैं जिनके नाम अभी तक छोटे बड़े की जिह्वा पर चढ़े हुए हैं । सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र और धर्मपुत्र युधिष्ठिर का नाम किस भारतवासी ने नहीं सुना ! अमेरिका के प्रसिद्ध अध्यक्ष वाशिङ्गटन की बाबत प्रसिद्ध है कि एक बार उसने बचपन में अपने पिता के उद्यान में एक वृक्ष काट दिया । पिता के पूछने पर उसने पिता के प्रकोप की परवाह न कर सत्य कह दिया ।

दृष्टान्त

भारत में प्राय: यह कहा जाता है कि झूठ बोलने के बिना जगत् के व्यवहार नहीं चलते । कचहरियों में जाकर झूठी साक्षी देते उन्हें कुछ लज्जा नहीं । दुकानों पर द्विगुण त्रिगुण दाम कहते उनके हृदय कम्पित नहीं होते । इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्राचीन आर्य सत्य के आदर्श थे । किन्तु आजकल तो यह निर्भ्रान्त है कि पश्चिम के लोग इनसे बहुत दूर आगे निकल गए हैं । सच पूछो तो यह कहना अत्युक्ति न होगा कि सभी संसार सत्य के आश्रय पर खड़ा है (सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्)

उपसंहार

सन्तोष

पूरा प्रयास करने मे मनुष्य को जो कुछ फल मिले उसी पर प्रसन्न रहना और दूसरों को देख कर चित्त को अशान्त न होने देना सन्तोष है । पूरा यत्न न कर भाग्य केरोसे बैठे रहना सन्तोष नहीं है, किन्तु आलस्य है ।

भूमिका

जिन्होंने सन्तोष के अमृत-प्रवाह का पान किया हो उन्हें असीम सुख की प्राप्ति होती है। संस्कृत में 'सन्तोषः परमं

उपकार

सुखम्, सन्तोषः परं निधानम्' आदि अनेक कहावतें प्रचलित हैं। सन्तोषी पुरुष का मन स्वाधीन और शान्त रहता है। कहीं लोभ में आकर इधर उधर भटकने नहीं पाता। जिस काम को वह करता है उसमें उसका मन लग जाता है। वह यह नहीं करता कि एक काम हाथ में लिया और कुछ दिन उसे करने के बाद जब कुछ असफलता वा अल्पसफलता दिखाई दी तो झट उसे छोड़ दूसरा शुरू कर दिया। क्योंकि जितना भी उसे लाभ हो उसी में उसे सन्तोष रहता है। सन्तोषी पुरुष का मन ईश्वराराधन में दूसरों की अपेक्षा सहज में लग सकता है। उसकी लोगों में प्रतिष्ठा होती है। उसके चेहरे को देखो, तो उस पर अनोखी कान्ति पाओगे। उसके साथ सम्भाषण करो, तो चित्त को शांति मिलेगी।

कैसे प्राप्त हो?

सन्तोष-प्राप्ति के लिये चित्त-संयम की बड़ी आवश्यकता है। अपने से अधिक धनी को देखकर चित्त में जलन न होनी चाहिए। जीवन की क्षणिकता पर विश्वास चाहिये। पूरा प्रयास करने पर भी यदि फल-प्राप्ति न हो, तो यह कहकर शांति हो जाय कि मेरे अदृष्ट कर्मों से यही कुछ मिलना लिखा था। मनुष्य के सभी काम ईश्वरेच्छा पर निर्भर होने चाहियें। सन्तोष को धर्म समझ कर उस पर पूरा आचरण करना चाहिये। योग-प्राप्ति के लिये सन्तोष प्रथम सीढ़ी है। जो कुछ भी मनुष्य को प्राप्त हो, उसके लिये परमात्मा को धन्यवाद देना चाहिये।

उदाहरण

प्रत्येक देश में सन्तोषी पुरुष होते हैं। भारतवर्ष में कई साधु-महात्मा ऐसे हैं जिन्हें जो कुछ भी मिले उससे ही सन्तुष्ट रहते हैं। एक पुरुष को प्रति-

दन मज़दूरी करने के बाद दो-चार आने मिल जाते थे। उसी से वह अपने बड़े परिवार का पालन-पोषण किया करता था। कभी-कभी उस वृत्ति से उसे वंचित रहकर अनाहार रहना पड़ता तो भी उसका व उसके परिवारजनों का चेहरा प्रफुल्लित और मन शांत रहता। वे सदा यही कहा करते कि 'धन्य हो ईश्वर! आपकी कृपा से हम इतने सुखी हैं।' उनके पड़ोस में ही एक धनिक पुरुष था। उसके एक स्त्री के सिवा और कोई न था। हज़ारों की उसे आय थी। फिर भी रात-दिन वह धनोपार्जन में लगा रहता और कहा करता कि मेरे पास कुछ नहीं। न उसे खाने-पीने में आराम, न उसे निद्रा में सुख था। एक महात्मा ने उस मज़दूर से पूछा, 'भाई, कुछ न होते हुए भी आप क्यों इतने सुखी हैं, और यह बेचारा बनिया इतना धनवान् होकर भी इतना दु:खी क्यों है?' उसने उत्तर दिया कि 'सुख व शांति रुपये व पैसे में नहीं रहती, किन्तु यह अपने मन में रहती है। जिसे अपने चित्त पर पूरा काबू होता है वह वस्तुतः सुखी है।'

उपकार हाथ-पर-हाथ रखकर पड़े रहना और यह समझ कर कि जो कर्मों में होगा आप मिल जायगा काम-काज छोड़ बैठना, सन्तोष नहीं, यह आलस्य है। कई लोगों की ऐसी दशा हो जाती है कि वे सन्तोषी बनते-बनते आलसी हो जाते हैं। वे बेसमझी से आलस्य और सन्तोष में कोई भेद नहीं देखते। सन्तोषी पुरुष के लिये आवश्यक है कि उसे पूरा प्रयास करना चाहिए, किन्तु उस प्रयास का जो फल भी मिले उसी में सन्तुष्ट होकर ईश्वर का धन्यवाद करे।

सन्तोष की भी सीमा है—अर्थात् अतिसन्तोष कई बातों में ठीक नहीं, कई बातों में सन्तोष न करना ही वांछनीय है। उदाहरणार्थ यथा—विद्या, धर्म, स्वदेश-सेवा, परोपकार इत्यादि। स्थूलरूपेण अन्य बातों में सन्तोष करना श्रेयस्कर है।

असन्तोषी पुरुष की दशा बड़ी करुणा-जनक होती है। मृग-तृष्णा में ही भटक-भटक कर उसकी आयु चली जाती है। उसे अपनी किसी दशा पर सन्तोष नहीं होता। जब उसकी एक इच्छा पूरी हो जाय तो वह दूसरी करने लग जाता है। यदि वह निर्धन हो, तो उसे धनिक बनने की इच्छा लगी रहती है, फिर धनिक होने पर वह कोट्यधीश होना चाहता है। यदि उसकी वह इच्छा भी पूरी हो जाय, तो वह इन्द्रासन को भी लेना चाहता है।

उपसंहार

विशेषकर आजकल की सभ्यता जिसकी बड़ी प्रबल रोशनी ने पश्चिम से चलकर भारत को चकाचौंध कर दिया है, सन्तोष में बड़ी बाधिका है, इससे मनुष्य को कभी सन्तोष हो ही नही सकता।

क्षमा

क्षमा कुछ साधारण गुण नहीं है। जिस पुरुष में क्षमा नहीं वह अतिक्षुद्र समझा जाता है।

भूमिका

जो ऐसे होते हैं कि किसी से कुछ अपकार की शंका हुई कि उसका अपकार करने को तैयार, किसी के मुँह से भ्रम से भी कुछ कड़ा शब्द निकला कि आप गालियों की वर्षा करने लगे, किसी ने अल्प अपराध भी किया तो उस पर झट टूट पड़े, वे अतितुच्छ समझे जाते हैं। जिनको क्षमा नहीं, उनके लड़के-बाले बड़े दुर्बल होते हैं, क्योंकि वे बात-बात में घूसे और घुरके जाते हैं और बात-बात में मार खाते हैं। उनसे जी खोलकर कोई बात नहीं करता; क्योंकि आशंका सबको रहती है कि बातों में कोई अनुचित न हो जाय। जिसको क्षमा नहीं है उससे कितने ही काम चटपट में ऐसे अनुचित बन जाते हैं कि पीछे जन्म भर पछतावा रह जाता है। क्षमारहित पुरुष राजसभाओं में तो

क्षमारहित पुरुष

कभी टिक ही नहीं सकते। जैसे किसी कटोरे में जल हो, तो उसमें जहाँ कुछ और पदार्थ डाला कि जल उबला—यह स्वभाव अत्तमी पुरुषों का है।

समुद्र में पहाड़ आ पड़े तो भी उसका बढ़ना, घटना, फैलना कुछ नहीं विदित होता—यह स्वभाव क्षमावान् पुरुषों का है। जैसे गजराज के पीछे कुत्ता भूकता हुआ चले और गजराज उस पर ध्यान न दे, तो उसका कुछ नहीं बिगड़ता, वैसे ही क्षमाशील पुरुष यदि तुच्छों पर ध्यान न दे, तो उसकी क्या हानि है। यदि कोई गाली दे तो भी यों समझ लेना कि—

क्षमावान् पुरुष

"जाके ढिग बहु गारी ह्वै है सोई गारी दैहै।
गारीवारो आप कहै है हमरो का घटि जैहै॥"

कोई समझते हैं कि जो हमको गाली दे, उसे यदि हम गाली न दें तो बड़ी अप्रतिष्ठा होगी, पर यह उलटी ही बात है। तुच्छों की गाली-पर-गाली ही देने से टंटा बढ़ता है और चुपके से कोई जानता भी नहीं कि किसको किसने गाली दी।

एक समय वसिष्ठ और विश्वामित्र में बड़ा झगड़ा चला। झगड़ा तो इस बात का था कि विश्वामित्र क्षत्रिय थे, पर बहुत तप करने के कारण कहते थे कि हमें सब कोई ब्राह्मण कहा करें। यह बात उस सयम के ब्राह्मणों को अच्छी नहीं लगी। वसिष्ठजी ने कहा कि आप क्षत्रिय हैं। पर तपस्वी हैं, इसलिए राजर्षि कहला सकते हैं, परन्तु ब्रह्मर्षि नहीं। इस बात पर विश्वामित्र ने वसिष्ठजी से शत्रुता बाँधी। विश्वामित्र बार-बार अधिक तप करके आते और वसिष्ठजी से झगड़ा करते। पर वसिष्ठजी उन पर क्षमा ही रखते थे। पुराणों में लिखा है कि एक वार विश्वामित्र बहुत तप करके आये और ललकार कर बोले कि या तो हमें ब्राह्मण कहो, नहीं तो

उदाहरण

युद्ध करो। वसिष्ठजी एक दण्ड लेकर कुटी के बाहर खड़े हो गये। विश्वामित्र उन पर बहुत अस्त्र-शस्त्र चलाने लगे, परन्तु वसिष्ठजी ने अपने तपोबल से सबको उसी दण्ड पर रोका। जब विश्वामित्र कोटि कला कर हारे तब वसिष्ठजी ने कहा कि भाई और कोई अस्त्र-शस्त्र बाकी हो तो चला लो, फिर हम भी आरंभ करेंगे। तब विश्वामित्र ने हाथ जोड़े और वसिष्ठजी से क्षमा माँगी। कालांतर में वसिष्ठजी अपनी कुटी में बैठे आँख बन्द किये ध्यान कर रहे थे। अँधेरी रात थी। उस समय विश्वामित्र के चित्त में यह बात आई कि जितने ब्राह्मण हैं वे वसिष्ठ ही पर ढलते हैं और कहते हैं कि वसिष्ठ यदि ब्राह्मण कहे तो हम हम ब्राह्मण लोग भी ब्राह्मण कहें और वसिष्ठ ऐसा दुष्ट है कि चाहे कुछ भी हो, वह हमें ब्राह्मण न कहेगा। तो अँधेरे में वसिष्ठ का सिर काट डालना चाहिये। यह विचार कर चोर की भाँति वे तलवार ले वसिष्ठ की कुटी में घुसे। दैवात् उनकी समाधि खुली और पूछा—कौन हो? तब विश्वामित्र ने कहा—तुम मुझे ब्राह्मण नहीं कहते, इसलिये मैं तुम्हारा सिर काटने आया हूँ। वसिष्ठ ने कहा कि आप ही सोच लीजिये। क्या जो पाप करने आप आये हैं—ऐसे ही ब्राह्मणों कर्म होते हैं? क्या ऐसे ही स्वभाव के भरोसे आप ब्राह्मण बनना चाहते हैं? यह सुनते ही विश्वामित्र लज्जित हो गये और तलवार दूर फेंक प्रणाम कर बैठ गए और अपराध क्षमा कराने लगे। वसिष्ठजी ने कहा—हमें कुछ बदला नहीं लेना है कि आप क्षमा माँगें; पर देखिये कि जिस समय आप अहंकार से ऊँचे बनने का डंका दे युद्ध का डौल बाँधते थे, उस समम सबकी दृष्टि में आप छोटे जँचते थे। अब आप हाथ जोड़े अपने को तुच्छ समझे बैठे हैं तो हमारी दृष्टि में आप ऊँचे जान पड़ते हैं। इस समय आपके हृदय में अहंकार नहीं, ईर्ष्या नहीं, मद नहीं, मत्सर नहीं। बस ऐसा हृदय रखिये तो

आप सबसे बड़े हैं। विश्वामित्रजी को यह सुन बहुत बोध हुआ और वसिष्ठजी का इतना क्षमा-गुण देख सबको आश्चर्य हुआ।

इसलिये यही चित्त में स्थिर करके रखना चाहिये कि—

उपसंहार

छमा सकल गुन सों बड़ो, छमा पुन्य को मूल।
छमा जासु हिरदै रहै, तासु दैव अनुकूल ॥
अपराधी निज दोष तें, दुख पावत बसु जाम।
छमासील निज गुनन तें, सुखी रहत सब ठाम ॥"

पं० अम्बिकादत्त व्यास

धैर्य

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥ (भर्तृहरि)

हो समय कैसा कठिन दृढ़-चित्त हो कर मत डरो।
पड़ जायँ लाखों विघ्न पर, कर्तव्य तुम अपना करो ॥
कहते न तुम घर घर फिरो, बाधा हरो बाधा हरो।
निज बाहुबल से नाव खेकर दुःख का सागर तरो ॥

भूमिका

मनुष्य के सिर चाहे विपत्ति का पहाड़ टूट पड़े अथवा इतना सौभाग्यशाली बन जाय कि उसके सामने लक्ष्मी-देवी हाथ जोड़ खड़ी हो व किसी अन्य कार्य में उसे बड़ी सफलता मिल जाय—इन सभी दशाओं में चित्त का तनिक भी विचलित न होना धैर्य है। धैर्य मनुष्यका स्वभाविक गुण है। कई बार देखा गया है कि कई बच्चों में बिना सिखलाए धैर्य की इतनी मात्रा रहती है कि देख कर अचम्भित होना पड़ता है। ध्रुव को धैर्य की शिक्षा कहाँ से मिली थी?। प्रह्लाद

बाल्य में ही धैर्य की पराकाष्ठा तक पहुंच गया था। राम का धैर्य किससे छिपा है? हकीकतराय धैर्य धार कर धर्म में कितने दृढ़ रहे? धैर्य अभ्यास-प्राप्य भी है। बचपन से ही यदि इसकी ओर ध्यान किया जाय तो बहुत अच्छा है। वैसे तो, हर एक अवस्था में इसका अभ्यास हो सकता है।

उपकार

मनुष्य पर कैसी भी विपत्ति आ पड़ी हो, धैर्यवान् पुरुष का वह कुछ नहीं बिगाड़ सकती। सोच विचार के बाद वह उससे बचने का कोई न कोई मार्ग निकाल ही लेता है। सम्पत्ति उसे मदान्ध नहीं बना सकती। सम्पन्न पुरुष जिन जिन व्यसनों में पड़ अनर्थ कर बैठते हैं उनसे वह बचा रहता है। धीर पुरुष व्यापार व अध्यवसाय में सदा कृतकार्य रहता है। उसको कभी हानि हो भी जाय तो वह उससे घबराता नहीं। वह दूरदर्शिता जो व्यापार में सफलता की एक कुञ्जी है, उसकी पथप्रदर्शिका होती है। एक सैनिक के लिए धैर्य उतना आवश्यक है जितना उसके प्राण। यदि एक सेनापति शत्रु के आक्रमण करने वा शत्रु पर चढ़ाई करने के समय घबरा जाय तो सभी सेना का नाश दुर्निवार हो जाता है।

अपकार

जो पुरुष अधीरता से काम बिगाड़ देता है उसका जगत् में उपहास होता है। अधीर पुरुष का मन कभी शांत नहीं रहता। विपत्तियों का सामना करने का उसमें साहस नहीं नहीं होता। किसी कार्य में उसे सफलता नहीं मिलती। विपत्ति में उसका मन इतना घबरा जाता है कि उपाय पास होने पर भी वह उससे लाभ नहीं उठा सकता। यदि उसके घर में चोर घुस जाय तो उसके मुख से शब्द तक नहीं निकल सकता, पास शस्त्र होते हुए भी वह उसका प्रयोग नहीं कर सकता। यदि घर में आग लग जाय तो पानी पास रहते हुए भी

वह उसके लिए निष्फल है। अधीर विद्यार्थी यदि एक बार परीक्षा में असफल होजाय तो उसे फिर उसमें प्रविष्ट होने का साहस नहीं होता।

उदाहरण

युधिष्ठिर का धैर्य देखो कि सामने प्राणप्रिया पाञ्चाली के नम्र होते और दूसरे भाइयों के क्रोध में आकर दांत पीसते भी अपने मन को स्थिर रखा और अपने को धर्म से विचलित न होने दिया। नल जैसा कौन धैर्यवान् होगा ? कौन सी विपत्ति थी जो उसपर न आई थी। तो भी कैसे धैर्य से उसने सब का साम्मुख्य किया। धर्मवीर हरिश्चन्द्र का सभी राजपाट छूट गया। उसे चाण्डाल का दास होना पड़ा, तो भी उसने धैर्य का अवलम्बन नहीं छोड़ा। रमणियों में भी सीता, सावित्री, दमयन्ती का धैर्यावलम्बन किससे छिपा है ! पिछले यूरोपीय महायुद्ध में धैर्य के हज़ारों उदाहरण मिलते हैं। फ्रांस के सेनाध्यक्ष जनरल फाश को कितनी बार जर्मन सेना से दबना पड़ा किन्तु उसने धैर्य न छोड़ा और अन्त में विजयी हुआ। कई बार अखबारों में पढ़ा होगा अमुक जहाज़ जब डूबने लगा तो उसके कप्तान ने कैसे धैर्य से सब यात्रियों की रक्षा की।

उपसंहार

किं बहुना, धैर्य ऐसा गुण है जो यदि ईश्वरीय कृपा से किसी में स्वाभाविक हो तो बहुत अच्छा, नहीं तो प्रत्येक नर नारी को इसे अभ्यासद्वारा ग्रहण करना चाहिए। इसके बिना जीवन इतना निष्क्रिय है जैसा बिना चप्पू के नाव, बिना परों के पक्षी।

नम्रता

भूमिका—अपने मुख से अपनी प्रंशसा न करना। पुरुष का सर्वोत्तम गुण।

उपकार—संसार में प्रसंशा, सब का स्नेहपात्र और आदरणीय। नम्र पुरुष के शत्रु भी मित्र बन जाते हैं। उसके गुणों की दुगुनी प्रशंसा।

प्राप्तकरने के उपाय—सत्संगति, ऊँची विद्या, सदाचार।

कुछ उदाहरण—प्रकृति में वृक्ष फल लगने पर झुकते हैं। आंधी के आगे तृण झुक कर बच जाते हैं किन्तु बड़े बड़े अभिमानी वृक्ष टूट जाते हैं। श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में ब्राह्मणों के पाद धोने का काम लिया। न्यूटन के शब्द। म० गान्धीजी की नम्रता।

न होने से दोष—लोगों का उपहास, अविश्वास। अभिमानी को अन्त में नीचा देखना पड़ता है।

इसकी सीमा—नम्रता चापलूसी व खुशामद में न परिणत हो जाय, झूठे पुरुषों की कड़ी समालोचना करनी चाहिए।

उपसंहार—आज कल के पढ़-लिखों में नम्रता का अभाव। पूर्वजों का निरादर।

नानक नन्हें हो रहो, जैसी नन्हीं दूब।
घास पात सब सूखि गो दूब खूब ही खूब।

दया

दया धर्म का मूल है पापमूल अभिमान।
तुलसी दया न छाड़िये जब लग घट में प्राण।

भूमिका—दूसरे को दुःखित देखकर मन का पसीजना और उसके दुःख को दूर करने का उपाय।

दया करने के कारण—दूसरों को अपने समान समझ कर दुःख न देना। गाय, बैल, घोड़े आदि जीवों से लाभ। दयालु पुरुष को परलोक में सुख।

दया दिखाने के उपाय—दुःखी पशुओं को दुःख से बचाना, टांग के घोड़ों को चाबुक न मारना, गोबध को रोकना, बैलों पर बहुत भार न लादना (पशुओं पर निर्दयता हटाने की संस्था) दुःखी, दीन, अपाहज मनुष्यों को भोजन देना, बल से धन से दया करना।

दया के भेद—स्वार्थ निःस्वार्थ—दो भेद। स्वार्थ—अपने मित्र, सम्बन्धि, कुटुम्बियों के दुःख हटाना, यश के लिए दया करना। निःस्वार्थ—लंगड़ा, लूला, अपाहज, दीन, अपरिचित मनुष्यों पर दया।

लाभ—लोगों में सम्मान, परलोक सुख।

दया की सीमा—दुष्टों पर दया न करना। सिंह, सर्प, व्याघ्र आदि हिंस्र जीवों को मारना चाहिये।

उपसंहार—मनुष्यों का सर्व-प्रधान धर्म, दयाहीन पशुसमान, दयालु का हृदय प्रसन्न और मन शान्त। सन्तानों को दया की शिक्षा।

उत्साह

भूमिका—शुभ काम के सम्पादन में दृढ़ता। बाधा व भय से निर्भीकता।

लाभ—मन को उन्नत करता है। अच्छे कार्य करने के लिए निर्भयता, चित्त की स्वतंत्रता, उत्साही पुरुष किसी पर अत्याचार देख नहीं सकता, युद्धक्षेत्र के अतिरिक्त प्रतिदिन कर्तव्य में भी उत्साह दर्शाया जा सकता है, उत्साही सत्यवादी।

उदाहरण—सत्य-दृढ़ हरिश्चन्द्र का राज-त्याग, प्रह्लाद का पिता से प्रतिरोध, महात्मा गान्धी जी का स्वराज्यान्दोलन।

उपसंहार—उत्साह और सफलता सहगामी, उत्साही का ईश्वर पर विश्वास।

अभ्यास

इन पर प्रस्ताव लिखो—

शूरता, नियमानुसरण (Discipline)

मित्रता

भूमिका—दो व्यक्तियों के हृदय का मेल। बन्धु, परिचित, अपरिचित, सब में हो सकती है।

आवश्यकता—मनुष्य अकेला नहीं रह सकता।

मित्र कैसा हो—जिनकी परस्पर प्रकृति मिलती हो। किसी प्रकार की उच्च नीच अवस्था न हो। स्वार्थसाधक न हो।

उदाहरण—पाण्डव-कृष्ण। अनन्त—वसन्त।

बनावटी मित्र—सुख के बदले दुःख। ऊपर से मृदुभाषी अन्दर से स्वार्थी।

मित्रता में बाधक—परस्पर ईर्ष्या। अनुचित व्यापार। उपकार का बदला चाहना। छोटी छोटी बातों में मत भेद।

उपसंहार—मित्र जीवन का साथी। अतः परख के बाद मित्रता हो।

प्रस्ताव

जब दो व्यक्तियों के, वे चाहे पुरुष हों वा स्त्रियां, हृदय परस्पर मिल जाते हैं तो उसे मित्रता कहते हैं।

भूमिका

मित्रता के लिये यह आवश्यक नहीं कि यह बन्धुओं वा पूर्व परिचितों ही में हो सकती है, प्रत्युत प्रायः यह देखा गया है कि जिनका कभी पूर्व परिचय हुआ ही नहीं उनकी मैत्री बड़ी उच्च कोटि की रही है। मनुष्यजीवन में सच्चे मित्र मिलने के बहुत अवसर हाथ आते हैं।

आवश्यकता

स्वभावतः मनुष्य अकेला नहीं रह सकता। कुछ दिनों के लिये इसे अकेला छोड़ दो, तो सब सुखप्रद पदार्थों के विद्यमान होने पर भी थोड़े काल के बाद उसके पागल होने की सम्भावना हो जाती है। इस कारण उसके लिए कोई ऐसा आदमी चाहिए जो उसका विश्वास-

पात्र हो, जिसके साथ वह दिल खोल कर घर बाहर के विषयों पर पूरा विचार कर सके।

एक कवि ने कहा है—मित्र वह होता है जिसे देखते ही आंखों में से आनन्दाश्रु-धारा बह निकले, चित्त-समुद्र आनन्द-लहरों से उमड़ा उठे। जिसके आगे सुख दुःख की बातों का सारा भंडार खुल जाय। किन्तु ऐसे मित्र दुर्लभ हैं। मित्रों की परख विपत्ति के समय होती है। मित्रता उसके साथ हो जिससे अपनी प्रकृति मिलती हो। सात्वकी और तामसी प्रकृतिवाले मनुष्यों की मित्रता किसी न किसी दिन टूट जायगी। दोनों ही एक अवस्था के हों। न उनकी आयु में बहुत भेद हो और न उनकी आर्थिक दशा कम ज्यादा हो। साठ साल का बृद्ध और पच्चीस वर्ष का युवक कहां मित्र बन सकते हैं! अकिञ्चन और लक्षाधीश में मैत्री कहां! हां, कई बार ऐसी मित्रता होती भी है तो वह इतनी कम देखने में आती है कि हम उसे आदर्श नहीं कह सकते। स्वार्थसाधकता मित्रता में पहली बाधा है। कोई चाहे कि केवल मेरा काम भी होता रहे और मित्रता भी बनी रहे यह असम्भव है।

मित्र कैसा हो

सच्चा मित्र उपकार नहीं चाहता। दूसरों के आगे उसके छिद्र नहीं दर्शाता। विपत्ति में मित्र के लिए रक्त बहाने के लिये तत्पर रहता है। एक कवि लिखता है—

कुपथ निबाहि सुपथ्य चलाता।
गुण प्रकटिहिं अवगुणहिं दुराता॥
देत लेत मन शङ्क न धरहीं।
बल अनुमान सदा हित करहीं॥
विपति काल कर शत गुण नेहा।
श्रुति कह सत्य मित्र गुण येहा॥

अच्छे मित्र का आचार व्यवहार पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

पाण्डवों और कृष्ण की आदर्शमित्रता थी। पाण्डवों को कितनी ही विपत्तियां झेलनी पड़ीं किन्तु उन सब से निकाल कर उन्हें फिर राज्य लौटा कर दिलाना कृष्णसरीखे सच्चे मित्र का ही काम था। शैक-स्पीयर के 'वंश नगर का व्यापारी' के मुख्य पात्र अनन्त और वसन्त की मित्रता भी किसी से कम नहीं।

उदाहरण

कपटी मित्र से सुख के बदले अनेक दु:ख मिलते हैं। सामने तो वह इतनी प्रशंसा करता है जिसका कोई ठिकाना ही नहीं, परन्तु पीछे से जो मित्र में दोष न हों उन्हें भी उसके माथे जड़ देता है। वह केवल स्वार्थ सिद्धि के लिए ही मैत्री करता है। जब स्वार्थ निकला कि वह अलग हुआ। किसी ने कहा है—

बनावटी मित्र

आगे कह मृदु बचन बनाई।
पाछे अनहित मन कुटलाई॥
जाकर चित्त अहि गति सम भाई।
अस कुमित्र परिहरे भलाई॥
सेवक शठ नृप कृपण कुनारी।
कपटी मित्र सूलसम चारी॥

एक दूसरे की सम्पत्ति व बढ़ती देख कर ईर्ष्या करने से मैत्री नहीं रहती। मित्र से ऐसे इष्ट पूरा करने की आशा करना जिन्हें वह पूरा न कर सके व जिन्हें उसके लिए पूरा करना अतिकष्टसाध्य हो यह भी मैत्री में बाधक है।

मित्रता में बाधक

उपकार के बाद ही यह चाहना कि उसका बदला मिले इससे भी मित्रता टूट जाती है।

छोटी २ बातों पर मतभेद होजाना भी मित्रता के लिए अच्छा नहीं।

मित्र जीवनभर का साथी होता है। किसी को मित्र बनाने से पहले उस को खूब परख कर लेनी चाहिए नहीं तो पीछे पछताना पड़ेगा। पहले मित्रता कम हो और पीछे क्रमशः बढ़ती रहे तो अच्छी है किन्तु यह न हो कि शुरू होते ही इतनी बढ़ जाय कि थोड़े दिनों बाद इतिश्री बोलना पड़े।

उपसंहार

सच्चरित्रता (Good conduct)

वह वस्तु क्या है जो किसी देश या समाज को उन्नति के सब से उच्चतम शिखर पर पहुँचाती है? वह शक्ति कौन सी है जिस से कोई व्यक्ति संसार में उच्चता का आदर्श स्थापन कर सकता है? इस प्रश्न का उत्तर संसार के इतिहास में एक ही मिलता है, अर्थात् वह वस्तु सुजनता है जिससे किसी देश या जाति का मान संसार में प्रतिष्ठित होता है और वह शक्ति सच्चरित्रता है, जो व्यक्तियों को संसार के लिए आदर्श और अनुकरणीय बनाती है।

भूमिका

सुजनता से हमारा तात्पर्य्य बाहरी चमक दमक और बनावटी सभ्यता से नहीं है, किन्तु जिसका चरित्र उज्ज्वल है, संसार का कोई भी दबाव या प्रलोभन जिसको चरित्र के शुभ पथ से डिगा नहीं सकता, वही हमारी परिभाषा में सुजन है। ऐसा पुरुष चाहे बहुत विद्वान् और धनवान् भी न हो पर उसमें इतनी शक्ति अवश्य होती है कि वह बड़े बड़े विद्वानों और धनवानों को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है।

आवश्यकता

संसार का इतिहास हमें बतला रहा है कि प्रत्येक देश और समय में ऐसे ही सुचरित्र पुरुषों ने जातीय जीवन को ढालने और संसार की काया पलटने में बड़ा अद्भुत काम किया है। यह चरित्र का ही बल था कि अशोक जैसे प्रतापशाली सम्राट भिक्षु बुद्ध की

ओर खिंचे चले जा रहे हैं और बौद्ध धर्म को अपना राजधर्म बनाते हैं। शंकर, नानक, चेतन, तुकाराम, रामदास अपने चरित्र के ही बल से लाखों मनुष्यों पर अब तक शासन कर रहे हैं। दूर क्यों जाते हो, अभी हाल ही में स्वामी रामकृष्ण, स्वामी दयानन्द और स्वामी रामतीर्थ ने अपने चरित्र-बल से कितना महत्त्व और प्रभाव सम्पादन किया, जिसको देश के सभी विद्वान् और शिक्षित पुरुष स्वीकार करते हैं।

यद्यपि मनुष्य-जीवन का उद्देश पूर्ण करने के लिए विद्या, धन और शारीरिक बल की भी आवश्यकता है, तथापि बिना चरित्र-शोधन के केवल इन शक्तियों से मनुष्य अपने उद्देश में कृतकार्य नहीं हो सकता। एक विद्वान् या धनवान् चरित्रहीन है तो वह मूर्ख या दरिद्र चरित्र-हीन की अपेक्षा अधिक भयङ्कर और निन्दनीय है। एक भूखा मनुष्य यदि प्रलोभन में आकर चोरी करता है, तो चाहे वह अपराधी अवश्य हो, परन्तु उस आढ्य चोर की अपेक्षा जिस के पास खाने पीने को सब सामान मौजूद हैं, अवश्यमेव उसका अपराध बहुत हलका होगा। इसी प्रकार मूर्ख दुर्वृत्त की अपेक्षा विद्वान् दुश्चरित्र समाज में अधिक निन्दनीय होगा।

किसी कवि ने क्या अच्छा कहा है—

विद्या विवादाय धनं मदाय
शक्तिः परेषां परिपीडनाय।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतत्
ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय॥

जहाँ दुश्चरित्र विद्या को विवाद, धन को मद और बल को परपीड़ा का साधन बनाता है, वहाँ सुचरित्र इनको क्रमशः ज्ञान, दान और रक्षा का कारण बनाता है। एक और कवि कहता है—

विद्यामदो धनमदस्तृतीयोऽभिजनो मदः।
मदा एतेऽवलिप्तानामेत एव सतां दमाः।

दुष्ट मनुष्य के लिए विद्या, धन और कुटम्ब ये तीनों मद हैं। ये ही सुजन के लिए दम अर्थात् संयम के कारण हैं।

असच्चरित्रता

प्रिय विद्यार्थियो ! जिस चरित्र के बिना विद्या, धन और बल जैसी शक्तियाँ निष्फल ही नहीं किन्तु हानिकारक हो जाती हैं, उसकी मनुष्य के लिए कितनी आवश्यकता है, यह तुम्हें बतलाना नहीं होगा। चरित्र के महत्त्व और उसकी आवश्यकता को तो सभी स्वीकार करेंगे। परन्तु ऐसे मनुष्य विरले ही निकलेंगे जो चरित्रवान् कहलाने के वास्तविक अधिकारी हों। बात यह है कि प्रायः लोग दूसरों की दृष्टि में चरित्रवान् बनना चाहते हैं, परन्तु जो मनुष्य अपनी दृष्टि में जो आपे को खूब पहचानती है, गिरा हुआ है वह उन लोगों के सामने, जो उसको बिलकुल नहीं जानते या बहुत ही कम जानते हैं अपने को बड़ा दिखलाने से क्या बड़ा बन सकता है ? यह ठीक है कि संसार में परीक्षक या तत्वदर्शी सदा कम होते हैं। इसलिये साधारण और विशेष कर श्रद्धालु पुरुषों में आडम्बर और दम्भ का जादू चल जाता है। पर प्रश्न यह है कि क्या कोई चतुर मनुष्य भी, जो दूसरों को धोखा देने में सिद्धहस्त हो गया है, अपने आप को धोखा दे सकता है ? यदि दे नहीं सकता तो वह हज़ार दूसरों की दृष्टि में माननीय हो अपनी दृष्टि में तो उसका इतना भी आदर नहीं जितना किसी स्वामी को अपने विश्वासी कुत्ते का होता है। मानलो की एक मनुष्य को संसार भर निर्दोष कहता है, पर उसका आत्मा पद पद पर उसे दोषी सिद्ध करता है, तो क्या वह सुख की नींद सो सकेगा और सुख की मौत मर सकेगा ? चाहे लोग उसके छिद्रों से परिचित न हों और न कोई उसे परीक्षा की कसौटी में ही कसता हो, पर 'चोर की दाढ़ी में तिनका' इस कहावत के अनुसार उसे सदा यही शंका रहती है कि अब मै पकड़ा गया। निस्सन्देह ऐसे अपराधी के लिए जिसका अपराध प्रगट नहीं हुआ, यह दण्ड बहुत उपयुक्त है।

जितना प्रयत्न मनुष्यों की दृष्टि में अच्छा बनने के लिए कोई करता है, यदि उतना आत्म-निरीक्षण और आत्म-संयम के लिए वह करे तो फिर उसे इस प्रदर्शिनी की, जिसमें वह अपने को बना ठना कर दिखलाना चाहता है, आवश्यकता ही न रहे। सच्चरित्र बनने के लिए मनुष्य को सब से पहले आत्म-निरीक्षण की आवश्यकता है। इसलिए पहले हमको यह देखना चाहिए कि हममें कौन कौन सी त्रुटियाँ और दोष हैं और वे किन किन कारणों से उत्पन्न हुए हैं। जैसे व्यवसायी अपने आय-व्यय की पड़ताल करता है, आगम की वृद्धि के उपायों को सोचता और व्यय की मदों में किफ़ायत निकालता है, उसी तरह हमको भी यह देखना चाहिये कि हमारा आत्मिक कोष किन किन रत्नों से शून्य है, और उन रत्नों की जगह किन किन कंकर-पत्थरों ने घेर ली है। बस उच्च भावों के रत्नों से अपने हृदयमन्दिर को सजाना और संकीर्ण भावों के और कुसंस्कारों के कूड़े कर्कट को बाहर निकाल कर फेंक देना सच्चरित्रता के मन्दिर मे प्रवेश करने की पहली सीढ़ी है।

सच्चरित्रता प्राप्ति के साधन

वे उच्च भाव क्या हैं जो मनुष्य को सच्चरित्र बनाते हैं? सब से पहला गुण जिसको चरित्र की नींव कहना चाहिये, सरलता अर्थात् निष्कपटता है। मनुष्य में चाहे और गुण हों पर यदि उसके व्यवहार में कपट हो तो वह कभी सच्चरित्र नहीं कहला सकता। दाम्भिक और कपटी लोग चाहे संसार में चतुर भले ही कहलावें, पर चरित्र के शुभ सिंहासन पर बैठने के योग्य कदापि नहीं हो सकते। सत्य-परायण और सत्य-प्रतिज्ञ होना भी इसी गुण के अन्तर्गत है, क्योंकि कपटी और दम्भी मनुष्य ही असत्य या बनावट का आश्रय लेकर अपने आत्मा का हनन करता है। जिसको अपने आत्मा पर विश्वास है वह कभीं सरलता को छोड़कर कुटिलता की ओर न जायगा।

दूसरा गुण कृतज्ञता है। जो मनुष्य किसी के उपकार को नहीं

मानता वह पशुओं से भी गिरा हुआ है। पशुओं में भी किसी दर्जे तक कृतज्ञता का भाव देखने में आता है। मनुष्य होकर यदि हमने अपने उपकारी को न पहचाना और उसके प्रति कृतज्ञता के भाव को न दिखलाया तो हमसे गाय, बैल, घोड़े और कुत्ते भी अच्छे हैं। मनुष्य की प्रशंसा तो इसमें है कि अनुपकारी और शत्रु के साथ भी भलाई करे। उपकारी के प्रति कृतज्ञ होना केवल अपने कर्त्तव्य का पालन करना है। पर शोक कि हम में ऐसे नराधम भी मौजूद हैं जो अपने थोड़े से स्वार्थ के लिए उपकारी और विश्वासी के साथ भी कपट का आचरण करते हैं। ऐसे ही लोगों को लक्ष्य में रख कर किसी कवि ने यह श्लोक बनाया होगा—

उपकारिणि विश्रब्धे शुद्धमतौ यः समाचरति पापम् !
तं जनमसत्यसन्धं भगवति वसुधे कथं वहसि ॥

तीसरा गुण चरित्र का उपयोगी उदारता है। साधु और सज्जन वही है जो मनुष्यमात्र को ईश्वर का पुत्र समझकर भ्रातृ-भाव से देखता है। जातीय, दैशिक और साम्प्रदायिक संकीर्ण भाव जिसकी दृष्टि को संकुचित नहीं बना सकते, वह केवल वाणी से ही नहीं किन्तु मन और कर्म से भी—

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

इस पवित्र और उदार भाव का अनुसरण करता है। ऐसा मनुष्य चाहे किसी देश, जाति या सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखता हो, वास्तव में वह मनुष्यजाति का भूषण है। यद्यपि मनुष्य का जिनसे घनिष्ठ सम्बन्ध होता है उनसे विशेष प्रेम का होना स्वभाविक है तथापि अपनों से प्रेम करना दूसरों से द्वेष या घृणा का कारण नहीं हो सकता। जो लोग जातिभेद, मतभेद या सम्प्रदायभेद के कारण दूसरों से द्वेष रखते हैं वे कदापि अपने के मित्र नहीं हो सकते; क्योंकि मत-भेद या सम्प्रदाय-भेद की सम्भावना तो उनसे

भी है। जब कभी इनमें मत-भेद पड़ेगा तब वे इनके भी शत्रु हो जायेंगे। अतएव जहां संकीर्णभाव है वहां निष्कपट प्रेम को कभी अवकाश मिल ही नहीं सकता।

चौथा गुण जो चरित्र को निर्मल बनाता है सहिष्णुता है। अपने मत और सिद्धान्तों से विरुद्ध भी दूसरे के मत या सिद्धान्तों का आदर करना सहिष्णुता कहलाती है। बिना इस गुण का अवलम्बन किए मनुष्य कभी उदाराशय हो ही नहीं सकता। प्राय: क्षुद्राशय मनुष्य जब औरों का मत अपने मत से विरुद्ध पाते हैं या अपनी इच्छा, रुचि के विरुद्ध कोई काम होता हुआ देखते हैं झट रुष्ट हो जाते है और अप्रिय एवं अनुचित शब्दों का प्रयोग करने लगते हैं।

यद्यपि अब उदार शिक्षा के प्रताप से यह संकीर्णता कम हो रही है, तथापि धार्मिक जगत् में अभी सहिष्णुता को बहुत कम अवकाश मिला है। यह कैसी लज्जा की बात है कि व्यावहारिक बातों में तो हम सहिष्णुता से काम ले सकते हैं, अर्थात् एक व्यवसायी दूसरे के व्यवसाय की निन्दा किए बिना अपना काम चला सकता है पर एक मतवादी बिना दूसरे मत की निन्दा किये अपनी मज़हबी इमारत खड़ी नहीं कर सकता।

चरित्रवान् बनने के लिए वर्तमान में इन चार गुणों की बड़ी आवश्यकता है। प्रिय विद्यार्थियो! तुम्हीं हमारे आशाकेन्द्र हो जाओ। अपने जीवन को इन पवित्र गुणों से अलंकृत करके संसार को दिखला दो कि जिस भारतमाता की कोख से बुद्ध जैसे आदर्शचरित्र ने जन्म लेकर संसार में चरित्र की चाँदनी फैलाई, वह अब भी चरित्रोपार्जन में किसी से पीछे नहीं है।

उपसंहार

पं० बद्रीदत्त शर्मा।

स्वच्छता

गन्दगी मल से अलग रहने का नाम स्वच्छता है। मल एक ऐसी बुरी वस्तु है जो पदार्थ के असली रूप को विकृत बनाकर उसमें अनेक दुर्गण पैदा कर देती है। केवल शारीरिक मल को त्यागना स्वच्छता नहीं, स्वच्छता का अर्थ गम्भीर है। यथार्थ स्वच्छ वह पुरुष है जिसके शरीर, आचार, व्यवहार, खाना पीना, उठना बैठना, बोलना चालना, सोच विचार किसी में भी मल का निशान तक भी न दीख पड़े। इसी स्वच्छता की बाबत कहा गया है 'स्वच्छता देवतापन है।'

भूमिका

छोटे मोटे कई अवान्तर भेद रहते भी स्वच्छता के मुख्य भेद चार हैं। शारीरिक, व्यावहारिक, मानसिक और सामाजिक। शारीरिक स्वच्छता है जिससे शरीर शुद्ध रहे। शरीर के अन्दर से रोमकूपों के द्वारा पसीने के रूप में मल निकल कर शरीर पर जम जाता है। यदि उस मल को दूर कर रोमकूपों को साफ सुथरा न रक्खें तो छिद्रों के मुख बन्द हो कर अन्दर से मल निकलना बन्द हो जाता है, मल शरीर के भीतर ही सड़ने गलने लग जाता है जिससे कई भीषण रोगों के हो जाने की सम्भावना है। इस लिए शरीर पर प्रतिदिन तेल मलकर स्नान आदि से उसे शुद्ध रखना चाहिए। शरीर में कई और भी नाक कान आदि छिद्र हैं जिन्हें साफ रखना हमारा कर्तव्य है। केशों के छिद्रों में मैल न जमने पाये अतः इन्हें कङ्घीद्वारा साफ रखना चाहिए। नखों को कभी इतना न बढ़ने दिया जाय कि उनमें मैल जम कर खाने पीने के साथ हमारे अन्दर जाती रहे।

स्वच्छता के भेद और रखने के उपाय

व्यावहारिक स्वच्छता से हमारे खाने पीने और पहिनने के कपड़ों की शुद्धि से अभिप्राय है। जिस घर में हम रहें उसमें कहीं

भी कूड़ा करकट जमा न हो क्योंकि यह कई बिमारियों की जड़ है। यदि हमारे कपड़े साफ न हुए तो शरीर साफ रखना निष्फल है। स्नानादि से शरीर शुद्ध रखने पर भी उसमें कपड़ों द्वारा मैल घुसने का भय रहता है। इसी प्रकार हमारा भोजन भी शुद्ध होना चाहिये। सड़ा गला अपाचक भोजन बीमारियों का घर हैं।

मानसिक स्वच्छता से मन में बुरे विचार उठने नहीं पाते, मन शान्त और प्रसन्न रहता है। इसमें न किसी के लिए ईर्षा और न द्वेष रहता है। उपर से शरीर साफ शुद्ध रख कर अन्दर मन को अपवित्र रहने देना वैसा ही है जैसे कि कहावत प्रसिद्ध है 'कबर चूना गच और मुड़रा बेईमान'।

सामाजिक स्वच्छता भलों की संगति करना और बुरों के सङ्ग को त्यागना है। कहते हैं सङ्ग से ही मालूम हो जाता है कि पुरुष कैसा है। जैसों के साथ पुरुष रहेगा वैसा होता जायगा।

लाभ

स्वच्छता नीरोगता की पहली और जरूरी सीढ़ी है। जिन देश वा लोगों में स्वच्छ रहना स्वभावसिद्ध हो जाता है वहां कोई संक्रामक रोग नहीं फैलता। कभी किसी ने देखा व सुना है कि जब से युरोपियन देशों ने अपने आप को सम्भाला है तब से उनमें किसी संक्रामक रोग ने लोगों की ऐसी भीषण दुर्गति की हो जैसी कि हमारे अभागे भारतवर्षियों की कई वार हो जाती है!

स्वच्छता से मन शान्त और पवित्र रहता है। स्वच्छ पुरुष का सर्वत्र आदर होता है। वह जहां जाय लोग बड़ी खुशी से उसे बैठने को स्थान देते हैं। हिन्दू शास्त्रों में स्वच्छता धर्म का प्रधान अङ्ग समझा गया हैं। कोई भी धर्मकार्य न होगा जिसके लिए पहले स्नानादि करना विहित न हो।

मलिन पुरुष का शरीर रोगी रहता है। वह ऐसा आलसी हो जाता है कि उसकी किसी काम में प्रवृत्ति ही नहीं होती।

हानि — जिस देश व जाति में मलिन रहना बुरा न समझा जाता हो वहाँ संक्रामक रोगों का कोई ठिकाना नहीं। जब से भारत स्वच्छता की ओर से कुछ ढीला होने लगा तभी से संक्रामक रोगों ने यहां पर डेरा डाल रखा है। प्लेग का प्रकोप कम होता है तो हैज़ा आ जाता है, और हैज़ा कुछ कम होता है इन्फ्लुएंज़ा आ पहुँचता है। प्रतिवर्ष लाखों जन इनके ग्रास होते हैं। यदि देखा जाय तो प्रायः निर्धन मनुष्यों में ये बीमारियां अधिक फैलती हैं क्योंकि ये स्वच्छ कम रहते हैं। क्या कभी किसी ने सुना है कि जहां हिन्दुस्तानी लाखों मरते हैं वहां कभी कोई अंग्रेज भी प्लेग व हैज़े से मरा हो? मलिन पुरुष को लोग घृणित दृष्टि से देखते हैं। उन्हें कोई अपने पास बैठने तक नहीं देता। यहीं से अछूतप्रथा चली है। जिन जातियों ने स्वच्छ रहना छोड़ा उनका लोगों से व्यवहार रह गया। यहां तक कि समय पाकर उनका स्पर्श करना भी बुरा समझा गया।

उपसंहार — इसमें सन्देह नहीं कि आज कल लोगों को स्वच्छ रखने के लिए बड़ा उद्योग किया जाता है। शहरों की म्युनसिपलिटियों का प्रथम कर्तव्य यह है कि बाज़ार वा गलियों की सफाई रक्खें। किन्तु फिर भी बिना व्यक्तिगत शुद्धि से कुछ नहीं होता। अतः व्यक्तियों की शुद्धि पर अधिक ज़ोर देना चाहिये। शुद्धि का सम्बन्ध केवल मनुष्यमात्र तक ही नहीं किन्तु संसार में कोई भी पदार्थ हो उसका बिना परिष्कार के कोई आदर नहीं करता। मणि यदि परिष्कृत न हो तो उसका इतना मूल्य नहीं होता जितना परिष्कृत का। आज कल स्वच्छता को लोग उल्टा समझ रहे हैं। यह देखा गया है कि बाहर की तड़क भड़क और विलासता स्वच्छता मानी जा रही है। बालों पर तेल लगाकर उन्हें खूब सजा देना स्वच्छता नहीं।

अमिताचरण

मनुष्य क्षणिक सुख के लिये ऐसा लालायित रहता है कि वह जिस कार्य में सुख का कुछ भी आभास पाता है, भावी परिणाम को बिना विचारे उसकी ओर दौड़ पड़ता है। संसार में ऐसे अनेक कार्य हैं जिनके आरम्भ में बड़ा आनन्द मिलता है, परन्तु उनका परिणाम बड़ा ही भयंकर है। उन कार्यों में अमिताचार प्रधान है। अमिताचार के बन्धन में पड़ कर मनुष्य नाना प्रकार की व्याधियों को सहता है और अकाल ही में काल की चक्की में पिस जाता है।

भूमिका

मनुष्य को सब प्रकार से हानि पहुँचानेवाले दोष-समूहों का राजा अमिताचार ही है। यह ऊपर से ऐसा आनन्द-दायक जान पड़ता है कि मनुष्य को भावी हानि लाभ का कुछ भी विचार नहीं रहता। वह शास्त्र की आज्ञा को नहीं मानता, इसे तो वह सुख और विलास का प्रतिबन्धक समझ तुच्छ दृष्टि से देखता है। वह व्यग्रता के साथ कुकार्यों के पीछे लग पड़ता है और जब शीघ्र ही उनके कुफल पा जाता है तव पश्चात्ताप करता हुआ शास्त्र की उपयोगिता समझने लगता है परन्तु इस पछताने हो से क्या ? उसका शेष जीवन भार हो जाता है। अतः हमें उचित है कि मिताचारी बनें, मन को रोकें और अमिताचार से सदैव सतर्क रहें।

अमिताचारी मनुष्य आदर, मान, बल, पौरुष और धन-सम्पत्ति सभी से हाथ धो बैठता है। उसकी संसार में निन्दा फैल जाती है, समाज में बोलने बैठने योग्य नहीं रहता, सब कोई उसे देख कर घृणा करते हैं और वह किसी के विश्वासयोग्य पात्र भी नहीं रह जाता। जिस अमिताचार के पीछे लट्टू की नाईं यत्र यत्र दौड़ने लगता है, वही उसको दुर्गति भोगा करें अंत में कौड़ी के तीन

परिणाम

बना देता है। बपौती या अपना कमाया धन उड़ा देने पर उसे एक टुकड़े रोटी के लिये द्वार द्वार हाथ पसारना पड़ता है। यदि भिक्षा मिल गई तो ठीक और यदि गाली सुननी पड़ी तो उसी ग्लानि में प्राण त्यागने की इच्छा हो जाती है।

मनुष्य को स्वास्थ्यरक्षा के निमित्त शरीरसम्बन्धी कितने नियमों का पालन करना पड़ता है, परन्तु स्वेच्छाचारी से यह एकदम असम्भव है। वह भक्ष्याभक्ष्य, पानापान इत्यादि का विचार न करके इच्छानुसार आहार विहार करता है जिससे वह रोगी हो अकाल ही में इस संसार से चल बसता है।

अमिताचारी की दशा अत्यन्त शोचनीय रहती है। वह सदा इन्द्रियों को सुख पहुँचाने की मृगतृष्णा में पड़ा रहता है, परन्तु उसकी इन्द्रियाँ कभी तृप्त नहीं होतीं। लालसा बढ़ती ही जाती है और जब पूर्ण नहीं होती तब उसे कठिन अशान्ति का सामना करना पड़ता है। बस, इसी प्रकार भँवर जल में पड़ा रह कर वह मनुष्यत्व को छोड़ देता है और चिन्तासागर में ऊब डूब करता रहता है।

अमिताचारी मनुष्य के कुकार्यों से केवल उसी को नहीं—

उपसंहार

वरन् समस्त देश को कष्ट उठाना पड़ता है। वह अभागा वंश और समाज को संकट में डाल देता है, सब के मस्तक को झुका देता है और विपत्तिसागर में देश को बहा कर उसे परावलम्बन की बेड़ी पहना देता है। अतः हम लोगों को उचित है कि इस दुर्गुण से सदा बचे रहें और निर्मल हृदय से कार्य-क्षेत्र में प्रवेश करें।

बाबू भूषणसिंह।

आत्मगौरव (Selfrespect)

भूमिका—अपनी योग्यतानुसार प्रतिष्ठा। इच्छा सब करते हैं किन्तु यत्न कोई नहीं करता।

आवश्यकता, प्राप्ति के साधन—जो अपना गौरव रखता है लोग भी उसका गौरव मानते हैं। इसी से जातिगौरव। देश, जाति तथा कुल की मर्यादा पालना, छोटे-छोटे लाभ के लिए दूसरों की चाटूक्ति न करना, विद्यादि गुण होने पर भी नम्र रहना, कायर न होना। धन का बहुत लालच इसका बाधक।

आत्मगौरव और अभिमान में भेद—कई बार आत्मगौरव को लोग अभिमान मान बैठते हैं। अभिमान दोष है।

लाभ—लोगों में प्रतिष्ठा। जाति, देश का नाम।

उदाहरण—पश्चिमीय जातियाँ। गांधीजी का असहयोग। रघु का ब्राह्मण को कुबेर से धन ला देना।

उपसंहार—भारत में इसकी कमी। यही अवनति का कारण।

स्वावलम्बन (Selfhelp)

भूमिका

कार्य सिद्धि के सर्वप्रधान उपायों में जिन-जिन सद्गुणों की आवश्यकता है उनमें स्वावलम्बन अर्थात् किसी कार्य में परमुखापेक्षी न होकर अपनी ही शक्ति से उसे संपादन करना मुख्य है। यह एक ऐसा गुण है, जिसके न होने से मनुष्य में मनुष्यत्व का अभाव कहना अनुचित नहीं प्रतीत होता।

संसार में जो उन्नतिशील जातियाँ हैं उनके इतिहास देखने से जान पड़ता है कि उन जातियों में प्रत्येक मनुष्य ने आरम्भ ही से स्वावलम्बन की शिक्षा पाई थी, यदि ऐसी बात न हो, तो उनकी प्रसिद्धि में हमें सन्देह है। वे भोजन, वस्त्र, भूषण—सभी कार्यों में अन्य जाति का गलग्रह होना घृणा समझती हैं। संसार के सभी कार्य हमें यह शिक्षा देते हैं कि अपना अभाव अपने ही से पूर्ण करो। यह सदा देखते हैं कि सभी निकृष्ट प्राणी आप-ही-आप उठने की चेष्टा करते हैं। पहले वे दो-एक बार अकृतकार्य तो होते

हैं, परन्तु थोड़े ही समय में वे सफल हो जाते हैं, घूमने-फिरने लगते हैं और अपने आहार को संग्रह कर लेते हैं, कभी परमुखापेक्षी नहीं होते। पालतू जीव अपने स्वामी के दिये भोजन पर जीवन-निर्वाह करते हैं और अपने से कुछ भी चेष्टा नहीं करते। यदि कारणवश उनके स्वामी मर गये, तो उनकी दुर्गति हो जाती है—उनके प्राण बचते हैं या नहीं, सन्देह है।

हमारे यहाँ धनी-मानी के बच्चे सदा माता, परिवार वा दास-दासियों की गोद के खिलौने बने रहते हैं, उन्हें एक मिनट की भी छुट्टी नहीं मिलती कि वे अपने बलबूते पर अपने को सँभालें। दरिद्र के बच्चे को देखिये, वह मिट्टी या चटाई पर पड़ा रहता है और माता सांसारिक कार्यों में व्यग्र रहती है। वह बच्चा पड़ा-पड़ा अपने हाथ-पाँव मारता रहता है, कभी रोता है और कभी चितपट हो जाता है। इस प्रकार थोड़े ही दिनों में वह चलना सीख लेता है, परन्तु धनी के बच्चे को इस कार्य में बहुत दिन लग जाते हैं।

उपर्युक्त प्राकृतिक बात से जान पड़ता है कि भगवान् ने सभी जीवों को स्वावलम्बन शक्ति दी है और उसकी यह इच्छा है कि सभी इस शक्ति का उचित उपयोग करें, किसी के गलग्रह न बनें।

स्वावलम्बन शारीरिक और मानसिक उन्नतियों का एकमात्र सर्वोत्तम पथ है। इसके बिना किसी शक्ति की उन्नति नहीं हो सकती। विश्वविद्यालय की सबसे बड़ी उपाधि पाकर जितने स्वनामधन्य पुरुष निकले हैं और निकल रहे हैं, इनमें से प्राय: अधिकतर दरिद्रों के पुत्र हैं। उनके घर पर किसी दूसरे शिक्षक ने पाठ में सहायता नहीं दी। वे पुस्तकों के अभाव में इधर-उधर भटकते फिरे। उन्हें भोजन-वस्त्र के लिए भी आपत्तियाँ झेलनी पड़ीं। कहिये, वे इतने बड़े कैसे हुए? स्वावलम्बन के कारण। अब धनी के बच्चों को देखिये। उन्हें घर पर शिक्षक पढ़ाते हैं।

समय पर उनकी सभी आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं। उनको विद्या प्राप्त करने में किसी प्रकार की अड़चन नहीं डाली जाती। इतने पर भी वे अधिक भोंदू ही रहते हैं। कहिये, क्यों? उनमें आत्मनिर्भरता नहीं है। यूरोप के देशों की जो इतनी उन्नति है तथा अमेरिका, जापान आदि जो इस समय मनुष्य-जाति के सिर-ताज हो रहे हैं, इसका यही कारण है कि उन-उन देशों में लोग अपने भरोसे पर रहना अच्छी तरह जानते हैं। हिन्दुस्तान का जो सत्यानाश हो रहा है, इसका यही कारण है कि यहाँ के लोग अपने भरोसे पर रहना भूल गये। ईश्वर भी सानुकूल सहायक उन्हीं का होता है जो अपनी सहायता अपने आप कर सकते हैं। अपने आप अपनी सहायता करने की वासना आदमी में सच्ची तरक्की की बुनियाद है। अपने सुप्रसिद्ध सत्पुरुषों की जीवनी इसका उदाहरण तो है ही, वरन् प्रत्येक देश या जाति के लोगों में बल और ओज तथा गौरव और महत्त्व आने का आत्मनिर्भरता सच्चा द्वार है।

न होने से हानि

यदि हममें स्वावलम्बन नहीं तो हममें मनुष्यत्व नहीं। हम कौड़ी के तीन हैं। हम हाथ-पैर रहते भी लूले और लँगड़े हैं, आँख रहते अंधे हैं और कान रहते बहरे हैं। संसार में किसी जाति ने परा-वलम्ब की बेड़ी पहन कर उन्नति नहीं की। इस समय हम लोग दूसरे के भरोसे जीते हैं। यदि जापानी दियासलाई न दें, तो रसोई नहीं बना सकते। यदि विदेशी सूई-तागे नहीं भेजें, तो कपड़े नहीं पहिन सकते। ये ही क्यों, हमारे सभी कार्य दूसरों के भरोसे होते हैं। इसी कारण हममें ऐसा संस्कार घुस गया है कि हम अपने हाथों कोई कार्य करना लज्जा की बात समझते हैं। हम सबों ने अपने व्यक्तिगत स्वावलम्बन को खोकर अपने समाज को नहीं—बल्कि सारे भारत को परमुखापेक्षी बना डाला

है। यही कारण है कि हममें बाल-विवाह, कन्याविक्रय, दहेज लेना, घूसखोरी इत्यादि कुरीतियाँ घुस गई हैं।

यदि स्वावलम्बन को अपनाते तो गत महायुद्ध से हमारी जो हानि हुई न होती। कई विदेशी वस्तुएँ जो इस समय नहीं मिलती हैं या बहुत अधिक मोल पर मिल रही हैं—उनकी और अन्य अभावों की पूर्ति बात की बात में कर डालते और हमारी ऐसी दुर्गति भी न होती।

इसके साधन

जब यह बात स्वतःसिद्ध है कि हमारी उन्नति अपने ही करने से होगी, स्वावलम्बन से होगी, तब हमें उचित है इसके लिए भरपूर यत्न करें और अपनी आत्मा पर विश्वास करके कार्यक्षेत्र में पहुँच जायँ। जब ताता, विद्यासागर, बोनापार्ट इत्यादि महात्माओं ने यह प्रमाणित कर दिया कि स्वावलम्बन ही उन्नति की जड़ है और सच्चे हृदय से कार्य आरम्भ करने से वह अवश्य पूर्ण हो जायगा, तब हमें उचित है कि स्वालम्बन का आश्रय ग्रहण करके अपने देश को साहित्य कला-कौशलादि से भर दें। जब तक हम स्वयं कार्य करने के लिये तैयार न होंगे, तब तक कोई हमारी सहायता कभी भी न करेगा। 'अपनी करनी पार उतरनी'वाली कहावत के अभिप्राय को समझ लो और यह भी मन में बैठा लो कि संसार में कोई कार्य ऐसा नहीं है जिसको हम स्वावलम्बन, दृढ़-प्रतिज्ञा, सदभिप्राय और श्रमशीलता के बल से नहीं कर सकें।

उपसंहार

स्वावलम्बन का यह अर्थ न समझो कि हम सभी कार्य्य सब अवस्थाओं में अपने आपही करलें। जिन कार्यों को हम स्वयं नहीं कर सकते हैं या अपने कार्य्यों को दूसरों से करा कर उन के बदले अच्छे अच्छे कार्य कर सकते हैं, उन्हें अवश्य दूसरों की सहायता से करवालो। कहीं यह न हो कि तुम आलसी बन जाओ और अपने कार्य्य दूसरों पर टाल दो। बच्चों को माता पिता की, विद्यार्थियों को

शिक्षक की, बड़े कार्य्य में बड़े लोगों की और कठिन कार्य्य में समाज की सहायता आवश्यक है, परन्तु स्वयं कर सकने योग्य कार्य्यों में दूसरों की सहायता ढूँढ़ते फिरना अपने को परावलम्बन की बेड़ी पहनाना है। हे भगवन्!

"यह पापपूर्ण परावलम्बन चूर्ण होकर दूर हो।
फिर स्वावलम्बन का हमें प्रिय पुण्य पाठ पढ़ाइये॥"

अध्यवसाय (Perseverence)

भूमिका

हाथ में लिये कार्य को, अनेक बाधाओं के उपस्थित होते भी अविचलित होकर दृढ़ता से पूर्ण करके छोड़ने का संकल्प अध्यवसाय है। संसार में जितने भी चमत्कारिक पदार्थ दिखाई पड़ते हैं वे एक ही बार के उद्योग का फल नहीं। न मालूम उनके आविष्कारक को कितनी बार असफलता हुई होगी। क्या मालूम है कि रेल गाड़ी कितने वर्षों के परिश्रम से बनी वा कितने मनुष्यों ने अपने जीवन इस की खोज में अर्पण कर दिये। हवाई जहाज़ बनाने में कितने ही आदमी प्राणदान दे चुके हैं। व्यापारी लोग कई बार घाटा खाकर धनिक बनते हैं। नैपोलियन को कितनी बार पराजित होकर अन्त में यह नाम और विख्याति मिली है?

लाभ

कोई आदमी उन्नति नहीं कर सकता यदि वह परिश्रमी और साथ ही अध्यवसायी न हो। जो दशा व्यक्तियों की है वही जाति वा देशों की भी है। कुछ ही शताब्दियाँ पहले अंग्रेजों की क्या दशा थी! किन्तु देखो अध्यवसाय और परिश्रम के अवलम्बन से आज वे क्या कुछ बन गये हैं। अध्यवसाय ऐसा गुण है जिसका जितना अभ्यास बढ़ता जायगा उतना ही शुभ गुणों का समावेश भी होता

जायगा। नदी के आगे जितनी पत्थर, पहाड़ों की बाधाएँ आयँगी, उतना उसका वेग बढ़ता जायगा। अध्यवसायी पुरुष में सहिष्णुता, स्वावलम्बन, आत्मगौरव, नम्रता आदि गुण अपने आप आ जाते हैं।

अध्यवसायी का सभी लोग मान करते हैं। उसके आगे कोई कार्य असाध्य नहीं। वह ऐसे काम कर छोड़ जाता है जो संसार के लिये बड़े उपयोगी होते हैं। मरने पर भी उसका यश जगद्-व्यापी रहता है। जो लोग रेलगाड़ी, तार, जहाज़, टेलीफोन आदि कला बना कर छोड़ गये हैं, उनका नाम कभी भी संसार से मिटने का नहीं।

अकर्मण्यता रोगों की जड़ है। इसीलिये जो लोग अपने अवयवों से काम लेते रहते हैं, वे सदा स्वस्थ रहते हैं।

अध्यवसायी के कोष में 'असम्भव' शब्द नहीं है। उसके आगे कोई काम असम्भव नहीं। जो काम किसी मनुष्य ने किया है उसे हरएक मनुष्य कर सकता है, यदि वह उसके लिए पर्याप्त शक्तियाँ ख़र्च करे।

उदाहरण

स्काटलैंड के राजा ने छः वार शत्रुओं से युद्ध किया, किन्तु पराजित ही होता गया। अन्त में वह निराश होकर बैठ गया कि सामने उसे एक मकड़ा दिखाई दिया, जो एक वृक्ष पर चढ़ने की बड़ी कोशिश कर रहा था। वह कई वार नीचे गिरा, किन्तु उसका उत्साह न टूटा और अन्त में वह सफल हो गया। यह देख राजा का उत्साह बढ़ गया और सातवीं वार फिर उसने शत्रुओं पर चढ़ाई की। अन्त में उसकी विजय हो गई।

महाराणा प्रताप कई वार अकबर से लड़कर हारता गया। यहाँ तक कि उसे जंगलों में मारे-मारे फिरना पड़ा। किन्तु उसने हौसला नहीं छोड़ा। अन्त में अपना सारा राज्य लौटा कर

ही दम लिया। पुराणों में आता है कि सगर के वंश से लेकर अनेक राजाओं ने आकाश से गंगावतरण के लिए यत्न किया किन्तु कोई कृतकार्य न हुआ। अन्त में भगीरथ ने विकट तपश्चर्या से वह कार्य करके छोड़ा। कोलम्बस को अमेरिका-प्राप्ति में कितनी बाधाओं का सामना करना पड़ा होगा।

हमारे धनकुबेर सर नशरवान जमसेर ताता को कितनी बार घाटे खाने पड़े परन्तु वे हतसाहस नहीं हुए।

खेद है कि भारत में आलस्य ने ऐसा डेरा जमा रखा है कि अध्यवसाय का यहाँ चिन्ह तक नहीं दीखता।

उपसंहार

इसी लिए हम परमुखापेक्षी बने हुए हैं। प्रतिवर्ष लाखों लोग दुर्भिक्ष के ग्रास हो जाते हैं। कोई वस्तु नहीं जिसके लिए हम पराधीन न हों। गत महायुद्ध में जहां अन्य देश मालोमाल हो गये हैं हम वैसे के वैसे ही रह गये। इसका कारण हमारी अपनी मूर्खता है।

कई साधु, याचक हमारी दान की कुप्रथा के कारण देश के कन्धों पर बोझसा पड़े हुए हैं। यह सभी कुछ परिश्रम और अध्यवसाय न होने का फल है। अब कला कौशल खोलने की ओर लोगों की कुछ प्रवृत्ति होने लगी है। परमात्मा इसकी वृद्धि करें।

यदि चाहते हो कि हमारे बाल बच्चे भूखे न मरें, यदि चाहते हो कि हमारा देश परमुखापेक्षी न हो कर स्वतन्त्र हो, यदि चाहते हो कि हम अपने नाम को अमर कर छोड़ मरें तो परिश्रम और अध्यवसाय तुम्हारे मूल मन्त्र हों।

समयानुवर्तन (Punctuality)

भूमिका—स्वीकृत कार्य को समय पर करना। सफलता की पहली सीढ़ी। लोग भूल से इसे मान हानि समझते हैं।

लाभ—विश्वास-कारण, मान होता है। समय अमूल्य रत्न, उसे खोना मूर्खता है। व्यापार में लाभ। समय पर काम करने से सुभीता और प्रसन्नता। इससे दूसरों से आदर होता है।

उदाहरण—सभी महापुरुषों का आवश्यक गुण। नैलसन पाव घंटा काम पर पहले पहुँचता था। नैपोलियन की सफलता की कुञ्जी। वाशिंगटन और उसका मन्त्री।

न होने से हानि—प्रतिज्ञा-भङ्गदोष, व्यापार में हानि। युद्ध में पराजय। रेलगाड़ी पर नहीं पहुँच सकता। कई दैनिक कार्य छोड़ने पड़ते हैं। लज्जित होना पड़ता है।

उपसंहार—पुरुष का गुण, युवकों का स्कूल में ही इसका अभ्यास। भारत में इसकी कमी।

स्वदेशाभिमान

भूमिका चित्त में मातृभूमि के लिए इतना प्रेम हो कि उसका कष्ट न सहा जाय यह स्वदेशाभिमान है। मनुष्य के हृदय में यह गुण स्वभावतः रहता है। हाँ, यह हो सकता है कि उसके विकास का कोई अवसर न न मिला हो। पूर्व और पश्चिम की सभ्य जातियों के हृदय में जिस तरह इसकी आग धधक रही है वैसे ही असभ्य जातियाँ भी इससे खाली नहीं। जिन पहाड़ी देशों में बारह मास बरफ पड़ी रहती है, खाने को कुछ मिलता नहीं, पशुचर्म से लोग अपना तन ढांपते हैं—क्या वहाँ के रहने वाले के हृदय में आप से कम स्वदेशाभिमान है? जङ्गली पशु भी अपने स्थान को छोड़ना मृत्यु-सम समझते हैं। जिसके हृदय में स्वदेशाभिमान अंकुरित होजाय स्वार्थता उसके कोसों दूर भागती है। जब कभी देश छोड़ कर बाहिर जाना हो तो हृदय में देशानुराग पूर्ववत् रहता है। चित्त में यही इच्छा रहती

है कि कब स्वदेशमुख फिर देखेंगे। संस्कृत में कैसा अच्छा कहा है 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'। इसीलिए जब किसी को कड़ा दण्ड देना होता है तो उसे देश-निर्वासन दे देते हैं क्योंकि इससे मनुष्य को असह्य कष्ट होता है।

यदि मातृभूमि पर कोई कष्ट आगया हो तो प्रत्येक सैनिक का अनुष्ठान कर्तव्य है क प्राण तक दे दे किन्तु मातृभूमि को उस कष्ट में न रहने दे।

देश के नीतिज्ञ पुरुषों की महत्ता इसी में है कि वे सदा देशोन्नति की धुन में लगे रहें। क्या व्यापार, क्या कला कौशल, क्या जनसंख्या, क्या विद्या इन सब में जब तक उनका देश सर्वाग्रणी न हो जाय तब तक उन्हें शान्त नहीं बैठना चाहिए।

स्वदेश कई व्यसनों में पड़ा हो, उस पर कई अत्याचार हो रहे हों, सामाजिक बुराइयों का वह घर बना हो और फिर सुधारक जिसके हृदय में सच्चा स्वदेश प्रेम हो चुपचाप रहे—इसका विश्वास नहीं होता! किन्तु सुधारकों का काम बड़ा कठिन है। उस समय के लोगों से न तो उन्हें उत्साह की आशा होती है और न यश की। यह ऐसा ही है जैसा कोई एक मनुष्य आम्र पेड़ लगाये और उसके फल उसके पीछे पुत्र पौत्र खायें।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह मन, वचन और कर्म से वे ही काम करे जिससे देश की प्रतिष्ठा में कोई हानि न हो। सुधारकों को सहायता देना, व्यवस्थापक कौंसलों में उन पुरुषों को भेजना जो उस काम के योग्य हों, घरकी सफाई रखना जिससे देशी व्यापार की वृद्धि हो—इत्यादि प्रत्येक नागरिक के कर्त्तव्य हैं।

यों तो प्रत्येक देश में बड़े २ स्वदेशाभिमानी जन हुए हैं किन्तु जितने अवसर रोम के लोगों को स्वदेश प्रेम उदाहरण दिखाने के मिले हैं उतने और किसी को नहीं

मिले। थर्मापली की लड़ाई में लियोनीदास का शत्रुप्रतिरोध प्रसिद्ध है। इटली के प्रसिद्ध नेता गेरीवाल्डी की वीरता किससे कम है! नेलसन में कितना स्वदेशप्रेम था! महाराणाप्रताप और पृथ्वीराज ने सब ऐश्वर्यभोग पर लात मार कर स्वदेशरक्षा के लिये क्या कुछ नहीं किया!

भारत के आधुनिक नेतादल में कौन किससे कम है? स्वनाम-धन्य महात्मा गांधी जी सभी सुखसम्पत्ति छोड़ किसके लिए कष्ट पर कष्ट उठा रहे हैं?

स्वदेशाभिमान सच्चा और झूठा दोनों होते हैं। झूठा यह है कि पुरुष के हृदय में यह झूठा अभिमान हो कि हमारा देश पूर्णतया उन्नत हो चुका है, इसकी सभा संस्थाएँ निर्दोष हैं और जब कभी किसी सुधार की चर्चा हो तो इसी गर्व से उसका प्रतिवाद किया जाय।

भेद

सच्चा अभिमान यह है कि सदा यही ख्याल रहे कि हमारे देश में कोई बुराई न रहे, कोई बुराई दिखाई दी नहीं और उसे निकाल फेंका नहीं। अपने स्वार्थ पर लात मारकर मातृभूमि की सेवा का विचार हो। ऐसी पुरानी सस्थायें जो लाभप्रद हों, उन्हें न मिटने देना चाहिये।

जिस देश में ऐसे पुरुष हों उसे किसका डर है? उसकी ओर शत्रु देख तक नहीं सकता। भारत के हतभाग्य से कई सालों से इसके पुत्र दीर्घ निद्रा में सोते थे, अब उनकी नींद कुछ खुलने लगी है।

उपसंहार

निज मातृभूमि की करे न सेवा जो जन।
जानो प्यारे, उसका निष्फल है जीवन।
वह नर है सोचो पशुसमान जग माहीं।
जाको स्वदेश का है घमण्ड कछु नाहीं।

स्वास्थ्य-रक्षा

भूमिका—शरोर की नीरोगता। शरीर के प्रत्येक अंग का काम करना।

आवश्यकता—रुग्ण कोई काम नहीं कर सकता। सभी पदार्थ उसके लिए निष्फल। जीवन बोझ।

लाभ—चित्त प्रसन्न। सांसारिक तथा पारलौकिक कार्य की क्षमता। चित्त काम करना चाहता है।

स्वास्थ्य हीनता से हानि—सुख नष्ट, स्वभाव चिड़चिड़ा। कोई काम नहीं कर सकता, जीवित भी मृतवत्।

उपाय—खान पान की शुद्धि। व्यायाम। वायुसेवन। नियमानुसार हर एक काम। विश्राम इत्यादि।

उपसंहार—प्रत्येक को इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए।

प्रस्ताव

भूमिका परिचय व भेद

जिस कार्य्य के करने से हमारे अंग प्रत्यङ्गों का परिचालन हो उसे व्यायाम कहते कहते हैं। कुस्ती करना, मुदगर बाना, पट्टा आदि भांजना, दण्ड व कसरत करना, कबड्डी खेलना, दौड़ना, टहलना, तैरना, नाव खेना, घोड़े पर चढ़ना इत्यादि अनेक प्रकार के व्यायाम हैं। भारत में अंग्रेज़ों के आगमन से फुटवाल, हाकी, क्रिकेट, टेनिस खेलना व डम्बल भाँजना इत्यादि व्यायामों का भी प्रचार हो गया है।

आवश्यकता

जो लोग मानसिक परिश्रम ही अधिक करते हैं वे यदि उपर्युक्त किसी व्यायाम को न करें तो दिन रात बैठे २ उनके अङ्ग प्रत्यङ्गों की परिचालना न होने से उनका शरीर अस्वस्थ हो जायगा। यदि किसी यन्त्र से कुछ काम न लिया तो उस में मुर्चा लग जायगा और

थोड़े दिनों के पश्चात् वह यन्त्र किसी काम का न रहेगा। शरीर की भी ठीक यही दशा है, यदि उसके अंग प्रत्यङ्गों की परिचालन-क्रिया नियमानुसार न हो तो वह बेकार हो जायगा। शरीर के रोगी तथा शक्तिहीन होने से मानसिक शक्तियों में भी विकार उत्पन्न हो जायगा और इनके विकृत हो जाने से मनुष्य को अनेकों प्रकार की यन्त्रणाओं का उपभोग करना पड़ेगा। जिन्हें शारीरिक परिश्रम अधिक करना पड़ता है उन्हें व्यायाम न करने से भी कोई क्षति नहीं है; क्योंकि उनके कार्य ही से उनकी अङ्ग-परिचालना हो जाती है और यही उनके लिए यथेष्ट व्यायाम हो जाता है।

लाभ

व्यायाम न करने से शरीर हृष्ट पुष्ट व बलवान होता है। देखा जाता है कि मनुष्य अपने शरीर के जिस अङ्ग से अधिक कार्य्य करता है वह अङ्ग और अङ्गों की अपेक्षा अधिक बलवान होता है। लोहार व मिस्त्री के हाथों में, भिस्ती के पीठ में, डाक दौड़ाहे के पैर में और अङ्गों की अपेक्षा अधिक बल होता है। कुस्ती करने वालों के प्रत्येक अङ्ग बलिष्ठ व हृष्ट पुष्ट दीख पड़ते हैं। घोड़े पर चढ़ने वालों के जंघे में अधिक बल होता है। व्यायाम करने से पाचन शक्ति बढ़ती और भूख अधिक लगती है। व्यायाम से शरीर में पसीना अधिक उत्पन्न होता है, और पसीने के साथ शरीर का मल बाहिर निकल जाता है। इससे रोगों का भय दूर हो जाता है। शरीर के निरोग रहने ही पर जीवन सुखमय जान पड़ता है। शरीर के रुग्ण होने से सांसारिक सुखमय पदार्थ भी दुःखमय हो जाते हैं। मानसिक परिश्रम के उपरान्त किसी व्यायाम के करने से मन में एक प्रकार की स्फूर्ति और नयापन आ जाता है। व्यायाम के पश्चात् मानसिक परिश्रम में अधिक जी लगता है। कितने व्यायाम ऐसे हैं जो अकेले नहीं हो सकते। ऐसे व्यायामों से मनबहलाव के अतिरिक्त सहानुभूति, मिलकर कार्य्य करना, साहस, धैर्य्य,

स्थिरता, लक्ष्य पर ध्यान रखना, सहिष्णुता तथा प्रत्युत्पन्नमतित्व इत्यादि गुण उत्पन्न होते हैं। अनेक व्यायामों (खेलों) में विलम्ब से पहुँचने पर मनुष्य व्यायाम से उस दिन के लिए वहिष्कृत कर दिया जाता है। इससे समयानुवर्तिता का प्रधान गुण सीखा जा सकता है।

भारत में व्यायाम का बहुत ही अधिक प्रचार व आदर था।

भारत की पहले की और अब की दशा

प्रत्येक व्यक्ति व्यायाम करना परमावश्यक समझता था इसी से भारतभूमि की सन्तानों की वीरता सारे जगत में विख्यात थी। पर खेद के साथ कहना पड़ता है कि पाश्चात्य शिक्षा के प्रचार से यहाँ के लोग व्यायाम से घृणा करने लगे हैं। पर आश्चर्य्य तो यह है कि पाश्चात्यनिवासी अपने देशी व्यायामों में पूरी श्रद्धा रखते हैं, परन्तु हम उन्हीं का अनुकरण करने पर भी "धोबी का कुत्ता घर का न घाट का" के अनुसार देशी और विदेशी दोनों ही से श्रद्धाहीन होगये। अब इससे जो हमारे देश की दुर्दशा हो रही है वह आँखों ही देख रहे हैं। बेचारे विद्यार्थी नाना रोग के शिकार बन रहे हैं, डाक्टर की फीस से लाचार रहते हैं। बनिया महाजन बैठे २ मोटे हो थोड़ी दूर भी चलने में असमर्थ हैं, बेचारे सोनारों की कमर बैठे २ प्राय: टूट सी जाती है। अजीर्ण, मन्दाग्नि इत्यादि रोग व्यायाम न करने ही से उत्पन्न होते हैं।

शरीर की अवस्था के अनुसार जो व्यायाम उपयुक्त जान पड़े

उपयोगी व्यायाम

उसी का अभ्यास करना उचित है। सभी को एक प्रकार का व्यायाम समान उपयोगी नहीं हो सकता। विदेशी व्यायाम व्यवसायापेक्ष है जो इस भारत से दरिद्र देश में सब के निमित्त सुलभ न होने पर सबके लिये उपयुक्त नहीं। किन्तु हमारे देशी व्यायामों में प्राय: कुछ भी व्यय की आवश्यकता नहीं है। ये धनी दरिद्र

सबके निमित्त सुलभ हैं। अपनी आर्थिक व शारीरिक अवस्था विचार करके किसी प्रकार के व्यायाम का रखना आवश्यक है। प्रातः या अन्य काल में निर्दिष्ट समय पर खुले मैदान में व्यायाम करना अधिक उपयोगी है। यह स्मरण रखना चाहिये कि व्यायाम नियमविरुद्ध होने से लाभ के बदले हानि ही अधिक होती है।

विश्राम

व्यायाम का अभ्यास बहुत ही उत्तम व आवश्यक है इसमें तनिक भी सन्देह नहीं, पर किसी वस्तु का अधिक होना लाभ के बदले हानि पहुँचाता है। भोजन शरीर के निमित्त परमावश्यक है पर अतिरिक्त भोजन से अजीर्ण हो जाता है। वैसे ही अतिरिक्त व्यायाम से भी अनेकों दोष उत्पन्न होते हैं।

उपसंहार

अंग्रेज अपने नियमित समय पर किसी न किसी प्रकार के व्यायाम का अभ्यास अवश्य ही रखते हैं। इसी से ये बलवान्, नीरोग तथा हृष्ट पुष्ट होते हैं। हम लोगों को इस पर विशेष दृष्टि रखना उचित है।

उद्धृत

ब्रह्मचर्य

भूमिका

ब्रह्मचारी के उपास्य मार्ग को ब्रह्मचर्य कहते हैं। या यों कहिए कि जो ब्रह्मचर्य मे रहता है वह ब्रह्मचारी है। ब्रह्मचर्य का मुख्य सम्बन्ध है वीर्य रक्षा से। वीर्यरक्षापूर्वक जो विद्यार्थी विद्याध्ययन करता है यथार्थ में वही ब्रह्मचारी है। ब्रह्मचर्य के अनेक नियमों में जितेन्द्रियता का माहात्म्य बहुत बड़ा है। पहले ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के बालक यज्ञोपवीत के अनन्तर गुरुकुल में वास कर ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्याध्ययन करते थे, परन्तु अब यह व्यवस्था विलुप्तप्राय हो

हो गई है। अब अध्ययन का नियम बिलकुल बदल सा गया है। ब्रह्मचर्य की ओर किसी का ध्यान नहीं रहा। एक ही दिन में चूड़ाकरण, उपनयन, वेदारम्भ और समावर्तन कर्म समाप्त हो जाते हैं। दूसरे ही दिन गार्हस्थ्यधर्म में प्रवेश करके द्विजकुमार विवाह सूत्र में बद्ध हो ब्रह्मचारी से गृहस्थ बन जाते हैं। यद्यपि ब्रह्मचर्य का पालन मनुष्यमात्र के लिये विधेय है तथापि कोई भारत वासी इस ओर विशेष लक्ष्य नहीं देता। इसी का यह परिणाम है कि आज सारा भारत दीन हीन अवस्था में पड़ कर दूसरे का मुँह ताक रहा है। बिना ब्रह्मचर्य के कोई उच्च उद्देश्य का साधन नहीं कर सकता। जो लोग ब्रह्मचर्य से च्युत हैं वे आप तो ब्रह्मचर्य से वंचित होते ही हैं, उनकी सन्तान भी निस्तेज होती है। उत्तरोत्तर ब्रह्मचर्य का लोप होने ही से यह देश अधोगति को प्राप्त हो गया है। जहाँ देखिये वहीं रोग, शोक, सन्ताप, आलस्य, निरुत्साहता साहसहीनता, ईर्ष्या, द्वेष, मिथ्याडम्बर, प्रेमशून्यता, आदि अनेक दोषों का साम्राज्य फैल रहा है।

पढ़ने का मुख्य फल लोगों ने द्रव्योपार्जन समझ लिया है और उपार्जन की पहली सीढ़ी नौकरी मान ली गई है। पढ़ने से कोई नौकरी अवश्य मिलेगी यह धारणा प्रायः सभी छात्रों के मन में रहती है यहाँ तक कि कितने राजे महाराजे वैतनिक सेवा को प्रतिष्ठामूलक समझ उसे चरितार्थ करते हैं। फिर जो छात्र केवल नौकरी के लिये विद्याध्ययन करते हैं, वे नौकरी मिल जाने पर विद्या पाना सफल समझें तो आश्चर्य ही क्या है? परन्तु जिस ब्रह्मचर्य के प्रभाव से मनुष्य कठिन साधन को अनायास सिद्ध कर सकते हैं उसकी वे कभी स्वप्न में भी भावना नहीं करते। 'विद्या पढ़ो चाहे न पढ़ो, किन्तु ब्रह्मचर्य का पालन अवश्य करो' ऐसा कहने वालों या इस सिद्धान्त पर चलने वालों की संख्या बहुत कम है। आज कल जो लोग

लाभ

दूसरों की वैज्ञानिक विद्या, शारीरिक बल, सुन्दर सन्तान, यथेष्ट धन और नाना प्रकार के सुख देखकर तरसते हैं, उन्हें ब्रह्मचर्य की महिमा गाकर सन्तोष करना चाहिये। अन्य युग में इस ब्रह्मचर्य के प्रभाव से ही बड़े बड़े ब्रह्मनिष्ठ ऋषिगण, बड़े बड़े योगी, बड़े बड़े युद्धवीर, धीर ऐश्वर्यवान और धर्मनिष्ठ हो गये हैं। उनके चरित इतिहासों में उल्लिखित हैं, उनके पवित्र नाम अब भी प्रातःस्मरणीय हो रहे हैं।

उदाहरण

पहले की बात जाने दीजिये, वर्तमान युग में भी कितने ही आदर्श पुरुष विद्यमान हैं, जो अपने ब्रह्मचर्य का माहात्म्य प्रत्यक्ष दिखा कर लोगों को शुभमार्ग की ओर खींच रहे हैं। हम तो नवयुवक छात्रों से यही बार बार विनय पूर्वक कहेंगे कि यदि आप विद्यासागर पं० ईश्वरचन्द्र के सदृश दयालु, महर्षि दयानन्द सरस्वती के सदृश उदारचेता, राजा राममोहन राय के सदृश देशोपकारी, रजौर के राजा श्रीबुद्धिनाथ चौधरी के सदृश सुसन्ततिमान्, ममामहोपाध्याय श्रीशिवकुमार मिश्र के सदृश विद्वान्, श्रीमान् रासविहारी घोष के समान दान शील और श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर के सदृश साहित्यवेत्ता तथा कलियुगी भीम श्रीराममूर्ति के समान बलिष्ठ होना चाहते हैं तो ब्रह्मचर्य का पालन करें।

विद्यार्थियों के लिए आवश्यक

ब्रह्मचर्य्य क्या है मानो एक प्रकार का तप है। छात्रावस्था में तपोनिष्ठ होना नितान्त आवश्यक है। विद्यार्थियों के लिये ब्रह्मचर्य्यपूर्वक विद्याध्ययन करना ही तप है, लिखा भी है 'छात्राणामध्ययनं तपः।' पढ़ने के सिवाय कभी अपने मन को विषयवासना की ओर न जाने देना ही तप है। जिस विद्या के पढ़ने से ज्ञान की प्राप्ति हो, ईश्वर की पहचान हो, अज्ञान का नाश और सुजनता का विकाश हो वह तप नहीं तो और क्या है? परन्तु आजकल

बहुधा विद्या पढ़ने का फल उलटा ही देखने में आता है। कितने ही विद्यार्थियों में विलासप्रियता, अधीरता, अजितेन्द्रियता आदि अनेक दोष देखे जाते हैं। देखने वालों के मन में मर्मान्तिक पीड़ा होती है। यदि विद्या पढ़कर सच्चरित्र न हुए, कुछ देशोपकार न किया तो विद्या पढ़ने का फल क्या हुआ!

कितने ही विद्यार्थी तो ब्रह्मचर्य्य के अभाव से बराबर रोगी रहा करते हैं, जिस से उनके पढ़ने में बड़ी हानि पहुंचती है। वे भली भांति अपने पाठ को याद नहीं कर सकते। पाठ भली भांति याद न होने के कारण वे परीक्षा में फेल होकर खूब पछताते हैं। तीक्ष्ण बुद्धि होने पर भी वे मन्दबुद्धि की उपाधि से विभूपित होते हैं। जब कोई मोटी बुद्धिवाला सच्चरित्र छात्र पढ़ने में उनके आगे बढ़ जाता अथवा परीक्षा में अधिक नम्बर लाता है, तब उनके मन में ग्लानि की सीमा नहीं रहती। जब वे जितेन्द्रिय पुरुषों के तेजःपूर्ण मुख की दिव्य कान्ति देखते हैं तब उन्हें अपने मुरझाये चेहरे पर अत्यन्त खेद उत्पन्न होता है। अत्यन्त दुःख तो उन्हें तब होता है जब वे अपनी इस कान्तिहीनता का कारण तपोभ्रष्ट होना समझते हैं। जब वे मैट्रिकुलेशन परीक्षा पास होते न होते बच्चों के बाप बन बैठते हैं तब अपने अविवाहित हृष्टपुष्ट युवा साथी का अदम्य उत्साह और जितेन्द्रियता देख उन्हें बड़ी लज्जा होती है। पढ़ने लिखने से जी उनका उलट जाता है। अपनी प्रणयिनी के कृत्रिम प्रेम पर मुग्ध हो वे पढ़ना लिखना भूल जाते हैं। विद्याध्ययन उन्हें भारसा प्रतीत होता है। किन्तु कुछ ही दिनों में जब उन की मोहनिद्रा टूटती है तब वे अपनी नासमझी पर घृणित आत्महत्या किंवा गृह-त्याग करने को तैयार हो जाते हैं। जिस ब्रह्मचर्य्य की उपेक्षा से मनुष्य मनमाना सुख नहीं पा सकता, उस ब्रह्मचर्य्य को हाथ से जाने देना मानो अपने हाथ अपने पैर में कुल्हाड़ी मारना है।

छः सात वर्ष के छोटे बच्चे जब पाठशाला में पढ़ने को

जाते हैं तब उन की भोलीभाली सूरत, सरल स्वभाव और निर्मल चित्त देख किसे दया नहीं होती ! उनके मां बाप की तो कोई बात नहीं, शायद कोई राक्षस भी ऐसा न होगा जो उन को बिगाड़ने की चेष्टा करे। परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि ऐसे भोले-भाले बालक अपने ऊपर की श्रेणी के असच्चरित्र विद्यार्थियों से कुव्यवहार की शिक्षा ग्रहण कर थोड़े ही दिनों में बिगड़ जाते हैं। उनका कोमल निष्कलङ्क हृदय अनेक दोषों का भण्डार बन जाता है जो लाख यत्न करने के पीछे सद्‌गुण का स्थान नहीं बनने पाता। यदि ऊपर के दरजे के विद्यार्थी सच्चरित्र हों, सच्चे ब्रह्मचर्य्य के उपासक हों तो वे अपने अनुगत विद्यार्थियों का बहुत कुछ सुधार कर सकते हैं, विद्यार्थियों का ही नहीं, सारे देश का उपकार कर सकते हैं।

विद्यार्थी की सच्चरित्रता के साथ साथ गुरु का सच्चरित्र होना और भी नितान्त आवश्यक है। बहुधा देखा गया है कि जो गुरु अच्छे पढ़े लिखे हैं, परन्तु चरित्र उनका ठीक नहीं है तो उनके संसर्ग से कितने ही विद्यार्थी भी असच्चरित्र हो जाते हैं। जिन विद्यार्थियों के गुरु सच्चरित्र, धर्मनिष्ठ और दयालु होंगे उनके विद्यार्थी भी प्रायः वैसे ही होंगे। मनुष्यों का यह स्वभाव है कि वे अपने से श्रेष्ट पुरुष की देखादेखी काम करते हैं। गीता में लिखा है—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥

जो लोग जिन के अधीन रहते हैं, उनके आचरण का कुछ कुछ असर उन के आश्रितों पर अवश्य पड़ता है। अतएव यदि मां बाप अपनी सन्तानों को, गुरु अपने विद्यार्थियों को, पति अपनी पत्नी को, मालिक नौकरों को और राजा अपनी प्रजाओं को सच्च-रित्र बनाना चाहें तो पहले आप अपने चरित्रगत दूषण को दूर करें। जब अपने चरित्र को विशुद्ध रक्खेंगे तब हमारे आश्रित भी अपने चरित्र के सुधार की ओर ध्यान देंगे।

यद्यपि हमारी सरकार शिक्षकों की सच्चरित्रता पर विशेष ध्यान रखती है और वह चाहती है कि सच्चरित्र अध्यापकों के ही द्वारा छात्रगण सुशिक्षित हों तथापि ब्रह्मचर्य के निरादर से कुछ न कुछ गड़बड़ी मच ही जाती है।

सच्चरित्रता का मुख्य साधन ब्रह्मचर्य है। जिसने ब्रह्मचर्य का पालन किया, सच्चरित्रता मानो आपसे आप उसके हाथ आ गई। सब इसी एक ब्रह्मचर्य के भीतर छिपे हैं सत्य, शौच, सन्तोष, क्षमा, दया, मैत्री आदि गुण जो एक से एक बढ़ कर दुर्लभ हैं और मनुष्यों के भूषण हैं, वे ब्रह्मचारियों के लिए बड़े सुलभ हैं। ब्रह्मचारी उन गुणों को अनायास पा सकते हैं।

ब्रह्मचर्य का गुण गाने में हम सर्वथा अक्षम हैं। जो उच्चाभिलाषी छात्र महाशय ब्रह्मचर्य की महिमा जानना चाहें वे स्वयं ब्रह्मचर्य की उपासना करके इसके महत्त्व का अनुभव कर लें। हम आशा करते हैं कि विद्यार्थीगण अधिक नहीं तो बीस वर्ष की उम्र तक इस अनमोल ब्रह्मचर्य का उचित रीति से पालन कर अतुलनीय तेज प्राप्त करके भारत का गौरव बढ़ावेंगे।

उपसंहार

ब्रह्मचर्य के लिये न धन की, न समय की और न स्थानविशेष की आवश्यकता है। आवश्यकता है केवल दृढ़ प्रतिज्ञा की। जभी से चाहिये इसका नियम कीजिये। कुछ ही दिनों में आप इस ब्रह्मचर्य के मधुर फल का आस्वादन कर अवश्य कृतार्थ होंगे। आपका शरीर बलिष्ठ होगा, आपका आध्यात्मिक बल बढ़ेगा। आप देशोन्नति करने में समर्थ होंगे, विद्वन्मण्डली से आपका आदर होगा। आपके पास धन की कमी न रहेगी। सुन्दर, सुशील सन्तानों से भारत की शोभा बढ़ाकर अन्त में आप देवत्व लाभ करेंगे।

विद्यार्थी से (उद्धृत) पं० जनार्दन झा।

व्यापार (TRADE)

भूमिका—एक वस्तु के बदले दूसरी ज़रूरत की वस्तु लेना व्यापार है। देशान्तरों की बनी व उपजी चीजों के विनिमय से सब का निर्वाह। व्यापार बहुत पुराने समय से जारी। इस समय इसकी उन्नति।

व्यापारी के गुण—उद्योग, पक्का विचार, दूरदर्शिता, हौसला, कार्य तत्परता, खरीदारों की परख। बोलने की चातुरी इत्यादि।

लाभ—आर्थिक लाभ। स्वतन्त्रता, परस्पर स्पर्द्धा, कामों की वृद्धि, सभ्यता, देशाटन, स्वास्थ्य, दुर्भिक्ष में अन्यदेशों से अन्न लाना।

उदाहरण—पाश्चात्य जातियां, जापान।

उपसंहार—भारत में व्यापार की कमी, कारण कच्चे माल को विदेशियों के हाथ बेच डालना। राजा की सहायता के बिना उन्नति असम्भव। नये सुधार में इसका शासन निर्वाचित मंत्रियों के अधीन, उन्नति की आशा।

मितव्ययिता (Thrift)

भूमिका—आय से कम खर्च। आगे के लिए धन जोड़ना।

लाभ—थोड़ा २ धन बचाने से धनाढ्य बनना। चित्तसंयम की शिक्षा। आत्मगौरव और स्वतन्त्रता। निर्धनों की रक्षा, विपत्ति में सहायता। इमानदार रहने की कुञ्जी।

न होने से हानि—कुछ काल के लिए विलासिता किन्तु विपत्तियों में कष्ट, कुटुम्ब की दुर्दशा, दूसरों की गुलामी, प्रायः मज़दूर लोग इस श्रेणी के। उनकी शिक्षा के अभाव का फल।

मितव्ययी बनने के उपाय—मानुषिक स्वभाव नहीं। दृष्टान्त—हबशी-जातियां। बाल्य में इसका अभ्यास, आय के अन्दर खर्च, उधार

न लेना। शादी आदि तथा विलासिता में धन खर्च न करना, आय व्यय का हिसाब रखना।

उपसंहार—मितव्ययिता कन्जूसी नहीं। राष्ट्रीय और सामाजिक मितव्ययिता।

स्मृतिशक्ति

भूमिका

हम देखते हैं कि पाठशालाओं में बहुत से विद्यार्थी साथ साथ ही पढ़ते हैं, गुरुजी बराबर सभी को समान शिक्षा देते हैं, परन्तु फल में बहुत भेद देख पड़ता है। एक विद्यार्थी जी तोड़ कर परिश्रम करता है और दूसरा सामान्य परिश्रम करता है परन्तु अधिक परिश्रम करनेवाला विद्यार्थी उस सामान्य परिश्रम करने वाले विद्यार्थी की बराबरी नहीं कर सकता है। इसका क्या कारण है? बहुत से लोग इस भेद को देख कर कहते हैं कि पूर्व जन्मों के कर्मों से विद्या प्राप्त होती है। निसन्देह सन्तोष करने के लिये यह बात उपयुक्त हो सकती है, परन्तु असली बात यह नहीं है।

अध्ययन का फलाफल विशेष कर मन और मस्तिष्क की शक्तियों पर अवलम्बित है। उनमें प्रत्युत्पन्नमतित्व, प्रज्ञा, स्मृति-शक्ति आदि प्रधान हैं। इन्हीं शक्तियों के न्यूनाधिक होने के कारण फल में भी भेद होता है। इस समय लोगों की जो यह धारणा है, कि पूर्व जन्म के उत्तम कर्मों के फल से विद्या आती है, बड़ा अनर्थ कर रही है, क्योंकि यह सिद्धान्त लोगों को उपाय करने से रोकता है। पूर्वजन्म के कर्मों को उत्तम बनाना तो हमारी शक्ति के बाहर की बात है। अतएव विद्यार्थी, जिन में प्रज्ञा या स्मृति-शक्ति कम है, निराश होकर बैठ जाते हैं और सदा के लिये पढ़ना छोड़ देते हैं तथा पूर्वजन्म के कर्मों के लिये झींखते हैं।

भारतीय बच्चों का यह विश्वास है कि स्मृतिशक्ति परमात्मा

की देन है, मैं बड़ा अभागी हूँ कि मुझ में वह शक्ति नहीं है—इस प्रकार उनका दुःख करना बड़े दुःख की बात है। जिस प्रकार शरीर की अन्य शक्तियाँ बढ़ाई जाती हैं, जिस प्रकार निर्बल मनुष्य दवा खाकर बलवान् हो जाता है, उसी प्रकार स्मृतिशक्ति भी बढ़ाई जा सकती है। स्मृतिशक्ति भी शरीरसम्बन्धी एक गुण है। जिस प्रकार कोई दुर्बल मनुष्य दवा खाता है जिस से उसका दुर्बल शरीर मोटा हो जाता है और साथ ही साथ वह मनुष्य बलवान् भी हो जाता है उसी प्रकार औषधप्रयोग से मस्तिष्क के आकार में भी परिवर्तन किया जा सकता है, जिस से स्मृतिशक्ति बढ़ सकती है। जिस प्रकार माता पिता की दुर्बलता और सबलता का प्रभाव बालकों पर पड़ता है उसी प्रकार उनकी स्मृतिशक्ति का भी। इसी कारण किसी लड़के की स्मृतिशक्ति अच्छी और किसी की अच्छी नहीं होती, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि जिसकी स्मरणशक्ति अच्छी नहीं है उसकी स्मरणशक्ति अच्छी हो ही नहीं सकती। यह ठीक है स्मृतिशक्ति के बढ़ाने के लिए बाल्यावस्था से ही प्रयत्न करना चाहिये, और जो लोग बाल्यावस्था में इस शक्ति की उपेक्षा करते हैं, उनकी स्मृतिशक्ति धीरे धीरे घट जाती।

शरीर के स्नायुओं में यथावत् संचालन होते रहने से उनकी शक्ति बढ़ जाती है। यही आधुनिक शरीरशास्त्रवेत्ताओं का कहना है। स्नायुओं का ठीक ठीक परिचालन होने से मस्तिष्क का कितना ही भाग निर्बल अतएव अकर्मण्य हो जाता है। वह निर्बल भाग किसी भी काम के लिये उपयुक्त नहीं हो सकता। इसका परिणाम बड़ा बुरा होता है। वे स्नायु भी धीरे धीरे निर्बल हो कर नष्ट हो जाते हैं, मानसिक दुर्बलता आ जाती है, शरीर अवसन्न हो जाता है, अकाल ही में भयंकर बुढ़ापे का दर्शन हो जाता है। इस लिये यह बहुत आवश्यक है कि शरीर के स्नायु यथावत् परिचालित होते रहें। उनके परिचालित होने से शारीरिक स्वस्थता बनी रह

सकती है तथा वह सबल और सवेग मन सभी कामों को ठीक ठीक कर सकता है।

सर डबल्यु एच बेली एक बड़े भारी पण्डित हैं। उन्होंने स्मृतिशक्ति के बढ़ाने के उपाय बताये हैं जो नीचे लिखे जाते हैं। आशा है विद्यार्थी अवश्य ही इससे लाभ उठावेंगे।

उपाय

मान लो कि तुमको एक श्लोक याद करना है। तुम उस श्लोक को बार बार कहते जाओ जब तक वह याद न हो जाय तब तक कहते जाओ। देखोगे कि वह थोड़ी देर में याद हो जायगा। इसके बाद जब तुमको और श्लोक याद करने की आवश्यकता होगी उस समय पहले श्लोक के याद करने में जितनी कठिनता हुई होगी, उससे कम कठिनता इस बार होगी। इसी प्रकार स्मरणशक्ति बढ़ कर काम करने के उपयुक्त हो जायगी। पहले याद की हुई बात को जब तुम याद करना चाहो उस समय कोई और नई बात याद करो। उसी के साथ तुम्हें पुरानी बात भी याद हो जायगी। इसी प्रकार अपनी स्मरणशक्ति बढ़ाई जा सकती है। धीरे धीरे इसको काम में लाने से यह थोड़े ही दिनों के बाद खूब काम करने लायक हो जायगी। उस समय मालूम पड़ेगा कि मानसिक वृत्तियों के परिचालन करने से कितने लाभ होते हैं और कितना आनन्द आता है। बेली साहब के उपदेश का यह मूल है। संक्षेप में उन्होंने स्मृति शक्ति का वैज्ञानिक सिद्धान्त कह डाला है।

स्मृति-शक्ति बढ़ाने के लिये गद्य की अपेक्षा पद्य अधिक उपयोगी हैं। वे पद्य ऐसे होने चाहिए जो सादे हों उनके भाव सरल हों, उनके शब्द कठिन न हों, कहने में सरल हों परन्तु मनोहर हों जिनको बालक आवृत्ति करते जायँ और समझते जायँ। इस प्रकार भावों को समझाने से उनके हृदय में एक प्रकार का आनन्द उत्पन्न होगा। बिना किसी के बतलाये नई बात स्वयं जान लेने से

उनका उत्साह बढ़ेगा और वे बड़ी उमङ्ग के साथ आगे बढ़ेंगे और श्लोकों—पद्यों को याद करने के लिये उद्यत होंगे।

शारदा-सम्पादक, पं० चन्द्रशेखर शास्त्री,

आशा

आशा उस महानिशा का नाम है जिसमें ज्ञान के सूर्य्य को उदय होने का अवसर नहीं मिलता? परमेश्वर के इस संसार-चक्र की धुरी किस वस्तु की बनी है, जो इतनी पुरानी होने पर भी नहीं घिसती! सज्जनों के वियोग में प्रेमियों के प्राण की रक्षा करने वाली कौन है? बड़ी बड़ी विपत्तियों में मनुष्य किसके भरोसे निरास नहीं होता? सार्वभौम और इन्द्रपद किस के आगे चार कदम से भी कम है? हमारे जन्म से पहले मां बाप को हमारे व्याह का सुख कौन अनुभव कराती है? किसके बल से नरक की कड़ी आँच को हम फूलों की माला समझ बड़े बड़े पाप में प्रवृत्त होते हैं? कौन हम से बड़े बड़े यज्ञ दान और जप तप कराकर हमें धर्म की प्रेरणा देती है? महामोह नाम बालक किस माता का प्यारा पुत्र है? किसका फल इतना मीठा है कि हम खाते खाते नहीं अघाते? परमेश्वर से निश्चय मिलने का दावा कौन रखती है और परलोक तथा इस लोक दोनों में बखेड़े मात्र की मूल कौन है? वह आशा है, आशा है!

भूमिका

आशा अहा! यह कैसा मीठा और प्यारा नाम है! इसकी बदौलत संसार अपनी मर्य्यादा पर खड़ा है। जब मनुष्य घोर विपत्ति में पड़ा घबरा जाता है और उस घबराहट में उसे मर जाना या घर छोड़ देश विदेश फिरना अच्छा लगता है तब यह उसके सामने आती है और लाख लाख तरह के दिलासे देती है। जी कहता है, पुत्र का वियोग हो गया अब दुनिया से क्या काम? यह कहती है तुम

लाभ

सलामत हो तो दश बीस हो रहेंगे। जी कहता है धन संपत्ति नष्ट हो गयी, दिवाला निकल गया अब कनी खाकर सो रहो, किसी को मुंह न दिखलाओ। जहां राज भोगा वहां भीख नहीं मांगनी। आशा तुरन्त उसके सामने खड़ी हो कर राजा रामचन्द्र और युधिष्ठिर की कहानियां पढ़ने लगती है और कहती है कि सम्पत्ति गई तुम्हारा भोग नहीं ले गई। पुरुष का काम धीरज धरना है। रुपया पैसा हाथ पैर के मैल हैं आते जाते रहते हैं। फिर दिन फिरेंगे, फिर वही राजपाट होगा। जी कहता है हाकिम के सामने कसूरवार हो तुम कैद किये गये, अब ऐसी जिन्दगी से हाथ धोओ, गले में फांसी लगा मर जाओ। आशा कहती है, दिन बात करते बीतते हैं, चौदह बरस चौदह दिन से जायँगे, सम्पत्ति विपत्ति होती ही रहती है, फिर वही घर, वही तुम हो। मन कहता है, मित्र के बिछोह में घड़ी भर भी जीना हराम है, बिना मित्र संसार का सुख भोगना नीचों का काम है। यह कहती है, बिछुड़े मिलते हैं, मिले बिछुड़ते हैं, यही कारखाना है, तुम्हारा ध्यान किधर है? होश की दवा करो। तुम जीते रहोगे तो सब मिलेंगे। जब तुम्हीं नहीं हो, तो कौन किसे मिलेगा? जी कहता है, अरे! तोप तलवार चल रही है, जी बचा भाग चलो। यह कहती है खबरदार जो पीछे हटा! जय तेरे ही हाथ में है, पैर आगे ही बढ़ाये चल, मर गया तो सीधा स्वर्ग को जायगा, संसार में नाम रहेगा। जीता तो बहादुर कहलायेगा, राजा होगा, लूट मिलेगी, तनख्वाह बढ़ेगी, तगमा मिलेगा।

उपसंहार

सिद्धान्त यह है संसारी कामों से जब जी उचटता है, तब यह आगे होती है और फिर उसको उसी में सान देती है। इससे निश्चय होता है कि जगत्-चलाने वाली ईश्वर की अनेक शक्तियों में आशा भी एक प्रबल-शक्ति है।

सभ्यता

'सभ्यता' यह एक संस्कृत शब्द है। इसका अर्थ है कि वह गुण जो मनुष्य को सभा में बैठने के योग्य बनाए। मनुष्य एक सामाजिक जीव है। यदि इसमें समाज में बैठने की योग्यता न हो तो वह पशुसमान है। इसका गौण अर्थ अब दूसरों से उचित व्यवहार करना व ऐसा काम न करना जिससे दूसरों का चित्त विक्षुब्ध हो आदि—हो गया है। आजकल यही इसका प्रधान अर्थ समझा जाता है। सभ्यता ही है तो मनुष्य को स्त्रीजाति का मान करने को बाध्य करती है। इसी से परिचालित होकर मनुष्य किसी से हँसी नहीं करता, गाली गुपता नहीं देता।

भूमिका

यदि मनुष्य को संसार में रहना है, दूसरों से व्यवहार करना है, भाई बन्धुओं में चलना फिरना है तो उसे सभ्य रहना होगा। यदि मैं किसी के मन को दुःखित करते सङ्कोच नहीं करता तो दूसरा मेरी क्या परवाह करेगा! इसका परिणाम यह होगा कि छोटी छोटी बातों में परस्पर लड़ाई झगड़ा हो जाने का भय रहेगा।

आवश्यकता

सच्ची और झूठी सभ्यता—इसके दो भेद हैं। जो मनुष्य हार्दिक प्रेम से परिचालित होकर दूसरों के भावों का सम्मान करता है उसमें सच्ची सभ्यता है। यह कुलीन मनुष्यों का एक लक्षण है। झूठी सभ्यता स्वार्थी और नीच लोगों में पाई जाती है। मनुष्य के हृदय में और हो किन्तु ऊपर से दिखावे के लिए दूसरों से सद्व्यवहार करना झूठी सभ्यता है। ऐसे पुरुषों की कोई कदर नहीं करता। उनका पोल जल्दी खुल जाता है।

सभ्यता के भेद

सभ्यता मनुष्य को अच्छे पुरुषों से सदा घेरे रहती है जिससे

लाभ — अच्छी सङ्गति में रह कर मनुष्य का समय आनन्द में कटता है।

दूसरे पुरुषों के साथ उसका मेल बना रहता है। इसलिए विपत्ति पड़ने पर उसे सच्चे मित्रों की कमी नहीं रहती।

लोगों में उस का यश होता है। उसके वचन पर सब को विश्वास होता है।

मनुष्यमात्र के लिए यह एक बड़ा आवश्यक गुण है। इसके

उपसंहार — बिना मनुष्य का जीवन निरानन्द है। यदि इसका बचपन से ही अभ्यास किया जाय तो बहुत अच्छा।

चित्तसंयम

सत्य है मन भी एक मुँहज़ोर घोड़ा है, कितनी ही काँटेदार

भूमिका — लगाम लगाओ, पर वह अवसर पाकर कुमार्ग पर ले जाने को उद्योग करता है। कच्चे नौसिखियों की क्या गति है, बड़े बड़े चाबुकसवार भी धोखा खा जाते हैं। कुमार्ग कौन हैं? काम की तंग तंग गलियाँ, क्रोध के झाड़ीदार जङ्गल, लोभ का लम्बा चौड़ा मैदान, मोह की अन्धेरी गुहा, ईर्ष्या का जलता हुआ रेगिस्तान, अहङ्कार की खड़ी चढ़ाई, यही सब कुमार्ग हैं।

ईश्वर ने कामक्रोधादि आत्मरक्षा के लिए बनाए है—काम से

आवश्यकता — सृष्टि की वृद्धि, क्रोध से शत्रु का नाश, लोभ से जीविकोपार्जन, मोह से माता के हाथों पुत्र का पालन आदि उचित स्थान है परन्तु जब इन स्थानों की सीमा का उल्लंघन होने लगता है तब मन के रोकने की आवश्यकता पड़ती है। अगर उस समय रोक न की गई तो बड़े बड़े अत्यारचार व अनर्थ हो जाते हैं। अनुचित क्रोध में अगर कोई

मर्मभेदी शब्द मुख से निकल गया तो जन्म भर की मित्रता मिट्टी में मिल गई। उस समय तो नहीं ज्ञात होता पर जब मन शान्त हो जाता है तो वह बुराई प्रत्यक्ष दिखाई देती है। हाय ! अब तो अपने वश में नहीं, मुख से निकली बात व कमान से निकला तीर लौट कर नहीं आ सकते। माँगने पर क्षमा तो कदाचित् मिल जावे, पर हृदय में जो गाँठ पड़ गई है वह कैसे खुलेगी !

हानि

जब शब्दों से, चेहरे से वा मर्म से मन की भड़क खुल गई तो गुप्त विचार भी प्रकट हो गए, और शत्रु का पूरा अधिकार तुम्हारे ऊपर जम गया। यही नहीं किन्तु तुम्हारा महत्व भी खो गया और लोग तुम को क्षुद्रबुद्धि अर्थात् हलकी तबीयत वाला मानने लगे।

रीति

यह अवश्य है कि मन की रोक किसी से अधिक और किसी से कम होती है, अर्थात् प्रकृति और स्वभाव पर निर्भर है, जैसे दुबले और रोगी लोग अधिक चिर-चिरे होते हैं, परन्तु तब भी अभ्याससाधन से बहुत कुछ हो सकता है। काम क्रोधादि ज्वालाओं के रोकने के लिये प्रथम बार तो अधिक शान्ति की ज़रूरत है, पर दूसरी बार उससे कम, और क्रम से और भी कम। यदि एक बार धैर्य छोड़ कर किसी ज्वाला के वश अपने को कर दिया तो दुबारा उसका रोकना कठिन है और क्रम से और भी कठिन होता जाता है।

इसलिए सर्बसाधारण को और विशेषतः उष्ण रक्त वाले नव युवकों को चाहिए कि अच्छे सवार बनें और अपने मन रूपी घोड़े की बाग अच्छी तरह सँभाल कर चलें, नहीं तो किसी कुमार्ग में पड़कर वहीं के होंगे। चरित्र की शुद्धि के लिए सबसे पहला उपदेश यह है कि बुरे काम की ओर अपने मन को मुड़ने ही न दो।

(उद्धृत)

शिक्षा

जिससे मन की गुप्त शक्तियों का विकास और वृद्धि हो जाय वह शिक्षा है। शिक्षा से मनुष्य पर एक ऐसा रंग चढ़ जाता है जो उसे पशुता से मनुष्यता में बदल देता है। ईश्वर ने मनुष्य को सभी शक्तियाँ दे रक्खी हैं, किन्तु जब शिक्षाद्वारा उन पर से अज्ञान का पड़दा न उठ जावे तो वे निकम्मी पड़ी रह कर निष्क्रिय हो जाती हैं। लोग आज कल इसे ही शिक्षा मान बैठे हैं कि मनुष्य इधर उधर के कुछ ग्रन्थ पढ़ कर यूनीवर्सिटी की उच्च २ परीक्षा पास कर ले। किन्तु यह शिक्षा नहीं, यह तो शिक्षा की प्रथम सीढ़ी समझी जाती है। सम्भव है कि मनुष्य ने कई डिग्रियाँ ले रक्खी हों, फिर भी वह पूर्ण शिक्षित न कहा जाय। यही तो आज कल की शिक्षा का दोष है। लोग आज कल इमतिहान पास कर किसी दफ्तर में नौकरी करना ही जीवन का उद्देश्य मान बैठे हैं। केवल किसी शास्त्र के दो चार ग्रन्थ पढ़ लेना शिक्षा नहीं किन्तु उसके अन्तर्गत तत्त्वों की पूरी समझ आना और उन पर अनुष्ठान करना वास्तविक शिक्षा है। पदार्थविद्या में उच्च डिग्री लेना किस काम का, यदि मनुष्य उस विद्या का जीवन में उपयोग न कर सके! वेदान्त विद्या के द्वैताद्वैत के झगड़े में पड़े पड़े जीवन बिता देना किस काम का, यदि उस विद्या से आत्म प्राप्ति का कोई उद्योग न किया हो। आजकल के लोग भूगोलविद्या में यह तो पढ़ जाते हैं कि यूरोप और अमेरिका में अमुक २ वस्तुएँ उपजती हैं किन्तु यह कोई नहीं जानता कि उसके अपने ग्राम में क्या क्या होता है। वास्तव में तो ग्रन्थ पढ़ने के बाद शिक्षा शुरू होती है जब पुरुष पढ़े हुए विषयों में गवेषण करने लगे।

भूमिका

शिक्षा से अपना उपकार तो होता ही है किन्तु जितना उपकार

देश, जाति, समाज का होगा वह भी किसी से कम नहीं। देश को शिक्षित पुरुष का बड़ा आश्रय रहता है। जब कभी देश की नाव किसी उपद्रव व विपत्ति की मंझधार में डगमगाने लगे, शिक्षित पुरुष ही इस योग्य होता है कि नाविक बनकर उसे पार लगाए। देश की सभ्य जातियों में गणना कराना शिक्षित पुरुषों का ही काम है। उसे मालोमाल कर देना शिक्षित पुरुष ही जानते हैं। जातियों के जितने पुनरुत्थान हुए हैं उनमें बहुतसा भाग शिक्षित पुरुषों का ही रहा है। शिक्षित पुरुष समाज के भूषण होते हैं। इतिहास इसका साक्षी है कि समय समय पर समाज को कुरीतियों के दलदल से निकालना उन्हीं का कर्तव्य रहा है।

लाभ

इसी कारण लोगों में उनका मान होता है। लक्ष्मी उनके अङ्ग सङ्ग रहती है तो भी उन्हें उसके लिए कोई विशेष आदर नहीं। उनकी चरित्रशुद्धि में किसी को शक नहीं। वे ही देश के नेता बनने के योग्य होते हैं। उनके नेतृत्व में यदि कुछ हानि भी हो जाय तो किसी को शिकायत नहीं होती क्योंकि उनकी भावशुद्धि पर किसी को संशय नहीं होता।

जो पुरुष अपूर्ण शिक्षित हों वे प्रायः अशिक्षितों से भी बुरे होते हैं। भर्तृहरि जी ने कहा है—"जिसे कुछ थोड़े से पढ़े लिखे का गर्व हो जाय उसे ब्रह्मा भी संतुष्ट नहीं कर सकता।" उनके मद का कुछ ठिकाना नहीं, वे सभी को तृणवत् समझते हैं। किन्तु उनकी यह प्रतारणा, यह व्यर्थ गर्व, सदा के लिए लोगों को अन्धा नहीं बना सकते, अन्त में एक दिन भांडा फूट जाता है। वे लोगों के उपहासपात्र बन जाते हैं।

अपूर्ण शिक्षित

ऐहलौकिक सुखों का भोग ही मनुष्य का आदर्श नहीं। उसे परलोक सुधारने का भी कोई न कोई साधन अवश्य

शिक्षा और धर्म का सम्बन्ध

करते रहना चाहिए। सब में से उत्तम साधन यही है कि साधारण शिक्षा के साथ साथ उसे बचपन से ही धार्मिक शिक्षा भी दी जाय। बिना धार्मिक शिक्षा के शिक्षा अधूरी है। इसलिए स्कूल तथा कालिजों में धार्मिक शिक्षा का भी कुछ न कुछ प्रबन्ध किया हुआ है। किन्तु उसमें बहुत परिवर्तन की ज़रूरत है। शोक इस बात का है कि इधर लोगों की रुचि कम है। रुपये के लालच में फँसे हुए लोग सन्तति को रुपया कमाने की कल बनाना चाहते हैं। इधर का ख्याल कोई नहीं करता। 'विद्या धर्मेण शोभते।'

उपसंहार

लिखा है 'पुत्र का न होना व हो कर मर जाना अच्छा है किंतु उसका अनपढ़ रह कर पग २ पर कष्ट देना अच्छा नहीं।' जिसमें विद्या नहीं वह पशु से कहीं अच्छा नहीं। पुरुष को प्रत्येक पदार्थ का थोड़ा बहुत ज्ञान ज़रूरी है, किन्तु किसी एक विषय में पह पारङ्गत होना चाहिए। यही पाण्डित्य है, नहीं तो वह पल्लवग्राही पण्डित है।

स्त्रीशिक्षा

भूमिका—शिक्षा से मनुष्य शक्तियों का विकाश। शक्तियाँ पुरुष और स्त्रियाँ दोनों में विद्यमान।

स्त्रियों का स्वत्व—उन शक्तियों को वृद्धि देने का मौका देना हमारा कर्तव्य। अन्यथा ईश्वरीय नियम के विरुद्ध।

मतभेद—कई कहते हैं स्त्रियाँ लिख पढ़ कर स्वतन्त्र हो जायेंगी। चरित्र बिगड़ेगा, उन्हें नौकरी नहीं करनी। गृहकार्य बिगड़ जावेंगे। दूसरे कहते हैं शिक्षित होकर गृहकार्य और भी योग्यता से करेंगी। पुरुषों की सहकारिणी होंगी।

इन पर विचार—शिक्षा का अर्थ बिगाड़ना नहीं किन्तु सुधारना है। कुसंग से बिगाड़ होता है।

नाम—शिक्षित माता बच्चे को सुधारती है। परिवार का सुप्रबन्ध होता है। पुरुषों की विश्वासजनक सहायक।

उपसंहार—स्त्रियों को उनके कार्यक्षेत्र के मुताबिक शिक्षा दें। वैदिक काल में स्त्रीशिक्षा।

प्रस्ताव

स्त्रीशिक्षा (Female Education)

अर्थ

शारीरिक, मानसिक, और नैतिक शक्तियों को विकासित करने का नाम शिक्षा है। पुरुषों की इन शक्तियों का विकाश जिस प्रकार शिक्षा से किया जाता है उसी प्रकार स्त्रियों की इन शक्तियों का भी विकाश करना स्त्रशिक्षा है। हाँ, इन शक्तियों की वृद्धि में इनमें परस्पर तारतम्य करना स्वभावतः आवश्यक है।

स्त्रियों का स्वत्त्व

जैसा हक सब प्रकार शिक्षित होने को पुरुषों का है वैसा ही स्त्रियों का भी है। वे शक्तियाँ, जो शिक्षा से बढ़ाई जा सकती हैं; ईश्वर ने पुरुषों को जैसी दी हैं वैसी स्त्रियों को भी। इस लिये दोनों का शिक्षित होना परम आवश्यक है। स्त्रियों को शिक्षित बनाना उनके प्राकृतिक तथा ईश्वरीय अधिकारों को उन्हें देना है जिन अधिकारों को पा वे अपने जीवन के बहुत से अंशों को आनन्दमय बना सकती हैं। कार्य भिन्न भिन्न भले ही हों पर जो पुरुषों के जीवन के उद्देश्य हैं वे ही स्त्रियों के भी हैं। पुरुषों को शिक्षित होकर जैसे निज कर्तव्यों को यथेष्ट रूप से पूर्ण करने को अवकाश मिलता

है वैसे ही स्त्रियों को भी अपने कर्तव्यों को शिक्षित होकर पूर्ण करने को अवकाश क्यों न दिया जाय। क्योंकि दोनों ईश्वरीय इच्छाओं को पूर्ण करने ही को भेजे गये हैं। स्त्रियाँ बिना शिक्षा के जीवन पूर्ण नहीं कर सकतीं।

मतभेद

स्त्रीशिक्षा के सम्बन्ध में दो दल हैं। एक कहता है कि स्त्रियों को शिक्षा देने से बड़ी २ खराबियाँ हैं। वे पढ़ लिख कर स्वतन्त्र हो अपने चरित्र को सुरक्षित नहीं कर सकतीं। वे यह नहीं समझतीं कि हमारा क्या कर्तव्य है और क्या अधिकार है, बल्कि वे चाहती हैं कि हम सब पुरुषों से बढ़ जायँ और जैसे चाहें उन्हें नाच नचाया करें, इत्यादि। दूसरा कहता है कि जब तक स्त्रियाँ शिक्षित नहीं होंगी तब तक सांसारिक कोई कार्य ही ठीक नहीं हो सकता। जब स्त्रियाँ शिक्षित हो जायँगी तभी ईश्वरीय इच्छाओं तथा उनके उद्देश्य को भली भांति समझ सकेंगी, तभी वे अपने कर्तव्यों को भली भांति सदिच्छाओं और सत्संकल्पों से कर सकेंगी। स्त्रियाँ पुरुष की प्रधान सहायिका हैं। जब तक वे निपढ़ रहेंगी तब तक पुरुषों की वे कुछ भी सहायता नहीं कर सकतीं।

मतभेद पर विचार

शिक्षा का अभिप्राय चरित्र बिगाड़ना नहीं है, धर्म छुड़ाना नहीं है और उद्धत बनाना नहीं है। बल्कि इस के विपरीत सुचरित्र, धर्मात्मा और नम्र बनाना है। जिस शिक्षा से यह बातें अलभ्य हों उसे शिक्षा नहीं, कुशिक्षा कहना चाहिये। चरित्र बिगाड़ना, धर्मबल का ह्रास होना शिक्षादाता की कुशिक्षा पर निर्भर है, कुसंग और कुविचार पर निर्भर है और समाज के दुर्विचारों पर निर्भर है। स्त्रियों के चरित्रहीन होने के कारण पुरुषों की स्वार्थान्धता, और असद्विचार हैं। पुरुषों के सुचरित्र होने से स्त्रियाँ कभी कुचरित्र नहीं हो सकतीं।

स्त्रीशिक्षा से लाभ

सभी को मालूम है कि स्त्रियों का प्रभाव कैसा होता है। यदि वे माता के रूप में रहती हैं तो अपने बच्चों को सुशील बना सकती हैं। यदि वे बहिनें हैं तो अपने छोटे भाइयों को अधिकार में रख सकती हैं और वे यदि स्त्रीरूप में हैं तो अपने पति को प्रेम में रख सकती हैं। जब उनका इस प्रकार प्रभाव है तो वे अपने परिवार में वह काम कर सकती हैं जिससे बहुत कुछ भलाई हो सकती है। उस परिवार की भलाई से समाज की भलाई हो सकती है। इन सब बातों के लिये बड़ी आवश्यकता है कि वे सुशिक्षित हों। उनके सुशिक्षित होने ही से इसमें बहुत कुछ भलाई हो सकती है। उनके आदर्श और चरित्र सब उच्च हो सकते हैं उनके उच्च चरित्र से उनकी सन्तानें वैसी हो सकती हैं। स्त्रियों के सुशिक्षित होने से संसार सोने का हो सकता है।

उपसंहार

स्त्री और पुरुष का बल, बुद्धि विचार कर थोड़ी बहुत शिक्षा देनी चाहिये, पर शिक्षा देनी चाहिये ज़रूर। ईश्वर ने पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को बुद्धि कम नहीं दी है। समझ की शक्ति दोनों को है। इस शक्ति को विकाश करने के लिये स्त्रियों को भी मौका देना चाहिए। दोनों की समझ में थोड़ा सा फर्क है। इसका कारण यह है कि दोनों के स्थान दो प्रकार के हैं। स्त्रियाँ केवल गृहकार्य में रहने के कारण पुरुषों का सामना नहीं कर सकतीं, यही दोनों में अधिक कम समझने का कारण है। स्त्रियों को उचित रूप से शिक्षित करने की आवश्यकता है। यह हम भली भांति समझते हैं कि उन्हें फैशनेबल, उपदेशक, योद्धा, स्वतन्त्र बनाना ठीक नहीं है। पर उन्हें ऐसी शिक्षा देनी चाहिए जो गृह को—संसार को सुखमय बना सकें। यदि वे इस प्रकार शिक्षित हों तो वे अपने गृहकार्य में चतुर होंगी। उनके लड़के माताओं से विनय, नम्रता, आज्ञापालन,

कर्तव्य तथा अन्यान्य गुण सीखेंगे। स्त्रियों के अधिक जानने से पुरुष भी अधिक जानने की चेष्टा करेंगे—अपनी यथेष्ट उन्नति कर सकेंगे। स्त्रियाँ यदि शिक्षित होंगी तो आप भूल न करेंगी, करने पर भी लज्जित होंगी। और उनका सार्वजनिक विचार बढ़ जायगा। मैं अधिक क्या लिखूं! स्त्रीशिक्षा के लाभ अनन्त हैं। उदाहरण के लिये वैदिक काल से लेकर आधुनिक समय तक शिक्षित स्त्रियाँ ही प्रमाण हैं।

विद्यार्थियों को छुट्टी किस तरह बितानी चाहिये

भूमिका—विद्यार्थियों को छुट्टियाँ किस तरह बितानी चाहिये।
शरीर और मशीन की तुलना। किसी पुर्जे वा अंग को कम व अधिक उपयोग में लाने से वह निकम्मा अथवा कमज़ोर हो जायगा।

आवश्यकता—विद्यार्थी दिमाग से काम करते हैं, छुट्टियाँ दिमाग के आराम के लिए हैं।

छुट्टयों का उपयोग—आठ नौ घंटे तक शयन, प्रातःकाल भ्रमण, व्यायाम स्नानादि के अनन्तर एक आध घंटा पुस्तकाभ्यास, भोजनानन्तर विश्राम। पश्चात् स्वदेश की दशा पर विचार। संध्या में ग्रामवासियों के साथ मेल, मिलाप, उनमें विद्या का प्रचार। समाचारपत्र लेकर उन्हें सुनाना। सन्ध्या में टहलना, ग्राम के बालकों के साथ खेल कूद। सन्ध्योपासन। भोजन के पश्चात् ग्राम के लोगों को मातृभूमि के उद्धार की बातें सुनाना।

लाभ—देशोन्नति, आत्मानन्द, मातृभूमि के ऋण का उतारना। स्वदेश सेवा की शिक्षा। लोगों में यश।

उपसंहार—माता पिता को चाहिये कि सन्तान को किताबी कीड़ा न बनायें। विद्वान् होते भी कोई पुरुष किसी काम का नहीं।

देशाटन (TRAVEL)

अन्यान्य देशों में भ्रमण करने को देशाटन कहते हैं। यह स्वदेशोन्नति का एक अत्युपयोगी साधन है। प्रत्येक समय में ऐसे पुरुष रहते रहे हैं। उनके जीवन ने इतिहास में उच्च पद प्राप्त कर रखा है। भारत के इतिहास में चीन के प्रसिद्ध यात्री हूनसाङ्ग का बड़ा उच्च पद है। अङ्गरेज लोगों को भारत का राज्य ईष्टइण्डिया कम्पनी के यात्री लोगों द्वारा ही मिला है। कोलम्बस की यात्रा के बिना अमरीका की उपलब्धि कहाँ होती !

भूमिका

(१) देशाटन शिक्षा का आवश्यक अङ्ग है। इसके बिना शिक्षा को अधूरी ही समझिये। शास्त्रों में चातुर्य्यवर्द्धक मूलकारण चार बतलाये हैं, यथा—देशाटन, पण्डितमित्रता, सभ्यसमाजगमन और अध्ययन। इन सब में सर्वोपरि देशाटन को ही मुख्य माना है; अतः यह परमावश्यक है। किसी पदार्थ के विषय में बीसों पुस्तकें पढ़ छोड़ने से इतना लाभ नहीं होता जितना उसे एक बार देख लेने से होता है। भूगोल में हम अनेकों तत्त्वों के विषय में पढ़ते रहते हैं किन्तु ज्ञान उसी का पूरा होता है जिसे हम आँखों से देख लें। इसीलिए अध्यापक लोग पढ़ाते समय उन २ वस्तुओं की तसवीरों व मिट्टी की प्रतिमायों को सामने रख लेते हैं।

लाभ

देशान्तरों की देख भाल से मनुष्य अपने देश की उनसे तुलना कर सकता है। जो कमी उसे अपने देश में दिखाई दे उसे दूर करने का यत्न करता है। पुरानी इमारतों को देखकर उस देश का प्राचीन इतिहास ज्ञात होजाता है। लोगों के रहन सहन की दशा मालूम होजाती है, आसानी से दूसरी भाषा का ज्ञान हो जाता है। पहाड़

नदी, नाले आदि अनेक प्राकृतिक दृश्य देख कर चित्त में अपूर्व शान्ति समा जाती है। अन्यान्य देशों के लोगों के साथ मेल जोल से धैर्य, चातुर्य, नम्रता, कार्यदक्षता आदि अनेक गुणों का समावेश हो जाता है।

(२) देशाटन आह्लादजनक है। प्रकृतिनटी का सौन्दर्य्य भी इसी से लभ्य है। बाहर के वायुसेवन से स्वास्थ्य बढ़ता है, इसीलिए कई बीमारियोंकी औषधि वायु परिवर्तन बतलायी जाती है। इससे मनुष्य के दिमाग को आराम मिलता है। जब दिमाग से एक ही तरह का काम कुछ समय तक लिया जाय तो एक दिन वह निष्क्रिय हो जाता है। तब उसे किसी अन्य कार्य में आसक्त करना चाहिए। अनेक दृश्य देखकर, नये २ मनुष्यों का सङ्ग कर, देश देशान्तरों के रहन सहन देखकर चित्त में विनोद होता है।

(३) देखा गया है कि भिन्न भिन्न जातियों में वर्षों का वैमनस्य चलता जाता है, किन्तु जब उस २ जाति के लोग परस्पर मिलकर शान्त चित्त से विचार करते हैं तो उनको अपनी भूल मालूम होकर उनमें वैर के बदले मित्रता हो जाती है। इसी कारण प्रत्येक राष्ट्र के नेता व राजवंश के कई पुरुष दूसरे देशों में भ्रमण करते रहते हैं। इसी कारण इङ्गलैण्ड के महाराज एडवर्ड सप्तम को जगत् का 'शान्तिस्थापक' कहते हैं। देशाटन व्यापार वृद्धि का विशेष साधन है। बिना इसके क्या मालूम कि दूसरे देशों का कौनसा माल वहाँ खप सकता है, और जिन देशों का व्यापार बढ़ती में है उनमें क्या विशेषता है।

(४) दूसरे देशों की अच्छी २ रीतियों को हम अपने देश में चला सकते हैं और कुरीतियों को निकाल सकते हैं। दूसरे देशों की शिक्षाप्रणाली व विद्यालय देखकर हमें अपने विद्यालयों की अनेक कमियों का पता लग जाता है। किंबहुना, जो देशाटन नहीं करते

वे 'कूपमण्डूक' हैं। वे लोग कोई बड़ा देशोपकार का काम नहीं कर सकते।

देशाटन की रीति

देशाटन में अच्छे सङ्गियों का होना अच्छा है। अकेले रह कर देशाटन में कोई आनन्द नहीं होता। यात्रा की सफलता इसी में है कि प्रतिदिन की दिनचर्या लिखते रहना चाहिये। पीछे उससे बड़ा काम निकलता है। प्रत्येक जाति के साहित्य में बढ़ी २ उच्च कोटि के ग्रन्थ उन लोगों के लिखे हैं जो अच्छे अनुभवशाली यात्री थे। जिस देश में भ्रमण करना हो तत्सम्बन्धी दो चार पुस्तकों का पढ़ना और उसके नक्शे पास रखना अत्यावश्यक है। इससे उसकी रुचि और भी बढ़ती है।

यात्री को खाने पीने की बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। अन्यथा उसका स्वास्थ्य बिगड़ जायगा।

किसी के साथ व्यर्थ कलह न करना चाहिए और दूसरों के साथ ऐसा व्यवहार हो कि उससे किसी का मनोमालिन्य न रहे।

हानि

निरुद्देश्य भ्रमण से लाभ के स्थान में हानि होती है। व्यर्थ धन खर्च होता है। बहुत भ्रमण से चित्त उकता जाता है। अशान्तचित्त किसी पदार्थ को देखना नहीं चाहता। कई लोग यात्रा कर तो आते हैं पर उन्हें अपने अनुभव का बड़ा गर्व हो जाता है।

उपसंहार

हमारे प्रचीन आर्यों ने तीर्थस्थान इसी लिये बनाए थे कि लोगों में देशाटन की प्रथा बनी रहे। उस समय इन तीर्थों से भला होता था। किन्तु आजकल तीर्थों की ऐसी दुर्दशा हो गई है, और लोग तीर्थयात्रा के इस प्रयोजन को इतना भूल गए हैं कि उन्हें यात्रा का कोई लाभ नहीं होता। आजकल तो रेलगाड़ी में बैठ कर तीर्थ

में पहुँचना और पण्डों को कुछ दे दिला कर एक दो दिनों ही में लौट आना तीर्थयात्रा है।

पुस्तक

पुस्तकें विद्या फैलाने का मुख्य द्वार हैं, अर्थात् एक आदमी की विद्या, अनुभव और विचारों को दूसरों के हृदय तक पहुँचने का काम पुस्तकें ही किया करती हैं। एक विज्ञानी पुरुष साइंस में कोई नया आविष्कार करता है, एक कवि किसी उत्तम विचार को योग्य शब्दों में प्रकट करता है, और ज्यों ही वे पुस्तकों में लिखे गए, मनुष्यमात्र के पास पहुँच गए। इस प्रकार एक की कमाई से सब लाभ उठाते हैं। पुराने समय की बातें पुस्तकों के ही द्वारा हमको ऐसी ज्ञात हैं मानो प्रत्यक्ष हो रही हैं।

मनुष्य की सृष्टि के बढ़ते ही बोलने के अतिरिक्त अन्य प्रकार से एक दूसरे पर अपने विचार प्रकाशित करने की आवश्यकता पड़ी इस लिए अक्षरों के संकेत या चिह्न बनाए गए। फिर लिखने की प्रथा चली। लोग अपनी आवश्यकताओं को लिख कर दूसरों के पास भेजने लगे। ज्यों ज्यों सभ्यता बढ़ती गई, विद्या का प्रचार और भी ज़रूरी होता गया और पुस्तकें बनती गईं।

परन्तु हर आदमी के लिए हर पुस्तक लिखना कठिन ही नहीं वरन् असंभव भी था। किसी को कैसे मालूम हो कि अमुक विषय पर कोई पुस्तक है या नहीं, अगर है तो कहाँ मिलेगी, और मिलने पर भी उसके लिखने में कितनी कठिनता पड़ेगी। इसी लिए पुराने समय में विद्या का प्रचार अधिक हो ही नहीं सकता था। पर जब से छापे का आविष्कार हुआ तब से यह कष्ट दूर हो गया। एक ही साथ जितनी प्रतियाँ चाहें छाप सकते हैं और रेल व डाक के द्वारा पृथ्वीमण्डल पर सर्वत्र पहुँचा सकते हैं।

वर्तमान समय में विषय इतने अधिक हैं कि उनकी गणना भी ठीक ठीक नहीं हो सकती, और इन विषयों पर जो पुस्तकें लिखी जाती हैं, वे भी उतने ही प्रकार की होती हैं। हम मानते हैं कि कोई पुरुष इस थोड़े से आयुःकाल में सब प्रकार की पुस्तकें नहीं पढ़ सकता, तथापि जितने प्रकार की पुस्तकें पढ़ी जाती हैं उतना ही अनुभव बढ़ता है। कुछ विषय ऐसे हैं जिनका जानना आधुनिक सभ्य जनों के लिए आवश्यक है, जैसे इतिहास, गणित, विज्ञान या साइन्स आदि। जो मनुष्य कोरा एक ही विषय जानता है उसकी विद्या अधूरी रह जाती है और वह संसार को ठीक दृष्टि से नहीं देख सकता। परन्तु स्मरण रहे कि सब विषयों की कचाई इससे भी अधिक बुरी है। एक विद्वान् का उपदेश है कि किसी एक विषय का पूर्णतया जानना और अन्यों को थोड़ा जानना अच्छा है।

उपयुक्त पुस्तकों का चुनना बड़ी बुद्धि का काम है। जैसे संसार में अच्छे और बुरे लोग हैं, वैसे ही अच्छी और बुरी पुस्तकें हैं। जैसे बुरे आदमियों के संग से चरित्र नष्ट हो जाता है और मनुष्य को घृणा होती है वैसे ही बुरी पुस्तकों से भी। थोड़ी पुस्तकें पढ़ो, पर ऐसी पढ़ो जिनसे विषय स्पष्ट और विचार शुद्ध हो जावें। एक एक अध्याय पढ़ कर पुस्तक बन्द करके सोचो कि उस अध्याय का तत्त्व क्या है, उस तत्त्व को याद रक्खो। पुस्तक पढ़ने से तभी लाभ होगा जब तुम उस विषय को अपना बना लोगे।

धन का सदुपयोग

भूमिका—जिसके बदले मनुष्य का इष्टसाधन हो वह धन है। उसका सदुपयोग और दुरुपयोग दोनों होते हैं।

सदुपयोग—ऐहिक और पारलौकिक सुख के लिए। अपने कुटुम्ब

का पालन, निर्धनों की रक्षा, धर्मकार्यों, विधवा अनाथों का पोषण, देवालय, विद्यालय कूपादिक का बनाना, देशसेवा के कार्यों में लगाना आदि सदुपयोग।

दुरुपयोग—विलास के कार्यों में खर्च, घूंस आदि देकर उच्चपद प्राप्ति, कुपात्रों को दान, बैंकों में जमाकर रखना व जमीन में गाड़ रखना आदि दुरुपयोग।

उपसंहार—जिस देश के धनी धन का सदुपयोग जान लें वह देश उन्नत। यूरोप में लोग करोड़ों रुपये जाति की सेवा में खर्च कर देते हैं। युरोप में मार्कोनी आदि, भारत में राशबिहारी घोष, सर गंगा-राम आदि, वास्तव में जिस तरह का धन होगा वैसा खर्च होगा।

कर्तव्य

भूमिका

मनुष्य संसार में स्वतन्त्र नहीं है। उसे अपने सुख के लिए दूसरों पर आश्रित होना पड़ता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक उसको माता, पिता, आचार्य, अड़ोस पड़ोस देश आदि कितनों पर अपने पालन पोषण के लिए निर्भर रहना पड़ता है। इसलिए उसका भी धर्म है कि यथाशक्ति प्रत्युपकार में उनकी सेवा करता रहे। यह उसका कर्तव्य है और इसे करने को वह बाध्य है। हमारे धर्मशास्त्रों में इस विषय में बहुत कुछ विस्तार से लिखा हुआ है।

आवश्यकता

मनुष्यजन्म ही किसी न किसी कर्तव्य पालन के लिए है। मनुष्य भूमि पर ईश्वर का भेजा हुआ एक कर्मचारी है। जिस उद्देश्य के लिए वह आया है उस से चूकने से उसे महाघोर नरक-यातना भोगनी पड़ेगी। इसीलिए धर्मशास्त्रों में मनुष्यों की जीवनयात्रा को चार भागों में बांटकर रख दिया है। पहली सीढ़ी ब्रह्मचर्य की है। इस में उसके लिए माता पिता तथा आचार्य का आज्ञापालन, उनकी

शुश्रूषा, विद्याध्ययन, व्यायामादि से शरीर को पुष्ट रखना, ब्रह्मचर्य पालन आदि कर्तव्य हैं। गृहस्थ में उसके कर्तव्य की सीमा और भी बढ़ जाती है। अब उसे गुरुकुल के छोटे जगत् से बाहर निकल वृहत जगत् में काम करना होता है। उसके कन्धों पर कुटुम्ब पालन का एक भारी बोझा आ पड़ता है। इसके सिवाय जिन पड़ोसियों में रहता है, जिस समाज में उसे चलना फिरना होता है, जिस देश का वह जल वायु पान करता है, जिस मातृ भूमि की गोद में वह पलता है, जिस राजा के राज्य में वह सुरक्षित रहता है उन सभी की उन्नति का चिन्तन करना और तन, मन, धन से उनकी सेवा करना उसका महान् कर्तव्य है।

तीसरा कर्तव्य उसका परलोकसुधार है। उसे संसार के सभी धन्धों को छोड़कर बनों में रहकर ईश्वराराधन करना चाहिये। इसी समय से उसे अपने आपको देश और समाज की सेवा के लिए योग्य बनाना चाहिए। इसे वानप्रस्थ आश्रम कहते हैं।

चतुर्थ आश्रम में उसका संसार के धन्धों से अलग होकर जाति, समाज और देश की उन्नति के सिवाय और कोई काम नहीं होता। समाज की कुरीतियों को दूर करना, देश की नौका को सुरक्षित पार करना, लोगों को ईश्वर से विमुख न होने देना आदि अनेक कर्तव्य हैं जिनका पालन करना मनुष्य का ध्येय है।

लाभ

स्वकर्तव्य पालन से मनुष्य के हृदय में जितना आनन्द होता है उतना कहीं हजारों रुपये मिलने से भी नहीं होता। कर्तव्यपरायणता में भय और लज्जा का नाम तक नहीं। कर्तव्य परायण क्लर्क कभी अपने अफसरों से भीत नहीं होता, कर्तव्यपरायण छात्र को कभी आचार्य के सामने शर्म के मारे सिर को नीचे नहीं झुकाना पड़ता। कर्तव्यपरायण योगी ईश्वर के सम्मुख अपराधी नहीं ठहरता, व्यापारी कभी हानि नहीं उठाता, स्वामि-भक्त स्वामी से भय नहीं खाता। उनका लोगों

में सम्मान होता है। ऐसे मनुष्यों के जीवन जन-समुदाय के लिए आदर्श बन जाते हैं। उनकी आचारशुद्धि में किसी को सन्देह नहीं होता। उनकी जीवन-यातना जैसे इस लोक में आनन्द से कटती है इसी तरह मर कर भी उन्हें स्वर्गसुख की प्राप्ति होती है।

कर्तव्य न करने से हानि

जो लोग कर्तव्य-विमुख हैं उनका जीवन कहीं पशुओं से अच्छा नहीं। लज्जा के मारे वे कहीं मुख तक नहीं दिखा सकते। जीवन में वे सदा सफलता देवी का मुख देखने से वञ्चित रहते हैं। जो छात्र नियमानुसार अपने पाठ का अभ्यास नहीं करते वे सदा पाठशाला में अनुपस्थित होने की चिन्ता में व्यग्र रहते हैं।

उदाहरण

कैसाबियेङ्का नाम एक छोटे से अंग्रेज़ बालक को पिता ने जहाज़ में रहने का आदेश दिया। दैववश जहाज़ को आग लग गई, किन्तु वह शूर बालक अपने स्थान से एक पग पीछे को नहीं हटा। पित्राज्ञा पालते २ उसने अपने शरीर को अग्नि के अर्पण कर दिया।

हकीकतराय ने स्वधर्म-रक्षा के लिए सिर तक कटवा डाला। महाराणा प्रतापसिंह ने मातृ-भूमि की सेवा के लिए क्या क्या कष्ट नहीं सहे? इतिहास का प्रत्येक पृष्ठ ऐसे उदाहरणों में भरा पड़ा है।

उपसंहार

कर्तव्य पालन में मनुष्य को कई बार ऐसे ऐसे कष्ट सहने पड़ते हैं जो काँटों की की शय्या पर सोने से भी भीषण हों। ऐसे ही अवसर में यह परख होती है कि मनुष्य को स्वकर्तव्य कितना प्रिय है। उसे पालना शूरता है और उससे विमुख होना कायरता है।

ईश्वर भक्ति (Devotion towards God)

जिसने हमको और संसार की सभी वस्तुओं को बनाया है, जो सारे संसार पर शासन करता है, जिसकी आज्ञा बिना संसार का कोई कार्य भी नहीं हो सकता, जिसकी इच्छामात्र से ही प्रकृति के सब कार्य नियमित रूप से सम्पादित हो रहे हैं और जो सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी तथा निराकार है—उसीका नाम ईश्वर है। मनसा, वाचा और कर्मणा ईश्वर की सेवा करना और उसकी सृष्टि को सहायता पहुँचाना ही भक्ति है।

बहुत से मनुष्य यह शंका करते हैं कि यह संसार आप से आप बन गया है, इसका रचने वाला कोई नहीं है, परन्तु यह समझना उनकी भारी भूल है। हम लोग प्रतिदिन देखते हैं कि सूर्य पूर्व में उदय होता है और पश्चिम में डूबता है। जाड़ा, गर्मी और वर्षा इत्यादि ऋतुएँ समय समय पर होती हैं। इन बातों से साफ मालूम होता है कि इन नियमों का बाँधने वाला कोई अवश्य है। यदि तुम किसी स्थान को जाओ और राह में रुपये पड़े हुए देखो तो तुम्हें यह अनुमान होगा कि किसी पथिक के रुपये गिर पड़े होंगे, परन्तु जब यह देख पड़े की प्रत्येक रुपया ठीक तीन तीन हाथों की दूरी पर रक्खा हुआ है तब तुम्हें यह अवश्य निश्चित हो जायगा कि किसी चतुर मनुष्य ने ऐसा प्रबन्ध किया है। इसी प्रकार प्रकृति के इन अटल नियमों के देखने से ईश्वर के होने में किसी प्रकार की शङ्का नहीं हो सकती।

ईश्वर बड़ा ही दयालु है। वह प्रतिक्षण हमारी—हमारी ही क्या सारी प्रकृति की—चिन्ता रखता है। उसने हमारे लिए क्या ही अच्छी अच्छी वस्तुएँ दी हैं! यह वायु जिसके बिना हम एक मिनट भी नहीं जी सकते, यह पानी जिसको पीते हैं, यह भोजन

जिसको खाते हैं और यह पृथ्वी जिस पर आनन्द करते हैं—इत्यादि इत्यादि सभी पदार्थ हमें ईश्वर से मिले हैं।

यदि वह सूर्य नहीं बनाता तो हम लोग मारे जाड़े से मर जाते। रात को आकाश में जो छोटे छोटे दीपक से नज़र आते हैं जिन्हें हम लोग तारे कहते हैं और जो एक अनुपम सौन्दर्य वाला गेंद सा दीख पड़ता है, जिसे हम लोग चन्द्रमा कहते हैं ये भी ईश्वर ही ने हमें दिये हैं जो हमारे बड़े बड़े कार्य करते हैं।

यह आँख जिससे हम अपूर्व छटा देखते हैं, यह नाक जिससे हम सूँघते हैं, कान जिससे हम मधुर शब्द सुनते हैं, यह जीभ जिससे हम बोलते हैं—कहाँ तक कहें, यह समूचा शरीर ही, जिसको हम अपना कहते हैं, जिसे देख कर हम फूले नहीं समाते, ईश्वर ने ही दिया है।

यह उसी प्रभु की महिमा है जिसने उत्पन्न होने से पहले ही हमारी माता के स्तनों में दूध देकर हमारे जीवन का प्रबन्ध किया और माता पिता को प्रेम में डाल उनसे हमारी रक्षा कराई। उसीने अपनी दयालुता से हमको सृष्टि-शिरोमणि की उपाधि से भूषित किया है।

जब जब प्राणियों पर भारी विपत्ति पड़ती है और अत्याचार करने वाले बढ़ जाते हैं तब तब वह साकार रूप धारण कर संसार की रक्षा करता है। यही कारण है कि ईश्वर ने रामरूप से अत्याचारी रावण को, कृष्णरूप से आततायी कंस को और नृसिंह रूप से पापी हिरण्यकश्यप को नाश कर समय समय पर भक्तों का उद्धार किया है।

अतः, हम लोगों का यह पहला कर्तव्य है कि उस दयालु ईश्वर की भक्ति तन, मन और वचन से करें और सदा उसकी सेवा में तल्लीन रहें।

ईश्वर ने हम लोगों की इतनी भलाई की है कि हम उसका बदला नहीं चुका सकते। वह सदा हमें अच्छी अच्छी वस्तुएँ दिया करता है, परन्तु हमारे पास उसको देने के लिये कोई भी उत्तम पदार्थ नहीं है। एक तो वह हमसे कुछ माँगता नहीं, यदि माँगता भी तो हम दे ही क्या सकते हैं? ऐसी अवस्था में यह उचित है कि हम उसके सदा कृतज्ञ बने रहें, उसके गुणों को याद किया करें और उसको हार्दिक धन्यवाद दें। देखो, कुत्ता एक टुकड़ा रोटी का पाते ही अपनी पूँछ हिला कर कृतज्ञता प्रकाश करता है। फिर हम तो मनुष्य हैं, हमें तो कुत्ते से कहीं बढ़ कर अपनी कृतज्ञता प्रकाश करनी चाहिये।

हमें उचित है कि ईश्वर की आज्ञा सदा मानते रहें, सदा अच्छे कार्यों को करें और बुरे कार्यों के पास भी न फटकें। जिस प्रकार हम लोगों के पिता झूठ बोलने और चोरी करने इत्यादि दुष्कर्मों के लिये हमें दण्ड देता है, उसी प्रकार सबों का पिता ईश्वर सत्य बोलने, विद्या पढ़ने इत्यादि सुकर्मों के लिए प्रसन्न होकर हमें सुख देता है और कुकर्म करने वालों पर अप्रसन्न होकर उन्हें दुःख देता है। इस लिये हमको सदा उनका भय रखना चाहिये और कभी मन में भी बुरे कार्यों को न विचारना चाहिये। वह अन्तर्यामी है, उससे कोई छोटी सी बात भी हम नहीं छिपा सकते।

ईश्वर संसार का पिता है, इस लिये सभी जीव आपस में भाई भाई हुए। बस, हम लोगों को उचित है कि एक दूसरे में भाई भाई का प्रेम रक्खें, किसी को भी कष्ट न दें। जिस प्रकार यदि एक बालक अपने भाइयों को कष्ट दे तो उसका बाप उससे क्रुद्ध हो जायगा, क्योंकि बाप का प्रेम तो सब पर समान होता है, उसी प्रकार ईश्वर का प्रेम भी हम सब पर बराबर है। यदि कोई एक दूसरे को सतावेगा तो ईश्वर उससे अवश्य क्रुद्ध हो जायगा।

जो मनुष्य ईश्वर का भक्त है, जो सच्चे हृदय से ईश्वर की भक्ति करता है, उसके सब मनोरथ भगवान् पूर्ण करता है। भक्तों ही के पास भगवान् का वास है। इस बात को श्रीकृष्ण भगवान् ने नारद जी से स्वयं कहा है—

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये नच।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति, तत्र तिष्ठामि नारद॥

अतः यदि हम चाहते हैं कि ईश्वर हमारे साथ रहे तो यह उचित है कि हम सदा उसके स्मरण में, भजन में, सेवा में और उपासना में लगे रहें। यदि हम उसके नियमों को पालते रहें, उस पर विश्वास रक्खें और सच्चे हृदय से उसके दास बने रहें तो हमें कभी भी चिन्ता नहीं सतावेगी और न कोई विपत्ति ही झेलनी पड़ेगी। (उद्धृत)

माता पिता के प्रति कर्तव्य

भूमिका

जिन माता पिना के कारण हम लोगों ने इस संसार में जन्म धारण किया है और संसार के सभी प्राणियों में श्रेष्ठ समझे जाते हैं, उनके प्रति हमारे कौन कौन कर्त्तव्य हैं इसकी आलोचना कर उसका प्रति पालन करना हमारा प्रथम कर्त्तव्य है।

माता पिता के कार्य

हमारे कल्याण तथा आराम के निमित्त माता पिता ने जितना कष्ट उठाया है उसका चतुर्थांश भी संसार में अन्य किसी व्यक्ति से होना असम्भव है। माता भोजनादि में अनेक प्रकार का संयम करती हुई जैसे नौ मास तक सन्तान को गर्भ में रखती है उसका अनुभव सहृदय व्यक्ति स्वयं ही कर सकते हैं। उस समय माता पीड़ा से बेचैन होती हुई भी अपने आराम के निमित्त किसी

ऐसी वस्तु का सेवन नहीं करती जिससे गर्भस्थित सन्तान को कष्ट हो। सन्तानोत्पत्ति होने पर सन्तान के सुख दुःख की तनिक भी परवाह नहीं करती। शरीर तथा कपड़े पर मल मूत्र त्याग करते रहने पर माता दुःखी न हो आनन्दपूर्वक उसके लालन पालन में लगी रहती है। सन्तानोत्पत्ति के साथ ही अपने सुख विलास का परित्याग कर देती है। दिनभर बच्चे को गोद में लिये खाना पीना भी भूल जाती है और रात को निश्चिन्त सोना स्वप्न हो जाता है। ऐसे ही पिता भी सन्तान के कल्याणार्थ अनेकों कष्ट उठाकर द्रव्योपर्जन करता है। किसी उत्तम पदार्थ को पाकर माता पिता सन्तान ही के लिये रख देते हैं। पुत्र को योग्य व शिक्षित बनाने के लिये अपना सम्पूर्ण धन लगा देने में भी आनन्द ही समझते हैं। पुत्र के कल्याणार्थ द्वार द्वार पर जाकर भिक्षा एसे नीच कर्म्म के करने में भी लज्जित नहीं होते। प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष सदा सन्तान की मङ्गलकामना में व्यस्त रहते हैं। यदि सन्तान को किसी प्रकार की बीमारी हो जाय तो रात दिन खाना पीना व सोना छोड़ कर उसी की सेवा शुश्रूषा में लगे रहते हैं। यदि अपना प्राण दे देने पर भी कोई पुत्र के अच्छे हो जाने का उपाय बतावे तो सहर्ष उसे करने के लिये तैयार हो जाते हैं। बाबर ने अपने पुत्र हुमायूँ की बीमारी में ईश्वर से ऐसी ही प्रार्थना की थी। पुत्र के बड़े हो जाने पर भी उनका प्रेमभाव वैसा ही बना रहता है। यह प्रेम बिल्कुल ही नैसर्गिस होता है, इस में स्वार्थ का लेश भी नहीं रहता। माता और पिता इन दो शब्दों में कुछ ऐसी शक्ति है कि विपत्ति के समय हम लोग इन शब्दों के उच्चारण द्वारा भी दुःख की मात्रा को कम करके आनन्द प्राप्त करते हैं। यदि माता पिता हम लोगों के निमित्त इतना कष्ट न उठाते तो हम लोगों का जीना ही कठिन था। यदि वे हमारी शिक्षा इत्यादि का प्रबन्ध न करते तो कदाचित् पशुओं और हम में कुछ भी अन्तर होता।

जिस माता पिता ने हमारे लिये इतना किया है उनसे हम लोग किसी प्रकार से उऋण नहीं हो सकते।

हमारा कर्त्तव्य

तथापि हम लोगों को उचित है कि सर्वदा यही प्रयत्न करें जिस में वे हम से प्रसन्न रहें। उनकी आज्ञाओं का सदा पालन करना हमारा परम कर्त्तव्य है। तुलसीदास जी ने कहा है:—

(मातु पिता अरु गुरु की बानी, बिनहिं विचार करिये शुभ जानी।)

श्रीरामचन्द्र जी ने अयोध्या के वृहद् राज्य को तृणवत् परित्याग सच्चा आदर्श दिखाया। भीष्म पितामह ने अपने पिता की इच्छा-पूर्त्ति के निमित्त आजीवन अविवाहित रहने की भीषण प्रतिज्ञा का पालन कर अपनी कीर्ति को अजर अमर कर दिया। माता कुन्ती की आज्ञा पा भीम को राक्षसमुख में जाते हुए भी कुछ संकोच न हुआ। माता पिता का दर्जा संसार में सब से बढ़ा हुआ है। इनकी सेवा से परमेश्वर तथा सब देवता प्रसन्न होते हैं। वृद्धावस्था में इन्हें देवतुल्य जान कर इनकी सेवा शुश्रूषा तथा पालन पोषण करना हम लोगों का परम धर्म्म है। घर में वृद्ध पिता को छोड़ कर कठिन तपस्या करने से भी कुछ फल नहीं मिलता।

आज इस कराल कलिकाल में ऐसे महापातकी भी अनेकों भरे पड़े हैं जो पिता को अनेक प्रकार के कष्ट दिया करते हैं। कुछ आधुनिक शिक्षित ऐसे भी हैं जो अपने सीधे साधे ग्रामीण पिता को पिता कहने में भी अपनी मानहानि समझते हैं। अन्य लोगों के निकट उन्हें अपना सेवक कह कर परिचय देते हैं। हाय! जिस माता पिता ने सम्पूर्ण शरीर में मलमूत्र लगे हुए पुत्र को भी उठा, आनन्दपूर्वक गले लगाया, उनकी यह दुर्दशा! ऐसे अधम पुरुषों के जीवन को धिक्कार है! ऐसे ही अभागों के निमित्त कदाचित् रौरव नरक की सृष्टि-रचना हुई होगी।

कृतघ्नता

यदि लोग ईश्वर को प्रसन्न तथा अपनी कीर्ति को संसार में

उपसंहार

स्थापित करने की अभिलाषा रखते हैं तो साक्षात् देवदेवी स्वरूप माता पिता की नित्य पूजा करें। कहा है:—

भूमेर्गरीयसी माता, स्वर्गादुच्चतरः पिता।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी॥
पिता स्वर्गः पिता धर्म्मः पिता हि परमं तपः।
पितरि प्रीतिमापन्ने प्रियन्ते सर्व्वदेवताः॥

एकता

एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य के साथ, एक परिवार का दूसरे परिवार के साथ, एक समाज के लोगों का दूसरे समाज के साथ, एक साम्राज्य का दूसरे साम्राज्य के साथ, एक जाति का दूसरी जाति के साथ, एक गांव का दूसरे गांव के साथ तथा एक देश का दूसरे देश के साथ, बिना किसी तरह के भेदभाव —ईर्षा द्वेष-वैर विरोध और मनो-मालिन्य के, परस्पर सद्भाव के प्रसार और प्रीति रीति के प्रचार तथा एकमत-एक हृदय-एक मन और एक प्राण हो जाने ही का नाम "एकता" है। एकता की गणना उन स्वर्गीय सद्-गुणों में है जिन के द्वारा उन्नति के शिखर पर आरूढ़ होने में प्रबल सहायता मिलती है।

जिस देश में एकता का आदर होता है, जहां के लोग इसकी उपयोगिता और लाभकारिता अच्छी तरह समझते हैं—वहां उन्नति के उपायों का अभाव नहीं है—उत्थान के साधनों की कमी नहीं है। जो जाति इसका उचित सम्मान करती है उसका लोहा मानने के लिए संसारभर तैयार रहता है। जिस साम्राज्य में एकता की रक्षा नहीं की जाती वहां की भिन्न-मना प्रजाओं में घोर अशान्ति का विस्तार देखा जाता है। जिस परिवार में एकता का महत्त्व प्रकट नहीं हैं उस में—धन-जन-सम्पन्न होने पर भी—नरक का भय नक

दृश्य उपस्थित रहता है। जिस समाज के अन्दर से एकता की प्रतिष्ठा उठ गई है वहां नाना प्रकार की कुप्रथाओं, घिनौनी कुरीतियों तथा भद्दें कुसंस्कारों ने विकराल मूर्त्ति धारण कर ली है। पुनः दिन दिन वह सामाजिक शरीर असाध्य रोगों का शिकार बनता जाता है। इसी प्रकार विचार दौड़ा कर हम लोग देख सकते हैं क एकता द्वारा किस तरह हितसाधन और कल्याण होना सम्भव है। तथा एकता का तिरस्कार कर देने से, कितनी शीघ्रता के साथ लोगों का अध:पतन—सर्वनाश और सत्ताशून्य हो जाना निश्चित है।

साधारणत: देखिये। एक हाथ से ताली नहीं बजती। चुटकी भी एक अँगुली से नहीं बज सकती। एक पहिये के बल पर गाड़ी भी नहीं चलती। एक अंग से कैंची भी नहीं करती। एक खत से लेखनी तक नहीं लिख सकती। यहां तक कहते हैं कि, एक पर एक रहने से '११' हो जाता है। एक की पीठ पर निकम्मे सिफर भी लगातार जुटते जाँय तो करोड़ों की संख्या बात की बात में बन जाती है। चींटियां जो संसार में क्षुद्रादपिक्षुद्र जीव हैं एकता की शक्ति दिखला कर लोगों को चकित बना रही हैं। एक सूत मक्खी को भी बाँध कर स्थिर नहीं रख सकता। लेकिन बहुत से सूत एक में एक मिल कर हाथी को भी तिल भर डिगने नहीं देते। यह प्रति दिन की—आँखों के सामने नाचने वाली बात ताक पर रखिये। पाँच तत्त्वों की एकता से रचे गये संसार की ओर दृष्टि मोड़िये। उसमें भी एकता के ज्वलन्त उदाहरण वर्त्तमान हैं।

शाखाओं के मेल से वृक्ष, पत्तों के मेल से पल्लव, पल्लवों के मेल से वृक्ष की शोभा और शीतल छाया का फैलाव होता है। फूलों के मेल से गुच्छा और माला की तैयारी होती है। बहुत सी किताबोंके मेल से एक बड़ी लाइब्रेरी बन जाती है। असंख्य ईंटों के मेल से भारी से भारी नदियों में पुल बँध जाता है। बहुत से खपड़ों के जुट जाने से घरों पर छप्पर बन जाता है। हज़ारों इमारतों के एक जगह

रहने से बड़ासा नगर बन जाता है। दस उत्साही मनुष्य मिलकर बड़ी २ कम्पनियां चलाते हैं। दस आदमी के हाथ बटाने से बड़ी बड़ी संस्थाओं की कार्यवाही संचालित होती है। ताराओं की एकता से आकाश की शोभावृद्धि और चन्द्रमा की छवि-छटा छिटकती है। बहुत से फूल मिल कर अपनी सुगन्ध से, वायुद्वारा, दिग-दिगन्त को सौरभमय बना देते हैं। अनेक सूत्रजाल एक में एक गुथ कर विविध भाँति के वस्त्रों की सृष्टि कर डालता है, अक्षरों के मेल से शब्द तथा शब्दों के मेल से महान् महान् ग्रन्थों का जन्म हो जाता है। लाखों लोग एकत्र होकर विराट मेले का आयोजन कर डालते हैं। बूँदों के मेल से जलाशय भरपूर हो जाता है। करोड़ों लहरें मिल कर नदी को सुन्दर बना देती हैं। अगणित नदियाँ महा-सागर का अतल गम्भीर उदर भर देती हैं। इसी तरह सूक्ष्म सूक्ष्म विचारों और कल्पनाओं द्वारा एकता की महत्ता समझ में आ सकती है। अस्तु।

ऐसे ही ऐसे असंख्य दृष्टान्तों का आश्रय ग्रहण करके, हम लोग अपने परिवार में, गाँव में, जाति में, समाज में और क्रमशः प्रान्त तथा देश में, एकता के गौरव का अनर्गल प्रचार कर सकते हैं। इसी के द्वारा ही पतनोन्मुख जाति सम्भल कर खड़ी हो सकती है। जब तक एकता में जीवन सञ्चार नहीं होगा, तब तक समाज का परिष्कार और परिमार्जन होना आकाश-कुसुमसा दुर्लभ है। एकता देवी की ही कृपा से देश में सुशान्ति की तूती बोलती है। यह ध्रुव है कि जिस जाति पर एकता की पूरी धाक जमी है, उसमें जातीयता का लेशमात्र भी नहीं है। एकता देवी की अनन्योपासना का ही यह प्रत्यक्ष प्रमाण है कि आज दिन संसार की सभी सभ्य और आदर्श जातियों की गणना के समय—सब से पहले अंग्रेज़ जाति का ही नाम आता है।

यही अटल सिद्धान्त रहा कि, बिना एकता की शरण लिये

बाणिज्य व्यवसाय, पारिवारिक शासन, सामाजिक व्यापार तथा अन्यान्य लौकिक कार्य्यों में हम लोग किसी प्रकार सफलता का दिव्य दर्शन नहीं प्राप्त कर सकते। अतएव, हम लोगों के घरेलू झगड़ों की जड़ में कुल्हाड़ी मार कर सामाजिक तत्त्वों का संशोधन कर, राजा और प्रजा में उदारता की ज्योति जगाकर, सब लोगों में सहृदयता, समप्राणता, सहानुभूति और भ्रातृभाव का बीज उगा कर और आपस के वैमनस्य तथा फूट को विसार कर, देश को मंगल और आनन्द का भंडार बना देने में प्रवृत्त तथा कृतयत्न होना चाहिये।

सच्चाई और सहिष्णुता का अभ्यास करते करते और और उपयुक्त गुणों के सहज सुलभ हो जाने पर एकता की उद्देश्य सिद्धि में हम लोग अवश्यमेव कृतकार्य हो सकते हैं। इस लिये हर तरह की उन्नति और सुख-प्राप्ति चाहनेवाले लोगों को एकता की आराधना अवश्य करनी चाहिये।

शिवपूजन सहाय।

युद्ध (WAR)

भूमिका—राजाओं व शासक जातियों में परस्पर मुठभेड़।

कारण—सभ्य देशों पर हबशी लोगों का अकारण व लूटमार के लिए आक्रमण। यथा अफरीदियों का भारत पर। किसी स्थान पर स्वत्व। राजनीतिज्ञ पुरुषों की नीति का फल, व्यापार, किसी जाति पर अत्याचार।

हानि—समृद्ध स्थानों का उजड़ना। असंख्य लोगों की हत्या, दुर्भिक्ष, बीमारियाँ, व्यापार की हानि, कोष का खाली होना, प्रजा पर नये कर, सभ्यता को हानि।

लाभ—विजयी जातियों का लोहा, शूरता, धैर्य, निःस्वार्थ देशसेवा, मृत्यु से निर्भयता आदि मनुष्य के गुप्त गुणों के विकसित होने का अवसर, जातियों को जागरूक रखना, स्वदेशाभिमान से देशीय जनों का परस्पर प्रेम, उन्नति का मार्ग।

क्या इसका अन्त हो सकता है ?—इसके बन्द करने की प्रत्येक की उत्कट इच्छा, किन्तु अनुष्ठान कठिन, प्रत्येक जाति रणसामग्री बढ़ाने में व्यग्र, अपने पर अत्याचार होते देख असहन-शील, महायुद्ध के पश्चात् अन्तर्जातीय महासभा का इस पर विचार, इसका परिणाम। बिना लोगों की शिक्षा और शासन-स्वतन्त्रता के इसका अन्त कठिन। इसके लिए अन्तर्जातीय निर्णयसभायें।

पुरातन और नवीन युद्ध—पुरातन बाहुबल अधिक किन्तु शस्त्रप्रयोग कम, न्यायपरता।

उपसंहार—महाभारत युद्ध से भारत की दुर्दशा, यूरोपीय महायुद्ध से संसार की हानि।

मातृभाषा की शिक्षा

भूमिका—जिस भाषा को शिशु माता द्वारा सीखे और जिससे अपने देश का कारोबार चले।

मातृभाषा की आवश्यकता—बिना मातृभाषा के ज्ञान के कोई देश उन्नति नहीं कर सकता, बिना इसके देशाभिमान नहीं, देश की साहित्यवृद्धि नहीं। सभ्यता नहीं रहती, दूसरों के आचार व्यवहार की नकल होती है। जिस प्रान्त की भाषा उन्नत हो वह प्रान्त भी उन्नत, जैसे बंगाल।

परदेशीय भाषा से हानि—भारत में अंग्रेज़ी की प्रधानता, इसी द्वारा स्कूल तथा कालिजों में शिक्षा। अंग्रेज़ी के अभ्यास से व्यर्थ काल

क्षेप । अंग्रेजी सभ्यता से हानि । लार्ड मेकाले के काल में अंग्रेज़ी का शिक्षाप्रणाली में प्रवेश । शिक्षाप्रणाली में मातृभाषा की दुर्दशा ।

उपसंहार—स्वाधीनता की प्रथम सीढ़ी । निडर होकर इसका प्रचार करना चाहिये ।

अकाल (Famine)

भूमिका—लोगों के खाने के लिए अनाज की कमी । अकाल उन देशों में होता है जहाँ खेती की उपज वर्षा पर निर्भर हो ।

कारण—जब वर्षा न होने से खेती न उपजे व बहुत वर्षा से बीज बह जाय, कई अन्य कारण ।

देश की अवस्था—लाखों लोगों को पेट भर खाना न मिलना । निर्धनों का घास, पत्ते, कच्चा मांस खाकर निर्वाह, कई बार हजारों की मृत्यु, पशुओं की दुर्दशा ।

सहायता—धर्मी पुरुष व समाजों की ओर से अन्न बिना व थोड़े मूल्य पर बाँटना, राजा की ओर से कृषकों पर के भूमिकर की मुआफी, मजदूरी के लिए कोई व्यवसाय जारी करना । रेलद्वारा अनाज को अकालपीड़ित स्थानों में पहुँचाना ।

बन्द करने के स्थायी उपाय—केवल शासक ही इसे हटा सकता है । नहरें बनाना, वैज्ञानिक विधि से खेती उपजाने की कृषिकों को शिक्षा । देश के शिल्प, व्यवसायों की वृद्धिद्वारा लोगों की आमदनी बढ़ाना । अनाज देश की आवश्यकता से कम हो तो उसे देशान्तरों में जाने से रोकना ।

उपसंहार—पञ्जाब में दुर्भिक्ष की सम्भावना । कारण नहरें । राजपूताने में खेती के वर्षा पर निर्भर होने से अधिक सम्भावना । भारत कृषिप्रधान, और निर्धन देश । अतः प्रतिवर्ष कहीं न कहीं पर अकाल पड़ा रहता है । अकाल के साथ हैज़ा, अजीर्ण, बुखार आदि कई बीमारियाँ ।

समय का उपयोग (The use of time)

भूमिका—लोगों को अपने काम के लिए समय न मिलने की शिकायत, 'समय धन है' सब कहते हैं किन्तु अनुष्ठान कोई नहीं करता।

कारण—समयाभाव नहीं किन्तु समय का अनुपयोग वा दुरुपयोग। कई समय को आलस्य में खो देते हैं और कई व्यर्थ बातों व अनुपयुक्त कामों में। उदाहरण—विद्यार्थी अपने पाठ का अभ्यास न कर समय को इधर उधर की बातों में व उपन्यास आदि पढ़ने में खोते हैं।

समय का सदुपयोग कैसे हो—समय की व्यवस्था करो (१) जिस काम के लिये जो समय रखो उसे उस समय में कर ही डालो। कोई काम 'कल' पर न छोड़ो। लोकोक्ति 'काल करै सो अब कर'। (२) व्यवस्था ऐसी बनाओ कि पहले आवश्यक कामों को समय दो। (३) एक समय में एक ही कार्य करो 'एक ही साधै सब सधै सब साधै सब जाय'। (४) जिस काम को हाथ में लो उसे पूरा कर छोड़ो, अधूरा न रहने दो। (५) रात्रि में सोते समय विचार लो कि कोई काम रह तो नहीं गया।

उदाहरण—सभी महापुरुष समय के सदुपयोगी हुए हैं। नैपोलियन, न्यूटन, म० गान्धी आदि।

उपसंहार—अंग्रज़ों में समय की कदर, भारतीयों में कम। यही अधोगति का कारण।

शिल्पशिक्षा (Technical Education)

भूमिका—शिल्पशिक्षा का शिक्षा की साधारण पद्धति में प्रयोग। मेज, कुर्सी, तलवार, लैम्प, कपड़ा आदि बनाने में विज्ञान के नियमों का प्रयोग।

आवश्यकता—बिना शिक्षा के किसी काम के मर्म का पूरा ज्ञान न होना और लकीर के फकीर रहना। भिन्न भिन्न जाति और देशों में कड़ी दौड़ (मुकाबला), केवल किताबी शिक्षा का श्रमजीवी लोगों में अनादर और केवल शिल्पशिक्षा का छात्रों में जात्य-भिमान के कारण अनादर।

लाभ—जो सीखा जाय उसके तत्व और अनुष्ठान का पूरा अभ्यास। इससे छात्र को आत्मसाहाय्य, उद्योग, सावधानता से काम करना, कार्य में स्वच्छता और नियमानुकूलता का अभ्यास हो जाता है। देश के शिल्प में वृद्धि। बाल्यकाल से छात्रों का शिल्प में प्रवेश, बड़े होकर उससे घृणा न रहना। विज्ञान के नियमानुसार काम करने से थोड़े समय में अधिक लाभ।

कैसे दी जाय—प्राइमरी स्कूलों में हिसाब के कुछ साधारण नियमों, तथा भाषा की लिखाई पढ़ाई के अतिरिक्त स्वास्थ्यविद्या और विज्ञान के साधारण नियमों की शिक्षा हो। मिडिल श्रेणियों में उनके लिए शिल्पविद्या के विशेष नियम और उनका कार्य में अनुष्ठान। हाई श्रेणियों में वे किसी एक शिल्प को सीखें जिसमें उनकी रुचि हो गई हो।

उपसंहार—पहले पहल शिल्पशिक्षा फ्रांस, जर्मनी और अमेरिका के स्कूलों में जारी हुई। १८९० में इङ्गलैंण्ड की सरकार का इसकी ओर ध्यान हुआ। भारत में अभी तक कोई प्रबन्ध नहीं, आशा है नये सुधार में इधर ध्यान होगा।

क्रोध (Anger)

भूमिका—क्रोध विवेकता में बाधक। किन्तु बिना विवेक, विचार के उसका दमन अशक्य।

अपकार—इस से भले बुरे का ज्ञान नहीं रहता। थोड़ा हो व

बहुत दोनों दशाओं में बुरा। असभ्यता का लक्षण। थोड़े पर झगड़ा उठाना। क्रोधी पर कोई दया नहीं करता।

बचने के उपाय—उसे रोकने का वारंवार प्रण, अभ्यास।

उपसंहार—बिलकुल इसे त्यागना नहीं किन्तु इस पर काबू होना चाहिए। अपने परिवार, इष्ट मित्रों को सुमति पर लाने के लिए क्रोध करना।

अहङ्कार (Pride)

भूमिका—अपने को दूसरों से बड़ा समझना। विद्या, धन, बल, सौन्दर्य आदि अनेक कारण।

अहङ्कारी के विचार—मैं बड़ा हूँ, मेरे धन, बल, बुद्धिमत्ता के आगे सब तुच्छ हैं। नीचों से व्यवहार में मेरी मानहानि है। मैं स्वतन्त्र हूं—इत्यादि।

परिणाम—फल बिलकुल उलटा, लोग अहंकारी को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। वे इसी घात में रहते हैं कि जिस किसी तरह उसका मानमर्दन हो। उसकी बातों पर कोई विश्वास नहीं करता। अहंकार का सिर नीचा, अन्त में उसे नीचा देखना पड़ता है।

उदाहरण—रावण, दुर्योधन, कंस, जर्मनी का सम्राट् कैसर।

शिक्षा—अहंकार करना बुरा है। धन, बल, आदि को अस्थिर समझो। दूसरों को उन्नत देख प्रसन्न हो। लोगों का उपकार कर नम्र रहो।

उपसंहार—अहंकार त्यागो किन्तु आत्मगौरव न छोड़ो। आत्मगौरव और अभिमान में अन्तर।

प्रेम (Love)

भूमिका—प्रेम मनुष्य के हृदय की एक पवित्र शक्ति। इसके उद्गार के अनेक रूप। कभी मित्रों, कभी कुटुम्बियों ओर कभी देश से प्रेम। संसार प्रेम की ही डोरी में बंधा है।

संसार में प्रेम का विकास—परिवार के लोगों में सम्बन्ध के लिहाज़ से न्यूनाधिक। पिता का सन्तान में प्रेम, दम्पती का परस्पर प्रेम। मित्रों का परस्पर प्रेम। स्वदेश के लोगों में प्रेम। स्व-मातृ-भूमि में प्रेम, धर्म में प्रेम इत्यादि।

लाभ—सुख का मूल। आपत्ति में सहारा। गृहस्थ का आनन्द। प्रेम बिना जीवन फीका। अभाव में सर्वनाश, युद्ध तथा कलह आदि।

भेद—स्वार्थ और निःस्वार्थ।

उदाहरण—सीता के प्रेम से राम का आपत्तियां उठाना। धर्म के प्रेम में हकीकतराय का सर कटवाना। स्वदेश प्रेम से अनेक महात्माओं का अपनी जान तक पर खेल जाना। प्रेम के अभाव से कौरव-पाण्डवों का सर्वनाश।

प्रेम को स्थायी रखने के उपाय—प्रेम निःस्वार्थ हो। मित्रों के दुर्गुण देखकर भी उन्हें ओझल कर जाना।

उपसंहार—मनुष्य-जीवन के आनन्द के लिए प्रेम आवश्यक। भारतोद्धार के लिए मातृभूमि से निःस्वार्थ प्रेम की ज़रूरत।

परिश्रम (Labour)

भूमिका—किसी कार्य की सिद्धि के लिए पूरा यत्न। कोई कार्य बिना परिश्रम साध्य नहीं।

उपयोगिता—शारीरिक और मानसिक उन्नति का प्रधान उपाय। शारीरिक परिश्रम से मानसिक परिश्रम उत्तम, सुखप्राप्ति का मूल, परिश्रम से आनन्द, स्वास्थ्य-रक्षा।

अभाव से हानि—संसारयात्रा कठिन। कृषक परिश्रम न करें तो धान्य, अनाज कहां? लुहार, बढ़ई, सुनार, बनिया, चमार आदि काम छोड़ दें तो कोई काम न चले।

उदाहरण—अंग्रेज़ तथा पश्चिम की अन्य जातियां, बुकर टी वाशिङ्गटन, अमरीका का प्रधान वाशिङ्गटन, विद्यासागर।

उपसंहार—भारत में इसका अभाव, देश को लोगों के भाग्य पर निर्भर रहने के स्वभाव के कारण अनेक हानियां।

आत्मरक्षा (Self-defence)

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।

भूमिका—अपने आपको आपत्तियों से बचाना। प्रत्येक प्राणी में स्वाभाविक। बिना सिखाये ही जीवमात्र अपने आपको दुःखों से बचाने के लिए उद्यत रहते हैं।

उपकार—'धर्मार्थकाममोक्षाणां प्राणाः संस्थितिहेतवः' बिना आत्मरक्षा के कोई काम नहीं हो सकता। इससे समाज व देश की रक्षा तथा उन्नति। आत्मगौरव।

कैसे सम्भव—अपने आपको बलिष्ठ बनाना। स्वास्थ्यरक्षा। किसी के अत्याचारों को न सहना।

उपसंहार—जो आत्मरक्षा कर सकता है वही देशरक्षा भी कर सकता है। भारत के नवयुवकों का बांके बनकर शरीररक्षा के साधनों के प्रति औदासीन्य। इससे हानि। हिन्दुओं में विशेष कमी।

परोपकार (Doing good to others)

परहितसरिस धर्म नहिं भाई।

भूमिका—दूसरों की निःस्वार्थ भलाई। मनुष्य और पशु में यही भेद।

प्रकृति से परोपकार की शिक्षा—पृथ्वी से भोजन, जल और अनेक सुखों की प्राप्ति। सूर्य निःस्वार्थ प्रकाश देता है। चन्द्र से ज्योत्स्ना, वायु से सुखस्पर्श, वनस्पतियों से सुगन्ध लेकर हम उन्हें उनके बदले क्या कुछ देते हैं। यही परोपकार है।

लाभ—'परोपकारः पुण्याय'। दूसरों की कार्यसिद्धि से हृदय में प्रेम और आनन्द का संचार।

इसके भेद—सच्चा और झूठा। अनाथ, अपाहजों की सहायता, सार्वजनिक भलाई के कामों के लिए दान, पाठशाला, औषधालय खुलवाना, प्याऊ लगवाना, कुटुम्ब का पालन पोषण, मांग के समय मित्रों की सहायता आदि सच्चे परोपकार के काम हैं। अशिक्षित, व्यसनासक्त, सुदृढ़ किन्तु आलसी साधु और भिखारियों को दान देना, राजभय व समाजभय से देश की हानिकर संस्थाओं को रुपया देना, स्वार्थसिद्धि, खिताब व उपाधि लेने के लिए पाठशाला औषधालय खुलवाना, आदि झूठा परोपकार है। भारत में धनिक लोगों में झूठे परोपकार की अधिकता।

उदाहरण—भारत में शिवि, दधीचि, हरिश्चन्द्र, दलीप आदि पीछे हो गुज़ेर हैं। इस काल भी पालित, राशविहारी घोष, सर गंगाराम आदि। अमरीका का महाशय कारनेगी।

उपसंहार—मनुष्य का भूषण। इससे ऐहलौकिक तथा पारलौकिक सुख की प्राप्ति। 'मनुष्य के शरीर का परोपकार सार है'।

समाजसेवा (Social service)

भूमिका—मनुष्य एक सामाजिक जीव है, अत: समाज का सुधार व सेवा उसका प्रधान कर्तव्य।

सेवा के रूप—पाठशाला, औषधालय खुलवाना, कुएं खुदवाना, समाज की बुराइयों को हटाना, दुःखित पुरुषों के दुःख दूर करना, व्यक्तियों को समाज का अङ्ग समझ कर उनके कष्ट निवारण इत्यादि।

लाभ—चित्त की प्रसन्नता, स्वधर्मपालन, कीर्ति, समाज के सुधार से अपना, अपने देश का सुधार।

भेद्—सच्ची और झूठी, सच्ची निःस्वार्थ, झूठी दिखावे के लिए, कीर्ति व गवर्नमेण्ट से किसी उपाधि के पाने के लिए।

उपसंहार—सब से उत्तम वह जिस में सेवा करनेवाला नम्र रहे, उद्धत न हो। आजकल भारत में सेवासमितियों का खुल जाना। बालचरसंस्था (Scout movement) इसी के आधार पर।

अभ्यास (Habit)

भूमिका—काम करते करते उसे स्वभावतः करने लग जाना। मनुष्य का दूसरा स्वभाव।

भेद्—अच्छा, बुरा। अच्छे अभ्यास से उपकार और बुरे से अपकार, अच्छे अभ्यास से मनुष्य सच्चा, ईमानदार, दानशील, विचारशील आदि बन जाता है। बुरे अभ्यास से झूठा, बेईमान, द्यूतासक्त, मद्यसेवक, विषयासक्त, नुकताचीन बन जाता है।

अभ्यास क्या होता है—किसी बात को बार बार दोहराना, अन्त में वह पुरुष का स्वभाव बन जाता है। फिर बदलता नहीं।

उपसंहार—कुएँ की रस्सी की रगड़ से ईंटों का घिस जाना, अच्छे अभ्यास के लिए बचपन से सत्सङ्ग।

सङ्गति (Company)

सङ्गति ही गुण होत हैं, संगति ही गुण जाय।
बाँस फाँस औ मीसरी, एकहि मोल बिकाय॥

भूमिका—मनुष्य स्वभाव से सामाजिक प्राणी है। वह अकेला एक दिन भी नहीं रह सकता, वह अपनी इच्छाओं को पूरा करने को स्वतन्त्र नहीं।

संगति कैसी हो—संगति ऐसी हो जिससे गुणवृद्धि हो, दोष क्षीण

हों, कोई बुरा व्यसन न आ जाय। मनुष्य संगति से पहचाना जाता है। जिसके साथ संग करे उसका चरित्र शुद्ध हो, क्योंकि उसका उस पर प्रभाव पड़ेगा।

सत्संग के लाभ—आत्मा को उच्च बनाता है, संसार में मान, प्रतिष्ठा होती है। दोष दूर होकर जीवन में गुण भर जाते हैं। 'सत्संगतिः कथय किन्न करोति पुंसाम्'।

असत्संग के दोष—बुद्धि भ्रष्ट हो जाती, कई व्यसन लग जाते हैं। दुर्जनों के सभी दोष आ जाते हैं, उनका कोई आदर नहीं करता।

बुरी संगति कैसे हटे—बुरों के संग रह कर भी अपनी दृढ़ता न छोड़नी चाहिए। उनके कुकर्मों को घृणा-दृष्टि से देखो। जब कोई अच्छा उपदेश दे उसे सुनो। अच्छे ग्रन्थों का अभ्यास रखो।

उपसंहार—बालक का हृदय कच्चा होता है उस पर दूसरों का रंग शीघ्र चढ़ जाता है। अतः बचपन से साधुसंग हो।

दान (Charity)

भूमिका—किसी की आपत्ति, व आवश्यकता को दूर करने के लिए उसे धन धान्य आदि देना। यह धन की पवित्रता का उद्‌गार है। उसका आरम्भ से ही अभ्यास हो, जिससे मन की इस ओर प्रवृत्ति प्रतिदिन बढ़ती जाय। अतः लोकोक्ति है 'दान घर से ही आरम्भ होते हैं'।

दान के पात्र—जो दान योग्य पुरुष को बिना किसी फल की आकांक्षा से दिया जाय वह उत्तम है। विद्यालय, औषधालय खुलवाना, निर्जल प्रदेश में कूप खुदवाना आदि अच्छे दान हैं। भारत में दान की कुप्रथा। इसके कारण लाखों हट्टे कट्टे साधु, फकीर देश पर बोझ हो रहे हैं। इसी प्रकार तीर्थों पर पापाचारपरायण पण्डों को दान देना भी व्यर्थ है।

भगवान् कृष्ण ने गीता में लिखा है। (दरिद्रान्भर कौन्तेय मा प्रयच्छेश्वरे धनम्) अथवा 'मरुस्थल्यां यथा वृष्टिः क्षुधार्ते भोजनं तथा। दरिद्रे दीयते दानं सफलं पांडुनन्दन'। यही ठीक दान है।

लाभ—दूसरों की विपत्तियां दूर करने से मन में प्रसन्नता, दया का सञ्चार, दूसरों की सहायता से अपनी सहायता, ईश्वर की प्रसन्नता। इससे मितव्ययिता का स्वभाव।

उदाहरण—शिवि, दधीचि, हरिश्चन्द्र, रघु, अमरीका का महाशय कारनेगी आदि।

उपसंहार—संसार-यन्त्र का मनुष्य प्रधान पुरजा। उस कल को चलाना उसका कर्तव्य। हिन्दुशास्त्रों में दान की महिमा धर्म का प्रधान अंग।

धर्म (Righteousness)

भूमिका—लौकिक और पारलौकिक उन्नति का साधन। धर्म में ही मनुष्य की पशुओं से विशेषता।

धर्म के लक्षण—मनुस्मृति में दस लक्षण कहे हैं। धृति, क्षमा, दम (मन का संयम), अस्तेय (चोरी न करना), शौच (पवित्रता), इन्द्रिय-निग्रह, धी (बुद्धि), विद्या, सत्य, अक्रोध। प्रत्येक सम्प्रदाय के लिए ये आवश्यक।

आजकल के धर्म—आज कल अनेक संप्रदाय अपने विशेष चिन्हों को ही धर्म मान बैठे हैं। कई तिलक, कई कण्ठी और कई अन्यान्य चिन्हों को धर्म मानते हैं। अतः भारत में हज़ारों धर्म।

उपसंहार—इस झूठे धर्म से भारत की दुर्दशा, कलह, झगड़े।

जो धर्म सुख का हेतु है, भवसिन्धु का शुभ सेतु है।
देखो, उसे इसने बनाया अब कलह का केतु है॥

(मैथलीशरण गुप्त)

वक्तृता (Eloquence)

भूमिका—सालंकार, प्रभावशाली व्याख्यान देने की रीति। पुरातन काल से इसका प्रभाव। रोमराज्य की बढ़ती के दिनों में अनेक प्रभावशाली वक्ता। भारत में भी महाभारत के काल में सभा समाज, यज्ञों में अनेक व्याख्यान।

वक्ता के गुण—साफ और मधुर वाणी, उपयुक्त संकेतचिन्हों से श्रोतृगण के चित्तों को वश कर लेना, भाषा ओजस्विनी, मनुष्य स्वभाव का परिचय और उनके प्रश्नों का पहले ही उत्तर दे देना, तर्क का परिचय, उत्साह और धैर्य, प्रबल वर्णन-शक्ति।

लाभ—हज़ारों मनुष्यों को अपना किङ्कर बना लेते हैं। राष्ट्रों का उलट पलट कर देते हैं। देश के राजनैतिक और सामाजिक सुधार करते हैं। उनके आगे राजा और महाराजाओं के भी सिर झुक जाते हैं। लोक यश। कई बार इसके दुरुपयोग से हानि की सम्भावना, राष्ट्र-विप्लव।

उदाहरण—प्राचीन काल में सिसरो, ब्रटस, होमर, आधुनिक काल में बर्क, फक्स, शेरीडन, लाइड जार्ज, भारत में गोखले, मालवीय, सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी, लाजपतराय आदि अनेक।

उपसंहार—सभी गुणों का एक व्यक्ति में समावेश दुर्लभ अतः ऐसे वक्ताओं की संख्या बहुत कम। प्रत्येक देश में वक्ताओं की आवश्यकता।

दरिद्रता (Poverty)

नहीं दरिद्र सम दुःख जग मांही।

भूमिका—ज़रूरत के अनुसार धन न होना।

दरिद्रता के कारण—पूर्वसञ्चित कर्म, आलस्य, व्यर्थ धन का खर्च, कुसंग, अकर्मण्यता।

दशा—पेटभर भोजन न मिलना, परिवार की दुर्दशा, फटे पुराने वस्त्र, अस्वास्थ्यकर घर में निवास, स्वास्थ्य बिगड़ जाना, सदा शोक ग्रस्त, चित्त अशान्त, समाज में घृणा।

फल—धैर्यनाश, आत्मघात, चोरी करने लग जाना, स्वतन्त्रता का नाश, पाप करना आदि।

उपसंहार—बचपन से कार्य करने का स्वभाव हो, अध्यवसाय और परिश्रम से कभी चित्त न हटे, सङ्ग अच्छा हो, अन्यथा पुरुष का जीवन निष्फल।

बस रहीम कानन बसौ, अस न करौ फल तोय।
बन्धुमध्य धनहीन जन, रहिबो उचित न कोय॥

द्यूत (*Gambling*)

भूमिका—किसी प्रकार का दांव दाब कर खेलों में हार जीत करना। सभी व्यसनों का मूल।

द्यूत के स्वरूप—तास, पाँसा व कौड़ियों के साथ खेलना। घुड़दौड़ में दौड़ पर दांव लगाना, आजकल सट्टे का द्यूत बहुत प्रचलित। प्रत्येक बड़े शहर में बड़े द्यूतागार।

अपकार—द्यूतकार अकिञ्चन, आलसी, क्षण में धनिक व दरिद्र, न हार से चैन और जीत से, दुर्जनों का सङ्ग, हार कर शोक को मद्य पीकर हटाना, अधिक धन जीत कर उसका दुरुपयोग, परिवार की दुर्दशा, चोरी का स्वभाव, कारागृह वास।

निवारण—सभी धार्मिक शास्त्रों में इसका निषेध। मनुस्मृति में मृत्यु-दण्ड तक का विधान। अंग्रेज़ी कानून के अनुसार भी निषिद्ध, फिर भी इसका बहुत प्रचार। जब तक लोग स्वयं शिक्षित होकर इसे घृणित न समझें तब तक निवृत्ति दुःसाध्य।

उदाहरण—प्रतिदिन अनेकों उदाहरण दृष्टिगोचर, सैकड़ों मुकद्दमे

इसके कारण, प्राचीन भारत में पाण्डवों का द्यूत के कारण सर्व-नाश। नल की दुर्दशा।

उपसंहार—निषिद्ध होने पर भी हिन्दु-शास्त्रों में दिवाली के दिन इसे खेलने की अनुज्ञा। इससे बुराइयां।

मद्य (Intoxicants)

भूमिका—जिस वस्तु के सेवन से दिमाग़ को क्षोभ, बुद्धि को जड़ता और इन्द्रियों को शिथिलता पहुंचे। केवल शराब ही मादक नहीं किन्तु भंग, चरस, गांजा, अफीम, चंडू आदि सभी मादक हैं। शराब अधिक हानिकर। नीच जातियों में अधिक प्रचलित।

इसका असर—आग में घी छोड़ने से जैसे आग एक दम प्रचंड हो जाती है वैसे ही मद्य सेवन से रक्त की गर्मी बढ़ जाती है। चित्त में स्फूर्ति आ जाती है किन्तु पीछे शरीर निर्बल हो जाता है। आमाशय, आंतें, कलेजा, दिमाग दुर्बल, अकालमृत्यु।

अपकार—सब व्यसनों का मूल, काम क्रोध आदि तामसी व्यसनों की वृद्धि, स्पृश्यास्पृश्य का विचार न रहना, धन का अपव्यय, निर्धनता। सिगरेट से हानि।

निषेध—सभी मतों के धर्म-शास्त्रों में निषिद्ध। सरकारी कानून के अनुसार भी बेचने वालों को विशेष अनुज्ञा लेना पड़ता है। विशेष मात्रा से बढ़ कर मादक द्रव्य पास रखने का निषेध। मादक वस्तुओं पर अधिक टैक्स। तो भी दिनों दिन प्रचार अधिक। बिना लोगों की शिक्षा के निवृत्ति दुःसाध्य। इसके रोकने के लिए अनेक सभा, संस्था खुल जाना। अंग्रेजों में थोड़ी मात्रा में शराब पीने की प्रथा।

उपसंहार—अब कुछ लोगों में जागृति, शराब की ओर विशेष घृणा। प्रान्तीय कौंसलों में इसको रोकने की चर्चा। महात्मा गांधी का इसके विरुद्ध का प्रचार।

लोभ (Averice)

लोभश्चेदगुणेन किम्

भूमिका—बिना निमित्त धन एकत्र करने की लालसा। मनुष्य में यह बहुत बड़ा दोष।

कारण—कभी कभी जरूरी काम व ऐश्वर्यभोग की लालसा से धन जोड़ना, किन्तु प्रायः धन प्राप्त होने पर भी अधिक प्राप्ति की इच्छा।

अपकार—लोभ न रहे तो जगत् के सभी लड़ाई झगड़े छूट जायं। कोई राजा किसी का देश छीनने को उद्यत न हो। तोभी नर धनप्राप्ति के लिए अच्छे बुरे सभी साधनों का प्रयोग करता है। मन की शान्ति नहीं होती। जैसे आग पर घी डालने से आग प्रचंड होती है वैसे ही धन मिलने से तृष्णा और भी बढ़ती है। दूसरों को हानि पहुंचाता है।

उपसंहार—प्रत्येक देश व जाति के लोग इसे बुरा समझते हैं तो भी लोभ की मात्रा में वृद्धि हो रही है। आजकल की सभ्यता जिसमें ऐश्वर्यभोग मुख्य है, इसका मूल कारण।

बेकारी (Want of occupation)

भूमिका—किसी काम में व्यग्र न होकर व्यर्थ समय बिताना। बुरी आदत।

हानि—मनुष्य का मन चञ्चल है, किसी काम में व्यग्र न होने से बुराइयां सोचने में व्यग्र। असत्संगति, बुरे व्यसनों का लग जाना। बेकारी की आदत से किसी काम करने को जी न चाहना। कभी कभी उदास होकर आत्मघात व कई भयानक विपत्तियों का कारण।

राजदण्ड—जो लोग बेकार होते हैं उन्हें पुलिस पकड़ कर जेल में भेज दती है। उनकी जीवन-वृत्ति में संशय होता है अतः चोर होने की संभावना।

उपसंहार—बेकार मनुष्य का संग छोड़ने से यह दूर होती है। भारत में कई साधु, फकीर हृष्ट पुष्ट होकर भी बेकार हैं। लोगों की दान-प्रथा इसका कारण। जिस देश में बेकारों की संख्या अधिक हो वह उन्नत नहीं हो सकता।

बहुजातिप्रथा (Caste system)

भूमिका—पहले पहल ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चार ही जातियां। इनका विभाग जन्म, गुण और कर्म अनुसार।

बहु जातियों की उत्पत्ति—इन चार वर्णों की परस्पर मिलावट से; देश व आचार भेद से; खान, पान, व्यवहार भेद से; रीति, रिवाज के भेद से; कर्मभेद से।

लाभ—चार वर्णों के अनेक लाभ, समाज की श्रृङ्खला और कारोबार सुप्रचलित। अपने अपने कर्मों में व्यग्रता।

हानि—जातिभेद से परस्पर सहानुभूति की न्यूनता, छूत, अछूत की समस्या से देशोन्नति में बाधा। चार वर्णों के प्रत्येक वर्ण में अवान्तर भेद से परस्पर सम्बन्ध की कठिनता। यथा कान्यकुब्ज ब्राह्मण, ब्राह्मण होते भी सारस्वत ब्राह्मण के साथ विवाह और खान पान का सम्बन्ध नहीं कर सकता। राजनैतिक विचार से बहुत कष्टदायक।

उपसंहार—अछूत जातियों की दुर्दशा का यही प्रथा मूल-कारण। हिन्दू जाति को इससे हानि।

तीर्थ-यात्रा (Pilgrimage)

भूमिका—तीर्थस्थानों को पुण्यप्राप्ति के लिए जाना ।

निमित्त—विशेष उत्सवों पर, मृत सम्बन्धियों के उद्धार के लिए, पर्वों पर ।

लाभ—धार्मिक विचार से पुण्य-प्राप्ति । देशान्तरों के देखने से अनुभववृद्धि । जलवायु बदलने से स्वास्थ्य ।

हानि—कई बुराइयों से दुराचार । मूर्ख पण्डों का पालन, मन्दिरों की दुर्दशा ।

उपसंहार—यदि बुराइयां दूर हो जायँ तो असीम लाभ, प्रत्येक सम्प्रदाय का कर्तव्य अपने तीर्थस्थानों का सुधार ।

संगीत (Music)

भूमिका—एक प्रकार की कला (art), स्वर, ताल, वाद्य का सम्मेल, जिससे कर्णों को सुख और हृदय को आनन्द पहुंचे ।

प्राचीनता—बहुत प्राचीन काल से आरम्भ, पहले गन्धर्व किन्नर इसके संरक्षक, वीणा का सरस्वती देवी से सम्बन्ध ।

प्रभाव—कहते हैं रोम के आरफीयस ने अपनी वाणी के स्वर से वृक्ष और पत्थरों को चला दिया । हिन्दुस्थान के तानसेन ने इसकी शक्ति से आग जला दी जिसमें वह स्वयं जल मरा । लड़ाई के वक्त सङ्गीत के प्रभाव से सिपाही मृत्यु के मुख में जाने को उद्यत हो जाते हैं । दुःखित हृदय को शान्ति देता है । देवमन्दिरों में हरिकीर्तन । हिन्दुओं का सामवेद सङ्गीत का मूलाधार । देवर्षि नारदादि इसके प्रधानाचार्य्य ।

हानि—इससे अनेक व्यसनों की सम्भावना । आजकल भारत में

सङ्गीत वेश्या और नर्तकों का व्यापार, नाटक, थियेटरों में सङ्गीत से आचार का बिगड़ना।

उपसंहार—यदि इसकी बुराइयां निकाल दी जाँय तो ऐसी उत्तम कला कोई नहीं। अब ऐसी अनेक सस्थाएं भारत में खुल गई हैं। पश्चिमीय देशों में यह शिक्षा का प्रधान अंग। भारत में भी बालक तथा बालिकाओं के विद्यालयों में इसे जारी कर देना चाहिए।

राजभक्ति (Loyalty)

भूमिका—प्रजा के शासक की यथाशक्ति सेवा।

राजा कैसा हो—जो प्रजा का पालन करे, उनके सुख में सुखी और दुःख में दुःखी हो, उन्हें पुत्रवत् समझे, न्याय-तत्पर हो वही राजा है—उसकी भक्ति प्रजा का परम कर्तव्य। यदि राजा में ये गुण न हों तो उसका समूलोन्मूलन करना चाहिए।

राजभक्ति न होने से हानि—प्रजा का धन माल अन्य लोग लूट लेंगे। न खेती होगी न व्यापार होगा। डाक, रेलें, तारें कुछ न होंगे। बलवान् दुर्बलों को रहने न देंगे।

राजभक्ति कैसी हो—राजा के बनाये नियमों पर चलें। विपत्ति पर उसकी सहायता। राजा के अन्याय व दुराचार का प्रतिवाद करें। प्रजा के शासन में राजा का हाथ बटावें।

उपसंहार—राजा और प्रजा दोनों में सद्भाव रहने से दोनों का कल्याण।

विज्ञान की उपयोगिता

(Advantages of the study of Science)

भूमिका—अनुसन्धान, खोज और प्रयोग द्वारा प्राकृतिक पदार्थों के विषय का पूरा और सच्चा ज्ञान। ईश्वर के दिये भौतिक पदार्थों

का मनुष्य जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध। उनका ज्ञान प्राप्त कर लाभ उठाना मनुष्य का कर्तव्य। इसकी उन्नति के बिना सभ्य जगत् में रहना असम्भव।

प्राप्ति—सीखने में परिश्रम की अपेक्षा लाभ अधिक। पदार्थ को सामने देख कर खोज करने में साक्षात् ज्ञान और रुचि।

उपकार—भौतिक पदार्थों का वैचित्र्य और ईश्वरीय महाशक्ति का परिचय। प्रतिभा और खोज की शक्ति में दृढ़ता। अनेक कला तथा यंत्रों के प्रयोग से मनुष्य-परिश्रम और समय की बचत। जड़ पदार्थों से भी मनुष्य के उपकार की सम्भावना। अनेक आविष्कार, अन्धों को नेत्र, बहिरों को श्रवण देना। आयुर्वेदीय आविष्कारों के चमत्कार।

उपसंहार—इसके दुरुपयोग से कई हानियां। यूरोपीय युद्ध में व्योम-यान आदि यन्त्रों का दुरुपयोग।

हिंदी भाषा की उपयोगिता

(Advantages of learning Hindi)

भूमिका—जिस भाषा की वर्णमाला देवनागरी है और जिसका प्रादुर्भाव सीधा संस्कृत से है वह हिन्दी है।

आवश्यकता—इसके अक्षरों का उच्चारण प्राकृतिक नियमों के अनुसार। उनकी फारसी, अरबी और अंग्रेजी अक्षरों से तुलना। शब्दों में माधुर्य और सरलता। भाषा की प्राचीनता। हिन्दुस्थान की यही मातृभाषा हो सकती है।

क्यों?

लाभ—एक मातृभाषा से देशोन्नति। मनुष्यों में परस्पर प्रेम। हिन्दुओं के शास्त्र संस्कृत में। हिन्दी जानने वालों को संस्कृत

सीखने में सुगमता। हिन्दी के साहित्य की प्रतिदिन बढ़ती। इसी में भारत की राष्ट्रभाषा होने की योग्यता पाई जाती है।

उपसंहार—मुसलमानों के भारत पर आक्रमण से पहले हिन्दी मातृ-भाषा। आजकल कई प्रान्तों में शुद्ध हिन्दी और कई प्रान्तों में मिश्रित हिन्दी, हिन्दी-साहित्य सम्मेलन का इस विषय में उद्योग।

सुधार (Reform)

भूमिका—सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक संस्थाओं में बुराइयां निकाल दूर करना।

आवश्यकता—समयानुसार परिवर्तन न होने से जाति व व्यक्तियों पर अत्याचार की सम्भावना।

स्वरूप—(धार्मिक) देवमन्दिरों की दशा का संशोधन, धार्मिक संस्थाओं की आमदनी को अच्छे कामों में लगाना। धार्मिक उपदेशकों को सदाचारी बनाना। (सामाजिक) बाल्यविवाह, कन्याविक्रय, बहुविवाह की प्रथा को हटाना, विधवा तथा अनाथों की दशा सुधारना। अछूतों का उद्धार। (राजनैतिक) देश पर राजनैतिक अत्याचारों को रोकना, स्वतन्त्रता के बाधक नियमों का प्रतिवाद, राजकर्मचारियों को घूँस लेने से हटाना। शासनप्रणाली में समयानुसार परिवर्तन इत्यादि।

कैसे हो—सुधारक—उच्चादर्श, सदाचारी और दृढ़। जो काम करे उसका स्वयं दृष्टांत बन जाय। निष्फलता से भग्नोत्साह न हो। सभी विपत्तियों को सहने के लिए उद्यत हो, लोग उसका अनुसरण करें।

उदाहरण—लूथर, चेथम, राममोहनराय, स्वामी दयानन्द, म० गांधी।

उपसंहार—जल यदि खड़ा रहे तो उससे दुर्गन्ध आती है, एवं संस्थाओं में अवश्य परिवर्तन होना चाहिए। सुधारक का काम नङ्गी तलवार पर नाचना।

भारतशासन प्रणाली में १९२० के राजनैतिक सुधार।

(Reforms of 1920 in the Government of India)

भूमिका—पहले पहल भारतशासन इंडिया कम्पनी के हाथों में। फिर पार्लियामेन्ट द्वारा संस्थापित गवर्नर जनरल के हाथों में। कौंसल संस्थापन। तदनन्तर मार्ले के १९११ के सुधार। पुनः भारतसचिव मांटेगू के सुधार, इसकी प्रसिद्धि मांटेगूचैम्फ्सफोर्ड के नाम पर।

सुधार का स्वरूप—प्रान्तीय कौंसलों में सदस्यों की वृद्धि, उनमें निर्वाचित सदस्यों का अंश प्रायः पांच चौथाई। विद्या, स्वास्थ्य-रक्षा, व्यापार आदि का शासन निर्वाचित वज़ीरों के अधिकार में। भारत कौंसिल के दो भाग—कौन्सिल आफ स्टेट और असेम्बली, दोनों में निर्वाचित सदस्यों की अधिकता, किन्तु असेम्बली में दूसरी की अपेक्षा ज़्यादा। कौन्सिल कर्मचारियों में भारतीयों की संख्या आगे से ज़्यादा। प्रत्येक प्रान्त गवर्नर के आधीन।

कारण—हिन्दुस्थान में अंग्रेजी शासन की बुराइयों से प्रजा में उद्विग्नता, यूरोपीय महायुद्ध के कारण स्वतन्त्रता की संसारभर में लहर। दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों पर अत्याचार, भारत जातीय कांग्रेस का आन्दोलन।

परिणाम—मांटेगू का भारतागमन, लार्ड चेम्सफोर्ड से मिलकर इस पर विचार, पार्लियामेन्ट द्वारा सुधारों का स्वीकार। इस पर भारत में कांग्रेस के नर्म और गर्म दल में भेद, नर्म दल का इसे स्वीकार, गर्म दल का असन्तोषजनक कहकर अस्वीकार, और असहयोग, महात्मा गान्धी असहयोग के मुख्य नेता।

उपसंहार—यद्यपि शासकों द्वारा इसका परिणाम स्वराज्य स्थापन बताया गया है तो भी उनके वचनों पर विश्वास न कर लोगों का जल्दी स्वराज्य लेने को कड़ा आन्दोलन ।

विद्युत और उसका प्रयोग

(Electricity and its Application)

भूमिका—प्राकृतिक पदार्थों में एक प्रकार की प्रबल शक्ति । हज़ार साल पहले इसका अम्बर और रेशम की रगड़ से आविर्भाव, किन्तु अधिक खोज न होना, पीछे शनैः २ अन्य पदार्थों में इसकी सत्ता का निश्चय ।

इतिहास—एक सौ वर्ष हुए प्राकृतिक विद्युत और मेघों की विद्युत में अभेद का ज्ञान । उन्नीसवीं शताब्दी में इसमें बहुत उन्नति, १८०० में वोल्टा नाम वैज्ञानिक ने बिजली की बैटरी बनाई । बिजली की तार का आरम्भ, १८७५ में टेलीफोन, १८७७ में फोटोग्राफ, १८८० में लंदन में बिजली की रोशनी । १८८४ में बेतार की तारवर्की ।

प्रयोग—विजली का जीवन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध । टेलीग्राफ, टेलीफोन, फोटोग्राफ, रोशनी, कल चलाना, कई रोगों की निवृत्ति, विजली की रेलगाड़ी, अनेक प्रकार के युद्धयन्त्र ।

गुण—बड़ी प्रबल शक्ति, बिना क्लेश के इसका प्रयोग, साफ वायु को अन्य गैस आदि की तरह गन्दा नहीं करती, जलप्रपात आदि से निकालना।

हानि—कई बार प्रयोग करनेवाले का प्राणनाश । कई बार चलती चलती मशीन इसके न होने से बन्द हो जाती है । आँधी भूकम्प आदि में इसको बाधा । युद्ध में इसका दुरुपयोग ।

उपसंहार—मनुष्य की एक असीम शक्ति-शालिनी परिचालिका । इसके लाभ हानियों से अधिक । मालूम नहीं आगे को यह क्या क्या अचंभा दिखाये ।

जल वायु का जातीय स्वभाव और आचार व्यवहार पर प्रभाव ।

भूमिका—लोगों के स्वभाव, आचार व्यवहार और उस देश की प्राकृतिक शक्तियों का घनिष्ठ सम्बन्ध । जैसा देश, लोगों का वैसा स्वभाव ।

अक्षांश के अनुसार लोगों के भिन्न भिन्न स्वभाव आदि—बहुत गरम देश के रहने वाले प्राय: शक्तिहीन, आराम चाहने वाले, परिश्रम और अध्यवसाय रहित । स्वभाव, उत्तापशीलता, प्रेम और घृणा में दृढ़ता, जल्दी भड़क उठना । बहुत ठंडे देशों के लोग निरुत्साह, उदासीन, भीरु किन्तु प्रसन्न, सन्तुष्ट । समशीतोष्ण (Temperate) देशों के लोग परिश्रमी, शक्तिशाली, अध्यवसायी, आत्मनिर्भर होते हैं ।

कारण—गरमी से पौरुष, प्राकृतिक पदार्थों की अधिकता से परिश्रम अनावश्यक, गरमी से स्वभाव तीक्ष्ण । शीत देशों में मनुष्य की सारी शक्ति आजीविका के निर्वाह में ही खर्च हो जाती है । उसकी आवश्यकताएँ कम अत: अपनी दशा से सन्तुष्ट । समशीतोष्ण देशों में जीवनयात्रा के लिये परिश्रम आवश्यक । जलवायु उसकी प्रकृति के अनुकूल और परिश्रम के लिये उपयोगी ।

देश की प्रकृति का मनुष्य पर प्रभाव—समुद्र के किनारे रहनेवाले स्वभावतः स्वातन्त्र्य-प्रिय, भ्रमण-प्रिय, पुरुषार्थी और पहाड़ी देशों के रहने वाले स्वदेश-भक्त स्वतन्त्र । मरुस्थल के रहने वाले विचार-शील, दीर्घसूत्री, जैसे रूसी लोग ।

उपसंहार—ऐसा होने पर मनुष्य ने अपने में कई गुण प्रकृति के प्रतिकूल भी पैदा कर लिए हैं । फिर भी देश और प्रकृति का प्रभाव व्यक्ति व जाति के स्वभाव में झलके बिना नहीं रहता ।

अभ्यास

इन में से प्रत्येक के शीर्षक बना कर प्रस्ताव लिखो।

आज्ञापालन, मिताचरण, दीर्घसूत्रता, अतिथिसत्कार, मातृभूमि, मेल, पराधीनता, दस्तकारी, शिक्षकों के प्रति विद्यार्थियों के कर्तव्य, ईर्ष्या, विद्रोह, आत्मबलिदान (Self-Sacrifice) बड़प्पन (Greatness), भक्ति (Devotion), उपहास (Rediculе), मृत्यु, देशी कारीगरी, रोशनी के उपाय, प्रातःकालीय भ्रमण।

उपन्यास (Novels)

भूमिका—मनोरञ्जक भाषा में किसी घटना का वर्णन। अनेक भेद।

लाभ—परिश्रम के बाद श्रान्त होकर मन बहलाने का साधन। भाषा, ज्ञान, कल्पना शक्ति की वृद्धि, भिन्न समय व देशों के आचार, परिस्थिति का ज्ञान।

हानि—बुरे उपन्यास पढ़ने से बुरे संस्कार, उपन्यास पढ़ना व्यसन बन जाना।

उपसंहार—शृङ्गार, रसपूर्ण उपन्यास छात्रों के लिए त्याज्य, किन्तु अच्छे सामाजिक और राजनैतिक उपन्यास पढ़ने से लाभ।

प्रस्ताव

किसी घटना को ऐसी सुन्दर और मनोहर भाषा में वर्णन करना कि जिसे समाप्त कर ही छोड़ने से मन को शान्ति आय। उपन्यासों में अधिकतर काल्पनिक होते हैं और जो किसी ऐतिहासिक विषय पर

भूमिका

आश्रित होते भी हैं, तो उनके वर्णन के ढङ्ग में बहुत सा कल्पना का अंग रहता है। उपन्यास में चाहे किसी विषय का भी वर्णन

हो उसका निष्कर्ष बहुत शिक्षाप्रद और भावपूर्ण रहना है। उपन्यास के कई भेद हैं। कई उपन्यास सामाजिक होते हैं, उनका अभिप्राय लोगों के सामने वर्तमान समाज की बुराइयाँ प्रकट करना होता है। किसी एक इतिहास के विषय पर लिखे हुए उपन्यास ऐतिहासिक उपन्यास कहलाते हैं। बहुत से उपन्यास राजनीतिक होते हैं। यह बात सुनिश्चित ही है कि प्रतिभाशाली लेखकों के उपन्यासों के अध्ययन से बुद्धि का अप्रतिहत विकास होता है। हिन्दी के स्वतन्त्र लिखे उपन्यासों में गोस्वामी किशोरीलाल जी और लज्जाराम शर्मा महता के उपन्यास चरित्र-चित्रण की दृष्टि से अतिमनोरम और पठनीय हैं। श्री प्रेमचन्द्र जी के उपन्यास भी हिन्दी साहित्य की एक अपूर्व संग्रहणीय सामग्री हैं। बंग भाषा से अनुवादित बङ्किमचन्द्र चटर्जी और रवीन्द्रनाथ टैगोर के उपन्यास भी साहित्यिक दृष्टि से बहुत ही उपयोगी हुए हैं। ऐसे ग्रन्थरत्नों के मनन तथा अध्ययन से हानि नहीं प्रत्युत लाभ ही है।

लाभ

दिन भर के परिश्रम के बाद श्रान्त हुए पुरुषों को उपन्यासों से जो आनन्द मिलता है वह और किसी से नहीं मिल सकता। उपन्यास पढ़ते पढ़ते कई घण्टे मिनटों की तरह गुज़र जाते हैं। किसी भाषा के उच्चज्ञान प्राप्त करने का एक उपाय उस भाषा में उपन्यासों का अभ्यास है। और किसी विषय पर पुस्तक पढ़ो एक दो घण्टों के बाद चित्त नहीं लगेगा, किन्तु किसी उपन्यास को समाप्त किए बिना चित्त हटता ही नहीं। साथ ही इससे कल्पनाशक्ति बहुत बढ़ जाती है। भिन्न भिन्न देश और समय के आचार, व्यवहार, परिस्थिति का पूरा पूरा ज्ञान होता रहता है। यदि उपन्यासों का अभ्यास गवेषणा-पूर्ण हो तो इन से जो शिक्षाएँ मिलती हैं उनका प हृदयपटल पर रा असर हो जाता है।

जैसे अच्छे उपन्यासों से अच्छे संस्कार होते हैं वैसे ही बुरे संस्कार होने की सम्भावना है। उपन्यास पढ़ने वालों को उठते बैठते, सोते जागते वही दृश्य दिखाई देते हैं जो उन्होंने उपन्यासों में पढ़े हों। उपन्यास पढ़ना एक ऐसा व्यसन लग जाता है जो उमर भर नहीं छूटता। लोग आधी आधी रात तक लैंप जला कर उपन्यास हाथ में लिए बैठे रहते हैं फिर भी यदि निद्रा तंग न करे तो उसे छोड़ने को जी नहीं चाहता। जिन छात्रों को यह व्यसन लग जाय वे भले ही अपनी परीक्षा पास कर सकें। शृङ्गाररसपूर्ण उपन्यास पढ़ने से चाल चलन बिगड़ जाता है।

हानि

किन्तु इससे यह अभिप्राय नहीं कि इन्हें बिलकुल छोड़ ही देना चाहिए। ऐसा करने से साहित्य का एक प्रधान अङ्ग छूट जायगा और बड़े २ लेखकों की कल्पनाशक्ति और ओजस्विनी भाषा से वञ्चित रहना पड़ेगा। अभिप्राय यह है कि विद्यार्थियों को इनका दास नहीं बनना चाहिये किन्तु जो एक दो उपन्यास परीक्षा के लिए नियत हों व जो अच्छे प्रसिद्ध लेखकों के भावपूर्ण ऐतिहासिक व राजनीतिक उपन्यास हों उनका अभ्यास ज़रूर करना चाहिए। बंगभाषा के प्रसिद्ध लेखक बंकिम बाबू के उपन्यास यदि बंगभाषा से निकाल दें तो उसका क्या शेष रह जायगा? महर्षि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के उपन्यास कितने शक्तिप्रद हैं? किसी अंग्रेज़ को कहो कि स्काट, डेकिन आदि के उपन्यास पढ़ना छोड़ दे तो वह आपका कहना क्या मानेगा?

उपसंहार

कौन अविष्कार बड़ा है, लिखना वा छापना ?

भूमिका

मनुष्यों में ज्ञान प्रसार के लिए लिखना और छापना दोनों आवश्यक हैं। बिना लेख व पत्र व्यवहार के मनुष्य दूरस्थित पुरुषों को अपने विचार नहीं समझा सकता। यदि छापने की कला न रहे तो एक लिखी पुस्तक के नष्ट होने पर वह ज्ञान भी साथ ही चला जायगा। दूसरा, जिसके पास वह पुस्तक रहेगी उसका विषय दूसरों को मालूम तक भी न होगा।

लिखना

लिखना छापने से पहले निकला। पहले अक्षरों के चिन्ह बनाए गए और पीछे उनकी नकल कर सीसे के अक्षर बने। वर्णमाला को आविष्कृत हुए हज़ारों वर्ष हुए हैं और छापने की विधि को निकले केवल दो तीन शताब्दियाँ। पुरुष के पास केवल पत्र और पेन्सिल हों वह जो चाहे लिख सकता है। आज हर एक पढ़े लिखे पुरुष की जेब में एक डायरी और एक पेन्सिल रहती है। कहीं उसे कोई विचार सूझा नहीं और उसे डायरी में लिखा नहीं, नहीं तो भूल जाने का डर है। कई प्रसिद्ध यात्रियों ने इस प्रकार यात्राप्रसङ्ग में थोड़ा २ लिख कर अपनी यात्रा की बड़ी २ पुस्तकें लिख डाली हैं। क्या छापने से यह सम्भव है? किन्तु छापने के भी अनेक लाभ हैं।

छापना

एक बार पुस्तक लिख कर एक दो दिनों में उसकी हज़ारों और लाखों प्रतियाँ छप सकती हैं। जिस एक पुस्तक को लिखते महीनों लगते हैं वह कुछ घंटों में लाखों की संख्या में तैयार होजाती है। इसका फल यह होता है कि पुस्तकों का मोल बहुत कम होजाता है और एक पुस्तक को लाखों आदमी एक ही समय में पढ़ सकते

हैं। बिना छापने की शक्ति के विद्या-वृद्धि कहां ? स्कूल और कालिजों की पढ़ाई की पुस्तकें कहाँ मिलतीं ? छापने के अविष्कार से पहले जिन पुस्तकों का मूल्य सैकड़ों रुपये होता था अब उनका मूल्य केवल दो चार ही आने है। लिखी पुस्तक से छपी पुस्तक सुन्दर, शुद्धऔर साफ़ होती है। छापने की कल का ही प्रभाव है कि संसार भर की घटनाएं एक दो दिनों मे समाचारपत्रों द्वारा प्रत्येक नर नारी को मालुम हो जाती हैं।

प्रत्येक की उपयोगिता दूसरे से कम नहीं तो भी लिखने के बिना काम ही नहीं चलेगा और छपने के बिना ज्ञान-वृद्धि होना असम्भव है। लिखने को छोड़ नहीं सकते और छापने को छोड़ कर हमारी बहुत हानि होगी, सभ्यता को बहुत धक्का लगेगा। इसलिए लिखना बड़ा आविष्कार है।

उपसंहार

स्कूलों में वर्तमान शिक्षा के गुण व दोष

The advantages and disadvantsges of the present educaton in the schools

भूमिका—शिक्षा वह है जो शरीरिक और मानसिक शक्तियों को बढा कर मनुष्य को ऐतिहासिक और पारलौकिक काम करने के उपयोगी बनाए। स्कूलों में वर्तमन शिक्षा की दशा।

लाभ—हृदय का विकास, रोज़ी कमाने की योग्यता, अच्छे बुरे में विवेकशक्ति।

दोष—असली तत्त्व को न समझ कर पदार्थों को रट कर परीक्षा पास करना। मातृभाषा का अभाव, केवल साहित्यशिक्षा, शिल्प शिक्षा का अभाव, केवल दफ्तरों में क्लर्क बनने की योग्यता, देश-भक्ति की शिक्षा न होना, स्वास्थ्य का ख्याल न रखना।

उपसंहार—दोष अधिक और गुण कम। अन्यदेशीय शिक्षित युवक और यहां के शिक्षित युवक की तुलना। नये सुधार में शिक्षा पर प्रान्तीय अमात्यों का अधिकार, इसमे सुधार की आशा।

तुलसीदास

भूमिका

हिन्दी जगत् के नभोमण्डल में गोस्वामी तुलसीदास जी सूर्यवत् प्रकाशमान हैं। उनको रामायण आदि काव्य लिखे सैकड़ों वर्ष गुजर गए हैं लेकिन उनकी कविता की अभी तक कोई तुलना नहीं कर सका। वे स्वाभाविक कवि थे। उनके लिखे बीसों ग्रन्थ मिलते हैं और कहा जाता है कि कई लुप्त भी हो चुके हैं। वर्तमान ग्रन्थों में रामचरित-मानस, कवितावली, और विनय-पत्रिका बहुत प्रसिद्ध हैं। इनमें भी कोई दूसरा ग्रन्थ रामचरितमानस (रामायण) की तुलना नहीं कर सका। इनसे पहले भी हिन्दी के अनेक कवि हो चुके हैं किन्तु इनका कविता-ढङ्ग ही निराला था।

कविता

इनकी कविता बड़ी भावपूर्ण है। एक एक शब्द उच्च तथा योग्य भावों से भरा हुआ है। उनकी रचना-शक्ति इतनी प्रौढ़ है कि जिस विषय का वर्णन किया है उसमें कमाल कर दिखा दिया है। रामायण पढ़ते समय मनुष्य यही समझता है कि रामलीला उनकी आंखों के सामने हो रही है। अपने काव्यों के पात्रों के स्वभाव वर्णन में वे पराकाष्ठा तक पहुँच गए हैं। उनकी भाषा बड़ी विशद और सरस है। उनके दोहे और चौपाइयाँ पढ़ते मन आनन्दसागर में हिलोर लेने लगता है। उनके काव्यों में उत्प्रेक्षा, रूपक और उपमा आदि कतिपय अलंकारों की भरमार है। मनुष्यस्वभाव का उनको इतना परिचय था कि इन अलंकारों का प्रयोग करने में वे तनिक

भी नहीं चूके। जहां कहीं उन्होंने प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन किया है उसे पढ़ जिह्वा गोस्वामी जी का यश गाते गाते नहीं थकती।

ये राम के अनन्य-चित्त भक्त थे। उन्होंने अपनी रचना के पद पद में रामचन्द्र का गुणगायन किया है।

उनके स्वभाव आचार-आदि की उनकी रचना से झलक

उनका आचार बड़ा शुद्ध था और स्वभाव के बड़े साधु-शील थे। अपने समय के वे प्रतिनिधि-कवियों में से थे। उस समय के आचार व्यवहार, लोकाचार और कई घटनाओं का ज्ञान उनकी कविता से प्राप्त होता है।

जैसी उन्होंने कविता लिखी ईश्वर की कृपा से उसका प्रचार भी वैसा ही हुआ। केवल रामायण का ही संसार

उपसंहार

की सभी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। भारत में करोड़ों नरनारियां उनकी रामायण का प्रातः-काल पाठ करना पुण्य समझती हैं। इस ग्रन्थ-रत्न के प्रचार की प्रतिद्वन्द्विता में संसार का कोई ग्रन्थ नहीं टिक सकता। रामायण की जितनी महिमा की जाय थोड़ी है। जगत् भर में उसके पल्ले के एक दो ही और ग्रन्थ शायद हों।

अभ्यास

इनके शीर्षक बनाकर प्रस्ताव लिखो—

धन का आचार पर अच्छा व बुरा प्रभाव। परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने के कारण। स्कूलों में शिक्षा किस भाषा द्वारा हो, अपनी व विदेशी। हिन्दुस्तान के कुटुम्बों में स्त्रियों की वर्तमान दशा। स्कूलों में ड्रिल (Drill) की उपयोगिता।

तुलना और विभेद (Comparison and Contrast)

स्वतन्त्रता व परतन्त्रता

भूमिका—स्वतन्त्रता जो मन में आये कर सकना; परतन्त्रता दूसरों की इच्छानुसार काम करना। मानसिक स्वतन्त्रता जीवमात्र के लिए स्वाभाविक किन्तु मनुष्य को अपने निर्वाह के लिए परतन्त्र होना पड़ता है।

मनुष्य को किनके अधीन होना पड़ता है—ईश्वर के, माता-पिता व अन्य सम्बन्धियों के, राजा के, छात्रों को आचार्य के, समाज के, अपनी जीविकानिर्वाह के लिए धन के, व्यापारियों के।

स्वतन्त्रता—असली अपने विचारों की स्वतन्त्रता। अच्छे काम करने में रुकावट न होना, आजीविका की स्वतन्त्रता।

उपसंहार—अपनी बुद्धि के अनुसार अच्छे काम करते जिसके मार्ग में कोई बाधा न हो वह स्वतन्त्र। इसी के लिए मनुष्य प्राण तक दे देता है, यही मनुष्यजन्म का अधिकार है।

प्राचीन और नवीन सभ्यता।

(Ancient and Modern Civilisation)

प्राचीन सभ्यता—साधारण जीवन उच्च विचार, परलोकसाधन, दमनशीलता, शान्ति-प्रियता, आध्यात्मिक उन्नति।

नवीन सभ्यता—रुपया इसकी कुंजी, आध्यात्मिक उन्नति का अभाव, बाह्याडम्बर।

सभ्यता और देश के जलवायु का सम्बन्ध—भारत की सभ्यता कृषि-सम्बन्धिनी, गोपालन, गोरक्षण। पाश्चात्य सभ्यता की नकल से देश को हानि।

उपसंहार—सदा अपने से नीच का अनुकरण करना।

प्रस्ताव

पुरानी सभ्यता का उद्देश्य साधारण जीवन और उच्च विचार (Simple living and High thinking) था। हमारे पुराने लोग शून्य एकान्त स्थान में जनसमाज से बड़ी दूर किसी पर्वतस्थली या पवित्र नदी के तट पर स्वच्छ जलवायु में नीवार, साग पात या कन्द मूल फल खाकर रहते थे। बेशक़ीमत दस्तर-खान उनके लिये नहीं सजाया जाता था, पर विचार उनके ऐसे ऊँचे होते थे कि संसार की कोई ऐसी बात न बच रही जिस पर उन्होंने ख़याल नहीं दौड़ाया और जिसको अपने मस्तिष्क में नहीं रख लिया। इस समय की सभ्यता की जो चलन है उसके साथ उनकी सभ्यता का मुकाबिला करने से वे लोग जंगली (Rude) और असभ्य कहे जा सकते हैं। तब के लोगों को शान्ति बहुत प्रिय थी। जो जितना ही मन को वश में कर दमनशील और शान्त रहता था वह उतना ही अधिक सभ्य समझा जाता था। इस समय शांतशील बोदा समझा जाता है। मनको वश में करना तो दूर रहा बल्कि मन को चलायमान और इन्द्रियों का अतिशय लालन करने की कितनी तदबीरें और सामग्रियां चल पड़ी हैं। फ्रांस में दिन में तीन बार लेडियों के फ़ैशन बदले जाते हैं। फ़ैशन जो इस समय अन्तिम सीमा को पहुँच रहा है यह सब सभ्यता ही का प्रसाद है। इसके सिवाय लोभ, ईर्ष्या, ममता इत्यादि दोष जो इन्द्रियों को दमन न करने से पैदा होते हैं सब इस समय की शोभा और गुण हो रहे हैं। सारांश यह कि उस समय की सभ्यता का लक्ष्य केवल बाहरी उन्नति पर नहीं, वरन् भीतर की उन्नति पर था जिसे आध्यात्मिक उन्नति कहते हैं। हमारी आध्या-त्मिक उन्नति में बिना बाधा पड़े बाह्य भौतिक उन्नति उस समय

प्राचीन सभ्यता

लोगों को स्वीकृत थी। इस समय "मेटीरियल" अर्थात् भौतिक उन्नति पर ज़ोर दिया जाता है, जिसका परिणाम यह है कि हम आध्यात्मिक विषय में दिन दिन गिरते जाते हैं।

नवीन सभ्यता

हमारी आधुनिक सभ्यता बिलकुल रुपये पर निर्भर है। रुपया पास न हो तो आप सकलगुणगरिष्ठ शिष्ठ समाज के सिरमौर होकर भी श्रद्धास्पद नहीं हो सकते। सर्वसाधारण को जब यह निश्चय हो गया कि केवल रुपया सब इज्ज़त और प्रतिष्ठा का द्वार है तब जैसे बने वैसे रुपया इकट्ठा करना ही हमारा उद्देश्य हो गया और हमारी आध्यात्मिक शक्ति का ह्रास दिन पर दिन होने लगा। तब के लोगों में ऐसा न था। आभ्यन्तरिक शक्तियों को विमल रख रुपये का लाभ होना हो तो वह लाभ उन्हें ग्राह्य था। एक कारण इसका यह भी कहा जा सकता है कि तब देश सब ओर से रंजा पुंजा था, धन की कमी न थी। अब इस समय मुल्क में ग़रीबी बढ़ जाने से लोगों को रुपया कमाने में यत्न (Struggle) विशेष करना पड़ता है। यूरोप और अमेरिका के आढ्यतम देशों में इस आधुनिक सभ्यता की पोल इसलिये नहीं खुलने पाती कि वहां कोशिश (Struggle) इतनी अधिक नहीं है। अन्यत्र सभ्यता की भरपूर पोल खुल रही है।

सभ्यता और देश के जल वायु का सम्बन्ध

सभ्यता का, देश के जलवायु के साथ बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। किसी देश में प्राकृतिक नियमानुसार जो बात या जो बर्ताव जलवायु के अनुकूल पड़ता है वही वहाँ की सभ्यता समझी जाती है। जैसे हमारा देश कृषिप्रधान है तो जो कुछ यहाँ की खेती के अनुकूल या पृथ्वी की उपज को बढ़ाने वाले है उसकी वृद्धि या उस का पोषण इस देश की सभ्यता का एक अंग है। जैसे—गोरक्षा या गोपालन यहाँ की

सभ्यता का श्रेष्ठ अंग है। सामयिक सभ्यता में गोधन की क्षीणता महापातकसा देश भर को आक्रमण किये है। हमारे पूर्वज प्रकृति को छेड़ना नहीं पसन्द करते थे वरन् प्रकृति में विकृतिभाव बिना लाये सहज में जो काम हो जाता था उसी पर चित्त देते थे। आधुनिक सभ्यता जो विदेश से यहाँ आई है, हमारी किसी बात के अनुकूल नहीं है। किन्तु इससे प्रतिदिन हमारी क्षीणता होती जायगी। भोग विलास आधुनिक सभ्यता का प्रधान अंग है। दरिद्र का विलासी होना अपना नाश करना है।

"उपर्युपरि पश्यन्तः सर्व एव दरिद्रति।"

उपसंहार

अर्थात् अपने से अधिक वाले का अनुकरण करने से कौन नहीं दरिद्र हो जाता? तस्मात् अन्त को यही सिद्ध होता है कि "साधारण जीवन और ऊँचा विचार" यही पुष्ट सभ्यता है। अस्तु—

जिस दिन देखे वे कुसुम गई सो बीत बहार।
अब अलि रही गुलाब की अपत कटीली डार॥

पं० बालकृष्ण भट्ट।

शहर व देहात का वास

(Town-life & Country-life)

कोई कोई ग्रामवास ही की प्रशंसा करते हैं और कोई कोई

भूमिका

नगरवास ही की तान टेरते हैं। पर यथार्थ में दोनों ही में दोष और गुण दोनों हैं। उनका उल्लेख कर देने से सहज ही निश्चय कर लिया जा सकता है कि दोनों में कौन अच्छा है।

ग्रामवासी प्रायः सच्चे, निष्कपट और सरल प्रकृति के होते हैं। दूसरों को धोखा देना जानते ही नहीं। पर नगर-

स्वभाव

वासी इसके ठीक विपरीत होते हैं। छल प्रपञ्च तो इनमें कूट कूट कर भरा रहता है। बिचारे भोले भाले ग्रामवासियों को इनकी धूर्त्तता का पता लगना तथा इनकी व्यङ्गपूर्ण बातों का समझना बड़ा ही कठिन है। ये दूसरों को धोखा देने ही में अपनी प्रशंसा समझते हैं।

ग्रामवासी स्वभाव के सीधे साधे होते हैं वैसे ही इनका वेष भी बहुत ही सादा होता है। साधारणतः धोती और

वेष

गमछा यही इनके पोशाक हैं। पैर में जूता भी न रहा तो कोई क्षति नहीं। पर नगरवासियों की वैसी दशा नहीं है। ये बड़े ही आडम्बर के साथ रहते हैं। बिना कोट कमीज़, पैण्ट और अंग्रेज़ी जूते के इनका काम नहीं चलता। कितना समय तो बालों के सँवारनेही में बीत जाता है। जहाँ ग्राम-वासियों के हाथ में भद्दी, मोटी पर दृढ़ लाठी रहती है वहाँ इनके हाथ में पतली, सुन्दर, सोने या चाँदी से मढ़ी हुई छड़ी का होना अत्या-वश्यक है। यदि कहीं जाना पड़े तो ग्रामवासी अपनी गठरी अपने माथे पर उठा कर पैदल चल देंगे। पर नगरवासियों को एक कुली होना आवश्यक है और यदि कुछ दूर जाना हो तो गाड़ी, टमटम इत्यादि होना चाहिये। कितने नगरवासी तो ऐसे हैं कि उन्हें थोड़ी दूर भी जाना पड़े तो बग्गी, जोड़ी, फिटिन, मोटर, साइकिल इत्यादि किसी सवारी का होना परमावश्यक है।

ग्रामवासियों के भोजन में भी सादगी रहती है। पर इन्हें सच्चे घी, दूध, आटे तथा प्रत्येक फल के ताजे

भोजन

ताजे अन्न तथा साधारण फलों की कमी नहीं रहती। इनका भोजन सादा होते हुए भी पुष्टिकर होता है। नगरवासियों को भोजन में अनेक प्रकार की चीजें

मिलती हैं। पूड़ी मिठाई इत्यादि बने बनाये भोज्य पदार्थ नगर में सर्वदा प्रस्तुत रहते हैं। यदि रात के समय भोजन के उपरान्त भी मेरे यहाँ कुछ अतिथि आ जाँय तो फिर से पाक करने का कष्ट न उठाना पड़ेगा। जितने प्रकार के खाद्य-द्रव्य नगर में मिल सकते हैं ग्रामों में उनका दर्शन भी दुर्लभ है। पर साथ ही नगर के खाद्य-द्रव्य पुष्टिकर नहीं होते। सच्चे घी, दूध का मिलना तो प्रायः असम्भव ही है। फस्लों के ताज़े ताज़े अन्न तो प्रायः मिल ही नहीं सकते। नगरों में अनेक प्रकार के फल, मेवे इत्यादि अन्य देशीय खाद्य-द्रव्यों का बाहुल्य रहता है, पर ग्रामों में इनका मिलना कठिन है।

परिश्रम

फस्लों के बोने व काटने इत्यादि के समय ग्रामवासियों को कुछ अधिक परिश्रम करना पड़ता है, पर शेष समय प्रायः आलस्य में ही बीतता है। इनके सभी कामों में सादगी रहने के कारण इनके आवश्यकीय कार्य्यों के निमित्त थोड़े ही धन की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि इन्हें अधिक परिश्रम की आवश्यकता नहीं होती। रात के समय ये निश्चिन्त हो सुख की नींद सोते हैं। पर नगरवासियों को आडम्बर इत्यादि के कारण अधिक द्रव्य की आवश्यकता पड़ती है और इसी से इन्हें अधिक परिश्रम करना पड़ता है। नगर में जाने पर जिधर दृष्टि डाली जाती है उधर ही लोग अपने अपने कामों में लगे दीख पड़ते हैं। १०, ११ बजे रात तक नगर के लोग काम ही में फँसे दीख पड़ते हैं। ग्रामवासियों को शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है और नगरवासियों को प्रायः मानसिक परिश्रम अधिक करना पड़ता है।

सहानुभूति

ग्रामों में जितने लोग छोटे बड़े रहते हैं प्रायः सबको सबसे परिचय रहता है, इससे विपत्ति पड़ने पर एक दूसरे को सहायता करते हैं। पर नगरों में लोगों को बहुत ही कम परिचय होता है, अतएव उनमें

बहुत ही कम सहानुभूति होती है। कभी कभी तो ऐसा दीख पड़ता है कि एक ही घर के कुछ अंश में लोग उत्सव मना रहे हैं और कुछ अंश में दुख की आहें भर रहे हैं। तथा कुछ अंश के लोग अपने नित्य के धन्धों ही में व्यस्त हैं।

स्वास्थ्य

स्थान की संकीर्णता न रहने तथा प्रशस्त वायु मिलने से ग्रामवासियों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है। प्रातःकाल उठ कर खेतों में चले जाने से प्रातःकाल के वायु सेवनद्वारा इनका स्वास्थ्य और भी अच्छा रहता है। पर स्थान की सङ्कीर्णता, प्रशस्त वायु के अभाव, कल कारखानों की अधिकता, अधिक लोगों के निवास तथा अधिक किरासन तेल जलने इत्यादि अनेक कारणों से नगरवासियों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता। शारीरिक परिश्रम के कम व मानसिक परिश्रम के अधिक करने से भी इनका स्वास्थ्य भंग हो जाता है।

शिक्षा

ग्रामों में बालक बालिकाओं की शिक्षा का कोई उचित प्रबन्ध नहीं है, अतएव वहां के लोग प्रायः मूर्ख व असभ्य होते हैं। इन्हें अपने हानि लाभ का भी यथार्थ ज्ञान नहीं होता। ज्ञान होने पर भी अपनी उन्नति का कोई प्रबन्ध नहीं कर सकते। पर नगरों में शिक्षा की सुविधा के निमित्त अनेकों पाठशालायें, स्कूल और कालेज खुले हुए हैं, अतएव नगरों में बराबर शिक्षा की चर्चा रहती है। यहां लोग अपनी या अपने देश की उन्नति के निमित्त अनेक प्रकार का यत्न करते तथा नित्य नये नये आविष्कार किया करते हैं। नगर के लोग प्रायः शिक्षित होते हैं।

स्वतन्त्रता

ग्रामवासी प्रायः अपने ज़मीनदारों या प्रधानों की अधीनता में रहते हैं। धूर्त पण्डित और ब्राह्मणों का इन पर पूरा प्राधान्य रहता है। ये लोग लकीर के फकीर होते हैं। पुराने अनुचित व्यवहारों का भी

त्यागना पाप समझते हैं। इससे आज कल इनकी उन्नति में बड़ी भारी बाधा उपस्थित हो रही है। यदि कोई इनकी दोषभरी प्राचीन रीतियों में किसी प्रकार के सुधार का प्रस्ताव करे तो उसे महाशत्रु समझते हैं। नगरवासी प्रायः बड़े स्वतन्त्रताप्रिय होते हैं। ये किसी का अनुचित आधिपत्य सह्य नहीं कर सकते। इनके यहाँ पण्डितों का ढोंग काम नहीं करता। ये प्रत्येक कार्य्यों में विचार-शक्ति से काम लेते हैं। ये अपने रीति-रिवाजों में सुधार संस्कार का प्रयत्न किया करते हैं।

प्राकृतिक दृश्य

ग्रामों में रहने पर भिन्न २ ऋतुओं में भिन्न २ सुन्दर शस्यादिकों का दृश्य बड़ा ही मनोहर दीख पड़ता है। ग्रामों में निस्तब्धता का अटल राज्य रहता है, पर नगरों में चतुर्दिक एक्का, बग्गी, टमटम, मोटर इत्यादि के शब्द, लोगों का कोलाहल तथा अनेक प्रकार के प्रलोभनों से मनुष्य की चित्तवृत्ति चञ्चल हो जाती है।

उपसंहार

यदि निष्पक्षभाव से विचार किया जाय तो नगरवास ही उत्तम समझा जायगा। पर दोनों ही का सुख दोनों पर निर्भर है। यथा प्रायः सभी खाद्य-पदार्थ ग्रामवासियों के परिश्रम ही से प्राप्त होते हैं। ऐसे ही सुख की अन्य सामग्रियां प्रायः नगरवासियों के परिश्रम से प्राप्त होती हैं।

(पं० श्यामसुन्दर)

प्राचीन और नवीन यात्रा साधन

भूमिका

संसार में सबसे बहुमूल्य वस्तु समय है। इसलिये मनुष्य सदा इसी खोज में रहता है कि किस तरह उसका समय थोड़ा खर्च हो। यही अन्यान्य यात्रा-साधनों के आविष्कार का प्रधान कारण है।

इसी से बाधित होकर मनुष्य-बुद्धि ने रेल, मोटर, ट्रामवे, हवाई जहाज, बाइसिकिल निकाल डाले ।

प्राचीन यात्रा

पुराने जमाने में घोड़े, बैल, ऊँट आदि का ही यात्रा के लिये प्रयोग होता था। वे भी केवल धनिकों के ही पास होते थे। फिर शनैः २ बैलगाड़ी और इक्के का प्रचार हुआ। यही हाल सैकड़ों शताब्दियों तक रहा। उन दिनों में लोगों का एक स्थान से दूसरे स्थान तक यात्रा करना बड़ा कठिन मालूम होता था। मार्ग में कई दिन लगते थे। रातों जागना पड़ता था। रुपये खर्च होते थे। चोर, डाकुओं का सदा भय रहता था। यदि कोई पुरुष तीर्थयात्रा के लिए जाता तो उनके सम्बन्धियों को उसके लिए व्यग्र रहना पड़ता। मासों तक कोई चिट्ठी पत्र नहीं मिलता था। व्यापार में उन्नति नहीं होती थी। एक स्थान का माल दूसरी जगह नहीं पहुंच सकता था। किन्तु साथ ही यह भी था लोग बड़े परिश्रमी थे। बीसों मील तक पैदल चले जाना उनके सामने कुछ नहीं था। उनका स्वास्थ्य अच्छा रहता था।

नवीनयात्रा-साधन

नवीन यात्रासाधनों में भाफ ने इन्द्रजाल के खेल जैसा चमत्कार दिखा दिया है। रेलगाड़ी, मोटर, ट्रामवे सभी इसी की कृपा से बने हैं। बिजली का चमत्कार भी कोई कम नहीं। विलायत में बिजली की रेलें चलती हैं। बिजली के प्रयोग से हवाई जहाज उड़ते फिरते हैं। इन्होंने एक घण्टे में सैकड़ों मील चले जाना सुलभ कर दिया है। इनके अतिरिक्त हर एक मनुष्य के लिए बाईसिकल बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है।

उपकार

रेलयात्रा से एक तो समय कम खर्च होता है। यहां से कलकत्ते जाना हो तो केवल चालीस, पैन्तालीस घण्टे लगते हैं। पहले इतने दिनों में भी वहां पहुंचना कठिन था। दूसरा केवल पन्द्रह बीस

रुपये किराया लगता है। मार्ग में कोई डर नहीं। आराम से सोए हुए जहां चाहो पहुंच सकते हो। अब तो यह यत्न होरहा है कि ऐसे हवाई जहाज़ बनाए जायं जिन में लोग एक सप्ताह में ही भारत से लंडन की सैर कर वापस चले आयं। ऐसे यात्रासाधन बनने से लाखों लोगों की आजीविका हो जाती है। इन से व्यापार की वृद्धि हुई है।

हानि

इन यात्रासाधनों से बड़ी हानि यह हुई है कि लोग बहुत आरामपसन्द बन गए हैं। यदि दो तीन मील भी दूर जाना पड़ता है तो मोटर या ट्रामवे के बिना चला नहीं जाता। इस लिए लोगों का स्वास्थ्य बिगड़ गया है।

उपसंहार

यात्रासाधन दूर देशों के परस्पर सम्बन्ध के लिए प्रधान उपकारक हैं। जितने वे शीघ्रगामी हों उतना घनिष्ठ सम्बन्ध होगा। संसार की सभ्यता में बहुत बड़ा भाग इनका है।

इतिहास-अभ्यास के गुण

(The value of the study of History)

भूमिका—प्राचीन काल की घटनाओं का वर्णन इतिहास है, इतिहास के लेखकों का उपकार।

गुण—प्राचीन और आधुनिक काल और संस्थाओं का परस्पर संबंध। इतिहास पथ-दर्शक। मनुष्य का स्वभाव, वासनाएं, परिस्थिति सभी कालों में एक जैसी। अतः पिछली घटनाओं से शिक्षा। जातियों के पतन और उत्थान के कारणों का ज्ञान।

उदाहरण और उनसे शिक्षा—रोम-राष्ट्र का पतन, रूस के अत्याचारों से उसका पतन, जर्मनी का विकास और ह्रास, मेज़नी, गैरी-

वाल्डी आदि महापुरुषों के जीवन का देश से सम्बन्ध। दुर्योधन के अत्याचारों से भारत का सर्वनाश। १८५७ का राजविद्रोह और उससे बड़ी राजकीय शक्तियों के सामने छोटे छोटे विद्रोहों का कुफल। मुगल, मरहट्ट और सिक्खों का राज्य और पात।

उपसंहार—इतिहास पढ़कर उसमे सचाई की खोज निकालना। निष्पक्ष निर्णय।

युद्ध के प्राचीन और नवीन साधन

भूमिका—प्रतिपक्षियों को नीचा दिखाकर अपनी इच्छासाधन का प्रधान उपाय युद्ध है।

प्राचीन युद्धों में साधन-सामग्री—महाभारत व रामायण काल में बड़ी सेना, सवार, पदाति, रथ हाथी। सेना के अनेक व्यूह, अनेक प्रकार अस्त्र, शस्त्र। धनुष बाण की प्रधानता। युद्ध में धर्मावलम्बन, कूट छल का कम प्रयोग। एक एक योद्धा का रण-भूमि में परस्पर युद्ध। सेनापतियों का युद्ध, शनैः २ तोप, बन्दूकें आदि का आविर्भाव, मुगलों के काल में युद्ध में धर्म का अभाव, कूटनीति, फिर भी मरहट्टों और राजपूतों में व्यक्तिगत शूरता।

युद्ध की आधुनिक सामग्री—पदाति और सवार, रथ और हाथियों का अभाव। जल युद्ध में जङ्गी जहाज़, सबमरीनें, वायुयान, बड़ी बड़ी पचास पचास मील की दूरी पर मार करने वाली तोपें, ज़हरीली गैस, सेनापति का कर्तव्य युद्ध कराना, स्वयं लड़ना नहीं। कूटनीति का प्रयोग। युद्ध में व्रणित सैनिकों के लिए अस्पताल। तार, रेलें, बेतार की तार का प्रयोग।

निष्कर्ष—प्राचीन युद्ध बाहुबल, शूरता और पराक्रम पर आश्रित। आधुनिक युद्ध पदार्थविद्या पर। पहले कम नरसंख्या की हत्या,

अब बहुत। पहले के रणभूमि में उपस्थित योद्धाओं में युद्ध किन्तु अब सैकड़ों कोस दूर घरों में बैठे बेचारे लोगों की भी बमवर्षा द्वारा हत्या।

उपसंहार—जब तक पदार्थविद्या का यह दुरुपयोग जारी रहेगा तब तक युद्ध दूर नहीं होंगे और नर-हत्या बन्द न होगी।

छात्रावास के गुण व दोष

भूमिका—स्कूल व कालिज के छात्रों का एक स्थान में मिलकर रहना उनके भोजन, पठन आदि का प्रबन्ध।

प्राचीन प्रथा—गुरुकुल। आचार्य के जीवन का उन पर प्रभाव, ब्रह्मचर्य, स्वच्छ जलवायु। धर्मानुष्ठान।

आधुनिक प्रथा—कालिज व स्कूलों के साथ छात्रावास। सभी छात्रों का एक निरीक्षक के आधीन रहना। आचार्यों का उनके जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं। विवाहित अविवाहित छात्रों का मिल कर रहना। बड़े बड़े शहरों में रहने से स्वच्छ जलवायु न मिलना। सरकारी छात्रावासों में धर्मानुष्ठान पर ध्यान न देना। दूसरों में भी इस पर अधिक ज़ोर न देना।

लाभ—घर के काम धन्धों से पृथक रह कर केवल पढ़ने की ओर ध्यान। योग्य परिश्रमी और साहसी छात्रों की देखा देखी पढ़ने में मन लगना। अनेक स्थान और जातियों के लड़कों का परस्पर परिचय और ज्ञान। सहानुभुति। निर्धन, धनाढ्य सबके एक ही तरह के जीवन से समाज को लाभ। नियमानुसार काम करने की टेव।

दोष—माता पिता के प्रभाव का अभाव। ज़्यादा खर्च, देखा देखी शौकीनी में पड़ जाना। अनेक प्रकार के व्यसन। बुरे छात्रों के संग से बुराइयां।

उपसंहार—दोषनिवृत्ति हो सकती है। लाभ अधिक। आजकल बोर्डिङ्ग स्कूल और कालिजों के खोलने की ओर अधिक ध्यान। उनकी उपयोगिता।

व्यक्तिजीवन और इतिहास

(Biography and History)

भूमिका—व्यक्ति-जीवनी केवल एक महापुरुष का जीवनवृत्त और इतिहास एक विशेष समय व घटना का वृत्तान्त। इतिहास में बहुत महापुरुषों का जीवन-वृत्तान्त आ जाता है, अतः महा पुरुषों के समुदाय के जीवनवृत्त को इतिहास कहते हैं। अतः महापुरुषों के जीवन से इतिहास-बोध की सम्भावना। यथा भीष्म के जीवन से महाभारत के इतिहास का परिचय, व रामचन्द्र के जीवन से रामायण के इतिहास का ज्ञान।

व्यक्तिजीवनके गुण—मनोहर, विशद, (केवल एक ही प्रसङ्ग का अभ्यास करना पड़ता है) किसी घटना के कारण और फल का शीघ्र परिचय, उसके जीवन की घटनाओं से क्रमशः इतिहास का विकास रामायण में केवल राम का जीवनचरित, बाइबल में केवल मसीह का जीवन और कुरान में मुहम्मद साहिब का जीवन।

इतिहास के गुण—एक व्यक्ति के जीवन में जो इतिहास की झलक होती है वह इतिहास नहीं। विशेष घटनाओं की आवश्यकता पर जोर इतिहास में ही होता है जीवनी में नहीं। केवल इतिहास से निकाल कर एक जीवनी के अभ्यास से मनुष्य किसी घटना के विषय में स्वतन्त्र सम्मति नहीं प्रकट कर सकता।

उपसंहार—इतिहास के अभ्यास से पहले बालकों को उसमें प्रवेश के लिए महापुरुषों के जीवन पढ़ना लाभदायक। बच्चों को उन से एक तो कुछ इतिहास का ज्ञान दूसरा उनके पवित्र जीवनों से शिक्षा।

सम्पत्ति और विपत्ति (Prosperity & Adversity)

भूमिका—सम्पत्ति-किसी कार्य में सफलता व ऐश्वर्यशालिता; विपत्ति जो काम किया जाय उस में विफलता व निर्धनता।

सम्पत्ति के गुण और दोष—रोज़ी कमाने के लिए समय खर्च न होने से उस समय को अच्छे कामों में लगाना, अहंकार के न होने से लोगों में प्रशंसा, धन का सदुपयोग आदि। गुण—सम्पत्ति में मनुष्य का अहंकार, अपने भाग्य पर अधिक विश्वास से असावधानता और निरपेक्षता, धन की अधिकता से व्यसनों में पड़ना, धन का दुरुपयोग आदि अनेक दोष।

विपत्ति के गुण और दोष—मनुष्य सदा नम्र होता है। पूंजी पर विचार के पश्चात् काम शुरू करता है। बुराइयों में फंसने का समय नहीं मिलता। सहनशीलता—आदि गुण। लोगों से घृणित, मन में अशान्ति, काम करने का साहस न होना, खाने पीने के पदार्थों की कमी—आदि दोष।

उपसंहार—धन की कदर वही करता है जो निर्धन रह चुका हो। सम्पत्ति का उसे आदर होता है जो विपत्तियां झेल चुका हो।

प्राच्य और पाश्चात्य जीवन

(Eastern mode of life and western mode of life)

भूमिका—मनुष्य का रहन सहन, समाज, वेष आदि उसके जीवन के चिन्ह, जीवन का सम्बन्ध देश के जलवायु से।

प्राच्य जीवन—वेष—वस्त्र खुले, प्रायः सरदी में गरम और गरमी में सरद। प्रान्त भेद से वस्त्रभेद, पगड़ी सिर का वस्त्र।

आहार—शाकभोजी, मांसभोजी, गेहूं और चावल प्रधान खुराक।

समाज—स्त्रियों की परतन्त्रता, अन्धविश्वास, मिले कुटुम्ब में निवास,

पुरुष स्त्रियों में कम मेल जोल, साइन्स के नये आविष्कारों स घृणा। चिरकाल से पराधीन रहकर अनेक सद्‌गुणों का त्याग।

पाश्चात्य जीवन—वेष—तङ्ग वस्त्र, देश के शीतल होने से गरम ऊनी वस्त्र, सब का एकजातीय वेष, सिर का टोप। आहार प्रायः मांस, देश की शीतलता इसका कारण। स्त्रियों की प्रतिष्ठा और स्वतन्त्रता, विवाह के पश्चात् कुटुम्ब से अलग होकर रहना, प्रत्येक पुरुष स्वनिर्वाह के लिए स्वतन्त्र, पुरुष स्त्रियों में बहुत मेल जोल, साइन्स के आविष्कारों से फायदा उठाने वाले, स्वतन्त्र होने से साहसी, सच्चे, सद्‌गुणी।

उपसंहार—किसी को दूसरे के छिद्र नहीं निकालने चाहिये, प्रत्येक का जीवन स्वाभाविक जल वायु के अनुसार। किन्तु दूसरों के वेष, रहन सहन को नकल करना बड़ा दोष। इसमें कुछ विलायत में होकर आए हुए व यहां रहने वाले लिखे पढ़े बाबू अपराधी।

अभ्यास

इन विषयों के शीर्षक बनाकर प्रस्ताव लिखो—

विद्या और विवेक (Knowledge and Wisdom), पौर व सैनिक जीवन (The life of a civilian & that of a soldier) कला हुनर और पदार्थविद्या (Art & Science), अकबर और औरंगज़ेब।

लोकोक्तियां

ईमानदारी काम करने की उत्तम नीति है।

(Honesty is the best policy)

भूमिका—मनुष्य को कार्य साधन के लिए किसी पथ का अवलम्बन आवश्यक, सचाई का मार्ग उत्तम।

लाभ—सचाई में सफलता निश्चित, उसका मान, आत्मानन्द।
न होने से हानि—छली पुरुषों को पूर्ण सफलता नहीं मिलती, मिलती है तो भी कुछ देर के बाद कलई खुल जाती है। इन्हें शांति नहीं मिलती, सदा अपने कर्मों के छिपाने की चिन्ता में रहते हैं।
उपसंहार—धूर्तों से सच्चे अधिक सुखी। जिस जाति व देश में धूर्तों की संख्या अधिक हो वह देश उन्नत नहीं होता।

प्रस्ताव

भूमिका

मनुष्य जब संसार-यात्रा की पगडंडी पर पहले पहल पैर रखता है तब उसे यह प्रथम स्थिर कर लेना पड़ता है कि वह किस रीति से अपनी यात्रा सम्पन्न करेगा। वह जिस रीति का अवलम्बन करता है उसे ही नीति कहते हैं। मानव स्वभाव की विभिन्नता के कारण नीति के स्वरूप भी भिन्न भिन्न होते हैं। पूर्व सुकृत और सुशिक्षा के कारण जिनका अन्तःकरण निर्मल और सबल रहता है वे कर्मठ पुरुष निश्चय कर लेते हैं कि वे अपने अपने समस्त लोकव्योहार सचाई के साथ करेंगे। पर, जिनका अन्तःकरण अज्ञानतिमिर से आछन्न एवं आलस्यकलुषित अवएव निर्बल रहता है, वे दूरदर्शिता न रहने के कारण छल कपट का आश्रय लेने की ठान लेते हैं। यद्यपि दोनों प्रकार के पुरुषों का लक्ष्य एक ही रहता है—दोनों ही चाहते हैं कि हम सुख शान्ति और स्वतन्त्रता के साथ अपना जीवन बितावें, तथापि दोनों की अभीष्ट सिद्धि में अन्तर हो जाता है। हमें यह विचारना है कि वह अन्तर कैसा है।

लाभ

हम देखते हैं कि जो मनुष्य मन वचन और कर्म तीनों की सचाई रखते हैं—अर्थात् सच्ची ही बातों को सोचते, और सच्ची बात बोलते और तदनुसार सच्चे ही कार्य भी करते हैं उनके लिये सफलता

मानों पहले से ही धरी रहती है। ऐसे पुरुष यदि कहीं नौकरी करते हैं तो कुछ ही दिनों में आप देखेंगे कि वे अपनी सचाई से अपने स्वामी को प्रसन्न करके बड़े से बड़े पद पर पहुँच गये। अगर बाणिज्य-व्यवसाय की दीवाल सचाई की नींव पर खड़ी की जाती है तो वह बड़ी सुडौल और टिकाऊ होती है। देखा जाता है थोड़े से भी मूलधन से प्रारम्भ किया गया कोई व्योपार थोड़े दिनों में चमक उठा और होते होते उसने विशाल आकार धारण कर लिया। इसका कारण क्या है? वही सचाई है। सच्चा मनुष्य जहां जाता है वहीं उसकी प्रतिष्ठा होती है। वह दीन से भी दीन वेष में भी क्यों न हो उसकी सचाई की बात लोगों पर प्रकट होते ही सबका सम्मानभाजन बन जाता है। यदि ऐसा पुरुष छोटी सी झोपड़ी में निवास करता है तो इस हेतु उसके चित्त में कुछ भी अशान्ति नहीं है। अपने परिश्रम से जो थोड़ा बहुत पा लेता है उसी से वह आनन्द और स्वतन्त्रता के साथ काल यापन करता है। क्यों? वह क्यों नहीं घबराता? उसको आनन्द कैसे मिलता है? आप यदि इसका कारण जानना चाहें तो सुनिये। सुख दुःख का लगाव अन्तःकरण से है, धन सम्पत्ति तो बाहरी वस्तु है। वह रहे चाहे न रहे। सच्चे सुखानुभव का हेतु सच्चा अन्तःकरण तो उसके पास है। तो फिर वह आनन्द क्यों न पाये? जब ऐसे साधुशील पुरुषों की संसारयात्रा समाप्त होती है तब वे विलक्षण सुख-शान्ति के साथ न केवल संसार को ही, किन्तु अपने सुनाम को भी अपने पीछे छोड़ जाते हैं।

न होने से हानि

हम यह भी देखते हैं कि जिनका हृदय छलप्रपञ्च और दाव-पेंच से भरा रहता है, जो सोचते और हैं और बोलते और करते भी और ही हैं, उनको किसी कार्य में अच्छी सफलता होती ही नहीं। जो थोड़ी बहुत होती भी है वह कुछ ही देर के लिये।

ऐसे पुरुष को आज आप प्रयत्न करके किसी बड़े पद पर बैठा दीजिए पर कल ज्योंही उसके हृदय की कुटिलता प्रकट हो जायगी त्योंही वह नीचे गिर जायगा। कभी कभी सुनते हैं कि बड़ी कोठी या बड़ा कारखाना एकाएक बैठ गया। ऐसा क्यों होता है? ऐसी घटनाओं का कारण प्रायः वही कुटिलाई रहती है। बालू की भीत कितने दिन ठहर सकती है? देखा जाता है कि कभी कभी कुटिल पुरुष भी लोगों में बड़ा आदर पा रहा है। पर कब तक? जब तक उसकी कलई नहीं खुली है। ऐसा मनुष्य लोगों को धोखा देने के लिये बहुधा बड़ी ठाटबाट और चमकदमक के साथ रहता है, किन्तु ज्योंही लोग जान जाते हैं कि यह भेड़ की खाल ओढ़े भेड़िया है त्योंही वह ठिकाने लग जाता है। जो सत्यशील नहीं हैं वे स्वयं सब प्रकार से सम्पन्न रहने पर भी दूसरे की चीज़ कहीं कुछ पा जायँ तो हड़पने के लिये उद्यत रहते हैं। रहें क्यों नहीं? सन्तोष की जननी सचाई है। जब सचाई नहीं तब सन्तोष कैसा? ऐसे मनुष्य प्रायः कभी सच्चे स्वातन्त्र्यसुख का अनुभव नहीं कर सकते। क्योंकि इनके मर्म दूसरे न कहीं जान लेवें इस चिन्ता से ये बहुधा अपने भाव को दबा कर दूसरों की इच्छानुसार चलते हैं। फिर परतन्त्रता और किसे कहते हैं? जिसके हृदयसुमन में साधुता का वास नहीं है वह बड़े बड़े महल में बड़ी सजधज और बहुत से जन परिजनों को आस पास में लेकर ही क्यों न निवास करता हो वह अपने को सून सान श्मशान में आसीन समझता है। ऐसे को लक्ष्मी भी आनन्द नहीं दे सकती। क्यों? जिसके रहने से आनन्द का यथार्थ अनुभव होता है वह चित्त की शान्ति उसके पास ही नहीं। ऐसे पुरुष का अन्तकाल बड़ा दुःखद होता है क्योंकि उस समय उसको अपनी धूर्तता की सब पुरानी बात स्मरण आ जाती है और उनके कारण होने वाली दुर्गति की चिन्ता से वह भीत और कातर हो जाता है।

सच्चे और धूर्त दोनों प्रकार के पुरुषों की परस्पर तुलना करने के उपरान्त सिद्धान्त यह निकलता है कि जो कोई सच्चे सुख तथा सच्ची शान्ति और स्वतन्त्रता के साथ जीवन यापन करना चाहे तो वह केवल सच्चा रह कर अर्थात् केवल सचाई की ही नीति से ऐसा कर सकता है। जो छल प्रपञ्च और दाव पेंच का—अर्थात् कूटनीति का सहारा लेकर जीवनसंग्राम में विजयलक्ष्मी को आलिङ्गन कर अपना यशोदुन्दुभि बजवाना चाहता है उसकी वह इच्छा केवल मृगतृष्णा है। जो सिद्धान्त एक व्यक्ति को लागू है वह एक जाति को भी और जो एक जाति को लागू है वह एक देश या राष्ट्र को भी। क्योंकि व्यक्तियों के समूह से ही देश या राष्ट्र बनता है। जिस देश के अधिकांश व्यक्ति सच्चे हैं वह सच्चा और जिसके अधिकांश कुटिल हैं वह कुटिल कहलाता है। जैसे एक व्यक्ति के सम्बन्ध में वैसे ही एक जाति और देश या राष्ट्र के सम्बन्ध में भी कुटिलाई की नीति अधम और सचाई की नीति उत्तम समझनी चाहिये।

उपसंहार

पं० जीवनराय।

जहाँ चाह तहाँ राह

इस लोकोक्ति का यह आशय है कि सफलता का मुख देखने का उसे ही सौभाग्य मिलता है जो दृढ़प्रतिज्ञ होकर अपने संकल्प को न छोड़े। ऐसे पुरुष को पग पग पर यद्यपि बाधाओं का सामना करना पड़े तो भी वह ज़रा भी विचलित और भग्नोत्साह नहीं होता। यदि मनुष्य किसी काम को आवश्यक न समझे तो उसे वह उत्साह

भूमिका

के साथ नहीं करता। अंग्रेजी में कहावत है (A man can do what a man has done) जो काम किसी एक मनुष्य ने किया है उसे हर एक कर सकता है। किन्तु हाथ पर हाथ रख पड़े रहने से नहीं, ईश्वर मेरा काम करेगा, जो कुछ भाग्य में लिखा है मिल जायगा—इत्यादि बातों पर अन्धविश्वास से नहीं। वरन् पक्के संकल्प और पूर्ण उत्साह से। 'ईश्वर उसका सहायक है जो अपना आप सहायक है'। नैपोलियन बोनापार्ट कहा करता था कि 'असम्भव' यह शब्द मूर्खों के कोष में है।

चाह से उपकार

यदि सच पूछा जाए तो इस में ज़रा भी अत्युक्ति नहीं कि यह समस्त संसारभवन चाह की नीव पर खड़ा है। उस नीव को थोड़ा भी कमज़ोर होने दिया नहीं और सारे का सारा भवन धरातल पर गिर चूर्ण हुआ नहीं। बिना चाह के कोई क्या काम करेगा! खाना, पीना, उठना, बैठना, सोना, जागना सभी चाह के फल हैं। यदि चाह नहीं तो यह क्या है जो एक सुकुमार छात्र को सभी आराम सुख छोड़ कर दिन रात पढ़ने में व्यग्र रखती है, आधी आधी रात तक उसे पुस्तक हाथ में लिए निद्रादेवी का सामना करने पर उद्यत करती है? यदि यह चाह का नहीं तो किसका प्रभाव है कि मनुष्य घर का आनन्द छोड़ हज़ारों मीलों की दूरी पर विदेशों में धक्के खाता फिरता है? यूरोप को संसार का अग्रणी किसने बनाया? जापान को सभ्य जातियों की घुड़दौड़ में अग्रसर किसने किया? यदि चाह न होती तो कौन इतने कष्ट पाकर हमारे लिए रेलगाड़ी बनाता? तार, टेलीफोन, हवाई जहाज़ों का आविष्कार करता? इन आविष्कारों को पूर्ण रूप में लाने के लिए उन्हें क्या क्या कष्ट उठाने पड़े होंगे! किन्तु यदि बाधाओं से हतोत्साह होकर वे अपना संकल्प छोड़ बैठते तो संसार को कितनी हानि होती!

चाह न होने और केवल आकाश में भवनरचना करते रहने से मनुष्य कोई काम नहीं कर सकता। उसे आलसी रह कर भूखा मरना पड़ता है। कई लोग ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि—

चाह न होने से हानि

अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका यों कहे, सब को दाता राम ॥

ऐसे पुरुषों की क्या दशा होती है? क्या उन्हें किसी ने सम्पन्न, प्रसन्न होते देखा? सच पूछो तो भारत की अधोगति का यही कारण हैं। संसार में रहना ऐसा कठिन हो गया है कि बिना हाथ पैर हिलाए कोई ठिनाना मिलने का नहीं। देशों में, जातियों में और व्यक्तियों में एक बड़ी प्रबल घुड़दौड़ हो रही है। किसी ने अपनी चाल को ढीला किया नहीं और पीछे रहा नहीं।

कुछ सौ वर्ष पहले पश्चिमीय देशों का क्या हाल था? दूर जाने की जरूरत नहीं, थोड़ा समय ही हुआ है, जापान को कौन जानता था? किन्तु आजकल बड़ी बड़ी जातियाँ उसे देख विस्मित हो रही हैं। दूसरी ओर प्राचीन भारत और आधुनिक भारत की तुलना तो करो। इसकी यह दुर्गति तभी से होने लग गई थी जब इस में लोगों ने कर्मण्यता और कर्तव्यपरायणता को छोड़ा।

उदाहरण

जब एकलव्य द्रोणाचार्य जी के पास अस्त्र-शिक्षा के लिए गया तो उन्होंने उसे अस्त्र शिक्षा देना न चाहा। क्या वह अपना संकल्प छोड़ कर बैठ गया? नहीं, वह जंगलों में जाकर अस्त्र प्रयोग का अभ्यास करने लगा। वही एकलव्य एक दिन अर्जुन का मुकाबला करने के योग्य बन गया। अमरीका की हबशी जाति के बुकर, टी० वाशिङ्गटन का नाम किसने नहीं सुना? क्या बिना दृढ़ प्रतिज्ञा के वह उस उच्च कोटि पर पहुंच गया था? गत यूरो-

पीय महा-युद्ध में जब फ्रांस पर पहले आक्रमण से जर्मनी ने विजय पा ली थी तो यदि फ्रांस उत्साह छोड़ बैठता तो आज उसकी क्या दशा होती ?

उपसंहार

चाह अच्छी होनी चाहिए। बुरी चाह से बिना हानि के कोई लाभ नहीं। दूसरे, चाह अपनी योग्यता की हो। यदि कोई साधारण मनुष्य चाहे मैं सार्वभौमिक राजा बन जाऊँ तो क्या उसकी चाह पूरी होने की है ? बिना निराशा और कष्ट के उसे कोई फल न मिलेगा।

संसार में जितने भी अच्छे काम हुए हैं वे सभी दृढ-प्रतिज्ञ महा-पुरुषों की चाह के फल हैं।

अब पछताये होत का जब चिड़ियां चुन गईं खेत

भूमिका

इसका आशय है कि यदि कोई किसान अपने खेत की परवाह तो करे नहीं किन्तु जब उसके खेत पक्षी चुग जाएं तो रोने पीटने लग जाए, उसका विलाप बिलकुल वृथा है। इसी तरह समय पर काम न न करना और काम के बिगड़ जाने पर पश्चात्ताप करना व्यर्थ है। बिना अपनी मूर्खता का अधिक परिचय देने से इसका और कोई फल नहीं हो सकता। इसलिए उचित यह है कि ठीक नियत समय पर फुर्ती से काम करना चाहिये नहीं तो उस किसान की तरह पीछे पछताना पड़ेगा।

नियत समय

मनुष्य के पास समय बहुत थोड़ा है और काम बहुत हैं। प्रत्येक समय का नियत काम है। इसलिए यदि उस नियत समय में वह काम न किया जाय तो वह काम फिर कभी किया ही न जायगा। अथवा उसे किसी और काम के समय पर करना पड़ेगा। जो लोग यह

शिकायत किया करते हैं कि उनका अमुक काम न हो सका व समय थोड़ा है और काम बहुत हैं, उन्हें समय का सदुपयोग करना आता नहीं।

संसार के इतिहास में ऐसे सैकड़ों उदाहरण मिलेंगे जिनसे यह स्पष्ट है कि थोड़ी सी बेपरवाही से कुछ का

उदाहरण

कुछ होगया। जिस नैपोलियन को परास्त करने को अंग्रेज़ लोग सदा व्यग्र रहते और अनेक कूट नीति का प्रयोग करते थे वही नैपोलियन अपनी सेना की थोड़ी सी भूल से पकड़ा गया। जिस समय पर उसकी सेना ने एक नियत स्थान पर पहुंचना था वह उस सयम वहां नहीं पहुंच सकी और वह एकाकी वहां पहुंच गया। इतिहास में ही नहीं, हर रोज़ के कारोबार में बीसों दृश्य हमें दिखाई देते हैं जो इस सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं।

यह बहुत शिक्षा-प्रद लोकोक्ति है। मनुष्य को सदा जागरूक रहना चाहिए। संसार की इस कशमकश में

उपदेश

असावधानता मृत्यु का चिह्न है। सदा इस भाव को सामने रखो 'कि समय धन है'। आयु के जिस समय का जो काम हो उसे उसी ही में कर डालो। विद्याभ्यास बालकपन में ही हो सकता है। यदि यह समय चूक जायगा तो फिर कोई दूसरा इसके लिए आने का नहीं। इसी तरह युवावस्था में धनोपार्जन करना चाहिए क्योंकि वृद्धावस्था में कोई कठिन काम नहीं हो सकता। धर्मकार्यों में कभी सुस्ती न करो।

जो मनुष्य काम को कल के लिए छोड़ता जाएगा वह कोई काम न कर सकेगा, क्योंकि 'कल' कभी नहीं

उपसंहार

आता। काम बिगड़ने पर अपनी मूर्खता पर पछताना केवल वृथा ही नहीं किन्तु हानिकर है, क्योंकि रोते पीटते रहने और उस बिगड़े काम का कोई उपाय न करने से वह काम कभी सुधरने का नहीं।

अपनी करनी पार उतरनी

भूमिका

इसका अर्थ यह है कि कोई भी काम नहीं हो सकता जब तक मनुष्य उसे करने का स्वयं उद्योग न करे। कोई मनुष्य नदी से पार नहीं हो सकता यदि वह स्वयं हाथ-पांव मार कर तैरना नहीं जानता। यह संसार भी एक समुद्र है, इसके पार उतरना मनुष्य का कर्तव्य है। बस, मनुष्य वही है जिसमें इसके पार जाने की शक्ति है। जिनमें दुर्भाग्यवश वह नहीं वे इधर उधर मुँह ताकते रह जाते हैं व मंझधार में डूब जाते हैं।

आत्मावलबन

इसलिए मनुष्य को स्वावलम्बी होना चाहिये। इसका यह आशय नहीं कि वह अकेला बैठा रहे और किसी के साथ लेनदेन का व्यवहार न रक्खे। कभी नहीं, इसका अभिप्राय यह है कि जब तुम स्वयं हाथ-पांव मारोगे तो दूसरे भी तुम्हारी सहायता करेंगे। मनुष्य को सदा स्वतन्त्र होने का यत्न करते रहना चाहिए। सदा माता बच्चे को दूध नहीं देती रहती, बड़े होकर उन्हें अपने सिर बोझ उठाना पड़ता है। उसे उस बोझ को उठाने के लिए तैयारी करनी चाहिए।

आवश्यकता

'डारविन' का सिद्धान्त है कि इस संसार में बड़ी खींचातानी हो रही है। हर एक मनुष्य को अपनी सत्ता कायम रखने को निरन्तर युद्ध करना पड़ता है। वह उस युद्ध में विजय पायेगा तो उसकी सत्ता रहेगी। निर्बल, जो अपनी सहायता के लिए दूसरों का मुँह ताकते हैं उनके लिये संसार में जगह नहीं। इसलिए मनुष्य अपने आप को ऐसा बनाये कि उसे दूसरों की जरूरत न पड़े। संसार में सभी महा-पुरुष आत्मावलम्बी हुए हैं। दूसरी ओर उन लोगों

को, जिनके बाप दादा लाखों की धन सम्पत्ति छोड़ मरे हैं, उस सम्पत्ति के आश्रय पर काम काज छोड़ देने से दर दर भीख मांगना पड़ा है। क्या म० गोखले के पिता उनके लिए जायदाद छोड़ मरे थे ? क्या दादाभाई नौरोजी ने जगद्विख्यात यश दूसरों की सहायता से प्राप्त किया था। ?

यह उपदेश बड़े काम का है। सच पूछो तो सफलता की यह कुञ्जी है। भारत में आजकल इस पर अनुष्ठान करने वालों की बहुत कमी है। इसलिए इसकी दुर्गति का कोई ठिकाना नहीं।

उपसंहार

कहने से करना भला

(Example is better than precept)

भूमिका—उपदेशों से इतना प्रभाव नहीं पड़ता जितना उस उपदेश का उदाहरण बन कर दिखाने से।

हेतु—मनुष्य जैसा देखता है करता है। कानों से सुन से आंखों से देखा चिरस्थायी, मन पर अधिक प्रभाव।

प्रभाव के स्थान—परिवार, विद्यालय, समाज, परिस्थिति, सङ्गति।

शिक्षा—परिवार में बुरे कार्य न हों, विद्यालय में आचार्य जो कुछ पढ़ाएं उसका नमूना बन कर दिखावें। समाज में कुरीतियां न हों, उनके साथ सङ्ग हो जो सदाचारी हों।

उदाहरण—नैपोलियन अपने को पहले भीषण विपत्तियों में डालता था, उसके सैनिक अपने आप उसके अनुयायी बनते थे। महात्मा गांधी जो कहता है पहले स्वयं उसे करता है।

उपसंहार—बुरे उदाहरणों का अनुसरण नहीं करना चाहिये।

कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर

(Rome was not built in a day)

भूमिका—धैर्य से काम करना, घबड़ाने से काम बिगड़ना। रोम पहले एक छोटी सी बसती, धीरे धारे इतना बड़ा शहर।

धैर्य के गुण—धैर्य-शाली बड़ी बड़ी विपत्तियों से बच जाते हैं, युद्ध में विजय पाते हैं, व्यापार में घाटा होने पर भी अन्त में लाभ, विद्याभ्यास, व्यापार, युद्ध में धैर्य आवश्यक।

न होने से हानि—घबराहट में कुछ नहीं हो सकता, मनुष्य आत्मघात कर लेता है। जल्दी से काम बिगड़ता है, इस लिये कहा है (सहसा विदधीत न क्रियाम्)।

उदाहरण—नल, युधिष्ठिर, नैपोलियन आदि।

उपसंहार—कार्य करना मनुष्य का कर्तव्य, किन्तु इसके फल के लिए उसे अधीर न होना चाहिये। मनुष्य यदि अपने काम का आप ही फल चाहे तो संसार का काम नहीं चलता। यथा वृक्ष लगाना आदि।

इस के शीर्षक बना कर प्रस्ताव लिखो:—

अभ्यास

बून्द बून्द से घट भरे, बुद्धिर्यस्य बलं तस्य (Knowledge is power), कोलों की दलाली से हाथ मुंह काले, जिस की लाठी उसी की भैंस (Might is right). पराधीन सुपने सुख नाहीं, आवश्यकता आविष्कार की जननी है (Necessity is the mother of invention), होनहार बिरवान के होते चीकने पात (Coming events cast their shadows before), महापुरुषों के जीवन ही उस देश का इतिहास हैं (History of a country is the Biography of its great men)

परिशिष्ट १

पुस्तकान्तर्गत अभ्यासों के दिये हुए प्रस्ताव-विषयों के संक्षिप्त शीर्षक।

जापानी

भूमिका—जापान के निवासी, आकार छोटा, दृढ़। रङ्ग—गोरा, चपटी नासिका। धर्म, भाषा—बौद्ध धर्म, भाषा जापानी। सामाजिक और राजनैतिक स्थिति—समाज—अङ्गरेजों से मिलती जुलती किन्तु शीघ्र उन्नति, व्यापार-वृद्धि, रूस जापान युद्ध इत्यादि।

चीनी

भूमिका—चीन के निवासी। आकार गठन जापानियों की तरह, किन्तु सिर पर लम्बी शिखा। धर्म, भाषा—बौद्ध, भाषा चीनी। सामाजिक और राजनैतिक स्थिति—कुछ जापानियों से मिलती जुलती, अफीम खाने की बुरी आदत. वस्त्र खुले, रेशमी छाता, राजकीय-शासन। उपसंहार-भूमि बड़ी उर्वरा, किन्तु लोग आलसी।

तुर्क

भूमिका—तुर्किस्तान के निवासी। आकार-गठन—भारतीयों की तरह। धर्म, भाषा—धर्म महम्मदी, भाषा अरबी। सामाजिक और राजनैतिक परिस्थिति—स्त्रियों में पर्दा, राजकीय शासन-धर्म और राज्य के शासन का अधिपति एक ही खलीफा। उपसंहार—बड़ी लड़ाकी जाति, एशियाखण्ड में विस्तृत. हिन्दुस्थान में महमूद, यूरोपीय महायुद्ध।

मरहट्टा

भूमिका—महाराष्ट्र प्रान्त के निवासी। आकार गठन—हिन्दुओं की तरह। धर्म, भाषा—हिन्दू धर्म, भाषा-मरहट्टी। सामाजिक और

राजनैतिक स्थिति—ब्राह्मण जाति, वस्त्र-पगड़ी, धोती, अङ्गरखा, अङ्गरेजी राज्य के अधीन, बड़े बुद्धिमान, लोकमान्य तिलक महाराष्ट्रीय।

राजपूत

भूमिका—राजपूताना प्रान्त और दूसरी रियासतों के निवासी। आकार-गठन—आकार हिन्दुओं की तरह। धर्म, भाषा—धर्म हिन्दू, भाषा अपने अपने प्रान्त की। सामाजिक और राजनैतिक स्थिति—हिन्दुओं की तरह। उपसंहार—बड़ी शूर जाति, इनका मुसलमानों से युद्ध।

मुसलमान

भारत, तुर्किस्तान, अरब आदि के निवासी। आकार-गठन—अपने अपने देश की तरह। धर्म, भाषा—धर्म मुहम्मदी, भाषा-तुर्की, फारसी, उर्दू व प्रान्तीय। सामाजिक और राजनैतिक स्थिति—अपने अपने देश की तरह। उपसंहार—बड़ी पुरानी जाति, संसार में इनकी बड़ी संख्या, धर्म के पक्के, एकता।

उल्लू

श्रेणी—नभचर पक्षी, दिन में अन्धा। आकार-गठन—बड़ा सिर, मोटी, गोल आंखें, नोकदार चोञ्च, टेढ़े पञ्जे, नरम पर, चुपके से उड़ता है, श्रवणशक्ति अतितीक्ष्ण। स्वभाव भोजन—सूर्य के तेज को नहीं सह सकता, दिन में छिपना और रात्रि में निकलना, चमगादड़, सहे और चूहे खाता है। उपसंहार—अपशकुन का चिन्ह, तंत्र मंत्र में इसके प्रत्येक अंक के उपयोग के विषय में लोगों का विश्वास, कौओं से वैर।

कौआ

श्रेणी, निवास—नभचर, अण्डज, निवास सर्वत्र। आकार-गठन—कोयल से कुछ बड़ा, वर्ण-काला, किसी के गले में श्वेत लकीर। स्वभाव, भोजन—कठोर काँ काँ का शब्द, एक की आवाज

से सैकड़ों का एकत्रित हो जाना, कोयल के अंडों को पोसना, मैला, सड़ा गला अन्न, मांस खाना। उपसंहार—उल्लू से वैर, लोगों का इन्हें पितृपक्ष में अन्न की बलि देना।

शुतुर्मुग

श्रेणी, वासस्थान—अंडज, शिकारी, सब से बड़ा पक्षी, अफ्रीका, अरब। आकार-गठन—आदमी की ऊँचाई, गरदन लम्बी, डैंने छोटे छोटे। स्वभाव, भोजन—खोता नहीं बनाता, बालू में मादीन अंडे देती है, अंडे बहुत बड़े, बहुत तेज दौड़ना, अन्न, फल, कीड़े, मांस खाता है, कई दिन तक पानी न पीकर रह सकना। लाभ—अंडे भोजन, पंख बिकते हैं, अंडों के छिलके से प्याले, अरबवालों की सवारी। उपसंहार—इसका पकड़ना कठिन, श्रान्त होने पर पकड़ा जाता है।

बाज

भूमिका—नभचर, शिकारी। आकार-गठन—चील जैसा बड़ा, तीखी चोञ्च, दृढ़ पक्ष, टेढ़े और तेज पंजे, रंग चील जैसा। स्वभाव, भोजन—तेज उड़ाकू, ऊपर से एक दम नीचे आना, शिकार को पञ्जों से पकड़ना, भोजन—पक्षि-मांस, सहे, चूहे, कबूतर आदि। उपसंहार—लोग इसे पालते हैं। शिकार में बड़ा सहायक।

मोर

भूमिका—अंडज, अतिसुन्दर, निवास—भारत और जावा। आकार-गठन—बड़ा आकार, लम्बी पंखो की तरह पूंछ, पतली गरदन, सिर पर भद्दे पंजे। वर्ण श्वेत और चित्रित। स्वभाव, भोजन—अण्डों में पहाड़ों में रहना, वर्षा में नाचना, पंखों को पसार लेना, कर्कश शब्द, भोजन—कीड़े, मकौड़े, अन्न। लाभ—पंखों से पंखे, चमर बनना। उपसंहार—सरस्वती का वाहन।

हिरण

श्रेणी, प्राप्ति स्थान—स्तनपायी, चतुष्पद, सर्वत्र जङ्गलों में। भेद—अनेक (बारहसिंहा, मृग आदि)। आकार-गठन—सुन्दर लम्बे सींग, बड़ी चञ्चल और मत्त आंखें, टांगे पतली, रङ्ग भूरा, पीला। भोजन, स्वभाव—घास, तृण, भीरु, शान्त। उपयोगी—चर्म, सींग से बटन, छुरी का दस्ता।

बाघ

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—स्तनपायी, चतुष्पद, मांसाहारी, एशिया, अफ्रीका के बनों में। आकार-गठन—सिंह जैसा बड़ा, बिल्ली की शकल, रङ्ग पीला, ऊपर काली धारियाँ। भोजन, स्वभाव—मांस, पशु। स्वभाव—सिंह समान पर अधिक हिंस्रक। उपकारी—चर्म, नख, दांत का प्रयोग। अपकार—हिंस्रक,

बन्दर

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—मनुष्य जाति से मिलता जुलता, भारत, ब्रह्मा, अमेरिका आदि ग्रीष्म प्रधान देश, जङ्गलों में। भेद—अनेक, बन्दर, लंगूर, गरीला, बनमानुष आदि। आकार-गठन—कुरूप, ऊँचा माथा, गोल आंख, चार पैर, अगले पैर हाथों जैसे। फुर्तीला, रंग-भूरा। भोजन, स्वभाव—अन्न, फल, मूल, फुर्तीला, वृक्षों पर कूदना। अपकारी—खेती, वृक्ष आदि का नाशक, कटईया। उपसंहार—सर्कस में खेल, हनूमान हिन्दुओं का पूज्य।

भालू

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—स्तनपायी, चतुष्पद, मांसाहारी, हिन्दुस्थान, बोर्निया, हिमालय, निर्जन बन। आकार-गठन—कुरूप, छोटी पूंछ, शरीर भद्दा मोटा, तीक्ष्ण नख, रोम, रंग-भूरा, काला, उजला। भोजन स्वभाव—मांस, फल, मूल, हिंस्रक, तीक्ष्ण श्रवण-शक्ति, आग से डरना, वृक्ष पर चढ़ना, पानी में तैरना। उपकार—चर्म, नख, दांत, चर्बी का प्रयोग। अपकार—हिंस्रक।

गैंडा

श्रेणी, प्राप्ति स्थान—स्तनपायी, चतुष्पद, चीन, श्याम, जावा, सुमात्रा, अफरीका। आकार-गठन—भैंस जैसा, नाक पर लम्बी सींग, खुर में तीन फर, पूंछ छोटी, मजबूत चर्म। भोजन, स्वभाव—घास, पात, कीचड़ में रहना, शान्त, आलसी, बलवान्। उपकार—ढाल, सींग के प्याले।

भैंस

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—चतुष्पद श्रेणी, स्तनपायी, सर्वत्र। आकार, गठन—काला व भूरा रंग, गाय से बहुत बड़ी। भोजन, स्वभाव—तृण, प्रायः सुशील स्वभाव, दूध देती है, पालतू,। उपयोगी—दूध, घी, मिठाई, चमड़ा, हड्डियां आदि।

बिल्ली

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—देखो शेर। आकार, गठन—वर्ण-काला, चिट्टा, पीला, चित्रित, शेर की आकृति, छोटा। आकार—तेज दांत, लम्बी छलांग, तीक्ष्ण घ्राण। भोजन, स्वभाव—बच्चों से प्रेम, अपकार का बदला। मांसाहारी। विशेष विवरण—बड़ी चतुर, चूहे और बिल्ली का वैर।

बकरी

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—चतुष्पद, स्तनपायी, सर्वत्र। आकार, गठन—आकार—कुत्ते से लेकर गधे जितना। वर्ण-अनेक, सुशील, शृङ्ग तीक्ष्ण, फटे खुर। उपयोगी—दूध, मांस, चमड़ा, बालों से दुशाले, ऊनी कपड़े।

बैल

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—आकार, गठन, भोजन, स्वभाव—देखो गाय। उपयोगी—हल चलाना, बोझ उठाना, चमड़ा, हड्डियां। उपसंहार—शिव का वाहन।

घोंघा

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—जलचर, रेंगना, स्थान-जल। आकार, स्वभाव—छोटा बड़ा, पीठ पर कड़ी खोपड़ी, चार सींग, दो सींगों पर आंख, अण्डज, शीत में न रह सकना। वर्ण-मटियाला, चाल-धीमी। भोजन—घास, फल, उपयोगी—शंख।

मीन

मत्स्य श्रेणी, प्राप्तिस्थान—मछली नहीं किन्तु उनमें गणना, बरफ के समुद्र में। आकार, स्वभाव—पिछला भाग मछली का, शरीर पर रोम, आंख उज्ज्वल, आकार बड़ा, श्वास लेती है, बर्फ के नीचे रहती है, घंटों तक चट्टानों पर पड़ी रहती है। उपयोगी—मांस खाने के लिए चर्बी से तेल और हड्डी से बटन।

जोंक

श्रेणी प्राप्तिस्थान—रेंगना, जलचर। आकार स्वभाव—दो अढ़ाई इञ्च लम्बी, बहुत पतली, शरीर का गंदा रुधिर पाकर मोटी, छोटा मुंह। उपयोगी—शरीर से शनैः शनैः गन्दा रुधिर निकलना।

कनगोजर

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—श्रेणी-सांप की, पुराने मकानों में, गन्दे स्थानों में। आकार, स्वभाव—चार से छः इञ्च, मुख लाल, बीसों पांव, विषैली, बड़ी शीघ्रगामी। मांस में पाँव धँसा लेती है। अपकारी—काटने वाली।

छिपकली

श्रेणी, प्राप्तिस्थान—रेंगना, सर्प श्रेणी, जंगल, झाड़ी, घर की छत। आकार, स्वभाव—६-७ इंच लम्बी, पूंछ, रंग भूरा, चिकना पेट, चार पैर, दीवार, छत में दौड़ना, बिल में रहना, अंडे, मक्खी, कीड़े, खाना। उपसंहार—अस्पृश्य, दुश्शकुन।

मकड़ा

परिचय—ताना तनने वाला कीड़ा, दीवार, छत, गन्दे मकानों में। आकार, गठन—आठ पैर, माथे पर आंखें। स्वभाव—चतुर, मक्खी का शिकार,। जाल—पीछे के छेद से तांत निकालना, उसका सुन्दर जाल बनाना, उसमें मक्खियों को फँसाना। उपसंहार—कर्मण्य होने की शिक्षा।

दिल्ली

भूमिका—भारत की राजधानी, यमुना के तट पर, ऐतिहासिक नगर, बहुत सी रेलों का जङ्कशन पुराना इतिहास—पाण्डवों की राजधानी इन्द्रप्रस्थ, मुगलों की राजधानी, अंग्रेजों की राजधानी। जल वायु—अच्छा, न बहुत गरम न सरद। जनसंख्या—लगभग तीन लाख। पुरानी इमारतें—कुतुब की लाट, जामा-मस्जिद, किला, पुरानी दिल्ली में सैकड़ों इमारतें। द्रष्टव्य स्थान—चांदनी चौक, विक्टोरिया बाग, वायसराय का भवन, कौंसिल-भवन इत्यादि। उपसंहार—अनेक राष्ट्रों का उत्थान और पतन, सम्राट् जार्ज ने इसे भारत की राजधानी बनाया।

पटना

भूमिका—विहार प्रान्त की राजधानी, गंगा के दाहिने किनारे, गंगा और शोण का संगम कुछ दूर। पुराना इतिहास—मगधराज की राजधानी, चन्द्रगुप्तराज्य (पाटलिपुत्र), शेरशाह का किला, पटना बंगाल का मिलना, फिर १९१२ में बिहार की राजधानी। पुरानी इमारतें—मस्जिदें, सिक्खों का मन्दिर, गोलघर, खुदाबख्श की लायब्रेरी। जल, वायु—कुओं का खारा जल, गलियां तंग, सदा हैज़े प्लेग का प्रकोप। उपसंहार—प्रान्तीय व्यापार का केन्द्र, कई स्कूल कालिज।

कलकत्ता

भूमिका—भारत की पहले राजधानी, अब बंगाल की राजधानी,

गङ्गा के किनारे, पुराना नाम कालीघाट। इतिहास—२०० वर्ष पहले छोटा गांव, अङ्गरेज़ों का इसे बसाना। जनसंख्या—१२ लाख के लगभग, भिन्न २ जातियों के लोग, बंगालियों की अधिकता। जलवायु—न गरम न सरद। द्रष्टव्य स्थान—अन्धकूप, कल, कारखाने, हाईकोर्ट, विश्वविद्यालय भवन, अनेक विद्यालय, चिड़ियाघर, जादूघर, टकसाल। व्यापार—देशी विदेशी वस्तुओं का व्यापार। उपसंहार—विद्या का केन्द्र, पश्चिम जाने का जल मार्ग, अनेक देशभक्तों का जन्म दाता।

काश्मीर

भूमिका—दक्षिण में जम्बू, पूर्व में लदाख, उत्तर में बिलोचिस्तान, डोग्रे राजपूतों का शासन। इतिहास—प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में इसका ज़िकर, १८१९ में अफगानों से रणजीतसिह के हाथ, अङ्गरेजों के साथ एक प्रतिज्ञापत्र। प्राकृतिक दृश्य—पर्वत, सुन्दर सरोवर, सिन्धु, और झेल्हम की उत्पत्ति, बूलर, मानसरोवर झील। जलवायु—स्वास्थ्यप्रद। जनसंख्या—लम्बाई चौड़ाई के लिहाज़ से बहुत कम, मुसलमानों की अधिकता, काश्मीरी ब्राह्मण। द्रष्टव्यस्थान—श्रीनगर, अच्छाबल, मटन, वेरी नाग, बूलर झील। मार्ग—जम्बू और रावलपिंडी से, कई एक और पुराने शाही मार्ग, दोनों तरफ मोटर, टांगों की सड़क। उपसंहार—संसार भर में रमणीय देश, सुंदरता, व्यापार, कारीगरी।

ज्वालामुखी

भूमिका—एक नोकदार पहाड़ जिसकी चोटी पर छिद्र में से भूमि के अन्दर की भाफ, राख निकलती हो। अन्दर से गर्म राख निकल निकल कर ऐसी नोकदार पहाड़ी बन जाती है। कारण—जब भूगर्भ का पानी आग से भाफ बन कर बाहर निक-

लना चाहता है तो उसके वेग से भूमि फट जाती है। अतः ज्वाला-मुखी प्राय: समुद्र के पास। परिणाम—सभी आस पास की भूमि ऊजड़ हो जाती है, भूचाल। उदाहरण—वैसूवियस, कांगड़े का भूचाल। जापान का सर्वनाशी भूचाल। उपसंहार—शहरों के शहर जलनिमग्न, इटली और जापान का इतिहास उदाहरण।

जेल्हम (वितस्ता नदी)

भूमिका—पंजाब की प्रसिद्ध नदी, एक छोटा तीर्थ। प्रभव और प्रसार—हिमालय में बेरीनाग नाम सर से प्रभव और सक्खर के पास अन्य नदियों से मिलकर समुद्र में पात। श्रीनगर के पास इसकी बनावटी चाल। उपकार—काश्मीर से मकानों की लकड़ी का व्यापार, नहरें, श्रीनगर की बिजुली की रोशनी।

दर्बार साहिब

अमृतसर में सुवर्ण मन्दिर। सिक्खों का तीर्थ। गुरुरामदास का बनाया। रणजीतसिंह ने सोने के पत्ते लगवाये। हरमन्दिर के चारों तरफ का तालाब। दिवाली का मेला। आजकल अकालियों के अधीन। इसकी सफाई।

लाहौर का दुर्ग

लाहौर का दुर्ग बादशाही मसजिद के सामने। बहुत पुराना, पक्का। दो दरवाजे, केसरी दरवाज़ा बन्द। रणजीतसिंह के अधीन। अन्दर सिक्खों के हथियार, तोपें, आजकल कुछ गोरों की फौज।

लवण (नमक)

भूमिका—एक रस, भोजन सामग्री के लिये आवश्यक। सब को आदरणीय, वर्ण-उजला व काला। प्रकार—अम्बुज और खानिज, अम्बुज, समुद्र—झील आदि से प्राप्य, खानिज—खानों से प्राप्य, पौलेण्ड की खान बहुत बड़ी। उपकार—भोजन का

स्वाद, रक्तवर्धक, पाचक, नमक में रखने से वस्तुऐं बहुत देर तक भी नहीं बिगड़तीं । उपसंहार—नमक पर भारत सरकार का अधिकार ।

चांदी

भूमिका—खानिज धातु । इस की अग्निद्वारा शुद्धि । वर्ण आकार—उजली ठोस । प्राप्तिस्थान—खानें । गुण—खिचने वाली, गल कर नरम, अपारदर्शी । उपकार—भूषण, सिक्के, रुपया आदि, पात्र, औषध । उपसंहार—पवित्रता, चांदी की मूर्तियां, पूजा के पात्र, इसका व्यापार ।

हीरा

भूमिका—बहु मूल्य मणिविशेष । प्राप्तिस्थान—खान, संबलपुर और चन्द्रपुर में, बालू में, पदार्थविद्याद्वारा कोयले से संभव । प्रकार—अनेक भेद, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र-गुणविशेष से, निर्मल हीरा दुर्लभ । उपकार—भूषणों में जड़ना, कांच काटना। उपसंहार—कोहेनूर भारत से मुसलमानों के कब्ज़े में, फिर अङ्गरेज़ों के पास, अब सम्राट् के मुकुट में ।

तड़ित्, विद्युत्

भूमिका—अन्तरिक्ष में तड़ित् एक सूक्ष्म पदार्थ, उसका ज्योति रूप में आविर्भाव विद्युत् । प्रकाश का तरीका—कांच, रेशम, गन्धक आदि के घिसने से । गुण—आकर्षण और विकर्षण, संचालन। उपकार—रोशनी, तारयन्त्र, टेलीफोन, बेतार की तार आदि अनेक । उपसंहार—इसकी विचित्र लीला, बैटरी से बनना ।

उल्कापात

भूमिका—रात्रि में आकाश पर तारों का टूटना, पृथिवी पर इनके टुकड़ों का पत्थरों के रूप में गिरना । परीक्षा—उनमें लोहा, तांबा, कोयला आदि विद्यमान, रंग सफेद, पीला । कलकत्ता के

अजायबघर में इसका एक टुकड़ा । उपसंहार—सभी उल्काएँ पृथ्वी पर नहीं गिरतीं, नहीं तो बहुत हानि हो, पहुँचने से पहले वायु की रगड़ से भाप हो जाती है !

होली

भूमिका—हिन्दुओं का उत्सव, फागुन के मास में । इतिहास—कृष्ण का होलिका नाम राक्षसी का दहन । उत्सववर्णन—फागुन की कृष्ण अष्टमी से अमावस तक, रंग, गुलाल से खेलना, लोगों का आनन्द, कई स्थानों में मिट्टी, कूड़ा उड़ाना, उपहास, स्वांग बनना, अमावस को होलिका जलाना । उपकार—आनन्द, खुशी, कुछ दिनों के लिए फिकर चिन्ता हटना, वीरस्मरण । अपकार—परस्पर झगड़े, गाली, कूड़ा । उपसंहार—बुराई हटाकर मनाने से अतिलाभ ।

रामनवमी

भूमिका—रामचन्द्र के जन्मदिन का उत्सव । चैत्र शुक्ल नवमी । उत्सववर्णन—सभी जगह राग रंग, आमोद, स्वांग बनना, रामलीला । उपकार—वीरस्मरण । उपसंहार—इसको मनाना प्रत्येक का धर्म ।

वसन्तपञ्चमी

भूमिका—फाल्गुण में वसन्त ऋतु के प्रवेश के उपलक्ष में । उत्सववर्णन—अनेक स्थानों में भिन्न २, लाहौर में हकीकतराय की समाधि पर बड़ा मेला, पतङ्ग उड़ाना, पीले वस्त्र । उपकार—खुशी, आमोद । अपकार—पतंग उड़ाने से हानि ।

कबड्डी

भूमिका—हिन्दुस्थानियों का खेल, ग्रामीण लोगों में प्रचार । लम्बी और जप्फल । सामग्री—खुला मैदान, दोनों ओर के खिलाड़ियों की संख्या नियत नहीं । विधि—मैदान के बीच में

सीमा की लकीर लम्बी। एक तरफ का खिलाड़ी एक ही श्वास में दूसरे तरफ के खिलाड़ियों को छूता है। नियत समय में जिस तरफ के अधिक छुए जाएँ उनकी हार। जफ़्फल में अगर आए खिलाड़ी को पकड़कर न छोड़ें तो वह पराजित। लाभ—स्वास्थ्य, कुछ खर्च नहीं, आधिपत्य में कार्य, एकता। उपसंहार—स्वदेशी खेलों की उन्नति हमारा कर्तव्य।

आंख मिचौनी

हिन्दुस्थान का खेल, अब अंग्रेज़ों में भी प्रचलित। सामग्री—खिलाड़ी छिपने का स्थान। विधि—एक खिलाड़ी अपनी आंख बंद कर लेता है दूसरे छिप जाते हैं, उन में से वह किसी को पकड़ता है, जो पकड़ा जाय फिर उसे आंख बंद करनी पड़ती है। लाभ—शहरों के लिये जहां खुले मैदान नहीं मिलते उपयोगी। दौड़ने कूदने से स्वास्थ्य। उपसंहार—अब लुप्तप्राय हो रहीहै।

हाकी

अंग्रेज़ी खेल, भारत के स्कूल कालिजों में इसका प्रचार, फौजों का खेल। सामग्री—खुला मैदान, लम्बाई चौड़ाई नियत। प्रत्येक पक्ष के ग्यारह खिलाड़ी, हरएक के पास एक हाकी, एक गेंद, दो पोल। विधि—खेल बीच में शुरू होता है, खिलाड़ियों के स्थान नियत, प्रत्येक पक्ष हाकी से गेंद हांक कर दूसरों के पोल में से निकालना चाहता है। गेंद निकाल देनेपर विजय। लाभ—स्वास्थ्य, फुर्तीलापन, एका, नियम में काम करने का अभ्यास, एक के अधिकार में रहने की शिक्षा। उपसंहार—इस से लड़ाई दंगे की संभावना।

पीपल

भूमिका—एक विशाल वृक्ष, चौड़े गोल नोकदार पत्ते, बड़ा तना। उत्पत्ति—बहुत छोटे बीज से वृद्धि, कूप, मन्दिर में जहाँ बीज गिरे वहीं उग आता है। आयु—लम्बी, सैकड़ों सालों के पुराने

वृक्ष । उपकार—घनी छाया, पक्षिवास, लकड़ी नरम । उपसंहार—हिन्दुओं का पूज्य, काटना पाप ।

गेहूँ का पौधा

भूमिका—अनाज श्रेणी का उद्भिद । प्राप्तिस्थान—भारत, आस्ट्रेलिया आदि तर शीत देश, पंजाब, पश्चिमोत्तर प्रान्त, संयुक्त प्रान्त । आकार प्रकार—छः सात फुट, पौधे में पहले यव, छिलका उतार कर गेहूँ, कई प्रकार । लाभ—वर्षा न होने व शलभा आदि से इसे हानि । न होने से दुर्भिक्ष ।

कपास का पौधा

भूमिका—उद्भिद श्रेणी का एक पौधा । प्राप्तिस्थान—प्रायः सर्वत्र, विशेषतः भारत (पंजाब, बिहार) अमरीका, चीन । आकार प्रकार—कई ऊँचे, कई झाड़, कई छोटे, कितने की प्रतिवर्ष काश्त, कई सदाबहार, पत्तों के आकार भिन्न भिन्न, फूल-लाल, पीले, सफेद अनेक वर्ण, रुई के वर्ण अनेक प्रायः सफेद, अमरीका की रुई प्रसिद्ध । उपकार—रुई के वस्त्र, बिनौलों से तेल व पशुओं का भोजन । व्यापार से करोड़ों की आजीविका ।

विवरणात्मक

फ्रांस का विप्लव

भूमिका—फ्रांस में शासन, सामाजिक स्थिति का अचानक परिवर्तन । संसार भर में सब से बड़ा । नायक, स्थान, समय—शासक, धनाढ्य एक ओर और प्रजाजन दूसरी ओर । स्थान—समस्त फ्रांस, समय—सन् १७७९ से १७९३ तक । कारण—राज्य तन्त्र का सभी कार्य प्रजा की मर्जी से न होना, धनाढ्यों का निर्धनों पर अत्याचार, 'लुई' बादशाहों का अनुचित और दुःख प्रद शासन, अमरीका से वापस आई फौज का विप्लव के तरीके से परिचय । परिणाम—शासन प्रजा के हाथों में, पुरानी बुराइयां

हट गई, लुई चौदहवें को फांसी। हानि—सैनिकों की प्रधानता, फ्रांस की अस्थिर अवस्था।

जलियां वाले बाग़ की हत्या

भूमिका—अमृतसर में जलियां वाले बाग में एक जलसे में गोली चलाकर निरस्त्र सैकड़ों मनुष्यों की हत्या। नायक और समय—जनरल डायर के आधिपत्य में कुछ फौजी सिपाहियों का व्याख्यान सुनते हुए लोगों पर गोली की वर्षा, १९१९ का अप्रेल मास, वैशाख संक्रान्ति। कारण—अमृतसर में लोगों की हल चल से डा० किचलू और सत्यपाल का पकड़े जाना, मार्शलला पर लोगों का शोक प्रगट करने की सभा। नियमविरुद्ध सभा समझ कर ओडायर साहिब की सम्मति से डायर का गोली चलाना। परिणाम—लगभग चार सौ की मृत्यु, ५०० घायल, लोगों पर अत्याचार, भारत में अशान्ति, महात्मा गान्धी का असहयोग, सरकारी कमीशन इत्यादि। उपकार—भारत में जागृति। अन्य लोगों की सहानुभूति।

चन्द्रगुप्त

भूमिका—मौर्य वंश का प्रथम राजा। नन्द की दासी मुरा का पुत्र। राज्यकाल—मसीह के ३२८ पहले से २९२ वर्ष पहले तक। जीवन वर्णन—नन्द को छोड़ सिकन्दर की सेना में भरती, सिकन्दर के मरने पर पंजाब पर स्वत्व, सेल्यूकस से लड़ाई, उसका पराजय, पाटलीपुत्र (पटना) राजधानी। शासन प्रणाली—विशाल राज्य सेना के भिन्न भाग, ६ पंचायतों के अधीन राज्य के सूबे। उपसंहार—साधारण दशा से उन्नत होने का आदर्श।

श्रीहर्ष

भूमिका—संस्कृत के एक प्रसिद्ध कवि। जन्म समय, वास स्थान, कुल परिचय—बारहवीं शताब्दी, कान्यकुब्ज, इनका पिता

पं० श्रीहरि कन्नौज के राजा जयचन्द के दर्बार में नौकर, माता मामल्ल देवी। आख्यायिका—(१) श्रीहरि का किसी पंडित से परास्त होना. मरते समय श्रीहरि को बदला लेने की आज्ञा। विद्याध्ययन के बाद उस पंडित को पराजित करना। (२) नैषधीय चरित का काश्मीर में स्वीकार कराने को जाना, वहां के पंडितों से इसे राज दरबार में न पहुँचने देना। एक दिन एक कूप पर दो स्त्रियों का विवाद। श्रीहर्ष का भी वहीं होना। राजदरबार में उनकी साक्षी। काश्मीरी भाषा न जानते भी उनके विवाद को अक्षरशः वर्णन कर देना। उनकी स्मृतिशक्ति पर विस्मय। राजा के आगे सब भेद खुलना। उनका पुरस्कार। ग्रन्थ—नैषधीयचरित, खण्डन खण्ड खाद्य, नवसाहसाङ्कचरित, श्रीविजयप्रशस्ति आदि। रचना—कठिन, पांडित्यपूर्ण, अतिशयोक्ति अलंकार।

शिवाजी

महाराष्ट्र का बड़ा वीर भूपति। जन्म १६८४ में पूने के पास, लड़कपन में अस्त्र शस्त्र शिक्षा, शिकार का शौक, धीरे धीरे कुछ देश वश में कर लिया। रायगढ़ का किला बनाया। औरंगजेब से मिल कर लड़ाई। विजय। सुलह के बहाने दिल्ली ले जाकर शिवा जी को कैद करने का प्रबन्ध। शिवाजी साफ निकल गये। शाहजी ने सिंहासन ग्रहण किया। इनके द्वारा मराठों का बल। इनके गुरु समर्थ गुरु रामदास। ५६ वर्ष की अवस्था में मृत्यु।

पृथ्वीराज

भूमिका—सोमेश्वर का पुत्र, विशालदेव का पोता। जीवन सन् ११५१ में, दिल्ली विजय, दिल्ली और अजमेर शासन, जयचन्द से विरोध, उसकी कन्या से स्वयम्बर, जयचन्द का पराजय, मुहम्मगोरी से कई बार युद्ध और विजय। अन्त में उससे पकड़े जाना, पृथ्वीराज का बध। उपसंहार—शूर, उदार, उसके कई स्मारक चिन्ह दिल्ली में।

क्लाइव

अंगरेजी राज्य का संस्थापक। १७२२ में जन्म। जीवन—१७४३ में, कम्पनी का क्लर्क होकर भारत में आया, निराश होकर दो बार आत्मघात को उद्यत, दोनों बार असफल, २१ वर्ष की आयु में नौकरी, आरकोट के दुर्ग में शूरता, पार्लियामेंट का सदस्य, प्लासी के युद्ध में कलकत्ता की विजय, बिहार के नवाब से दिवानी शासन लेना, शासन में कई सुधार, १७६० मे विलायत जाना। उपसहार—आत्मसाहाय्य का उदाहरण।

अलैगज़ैण्डर

ईसा से कोई ३२५ साल पहले अलैगज़ेण्डर का काबुल से होते हुए भारत पर आक्रमण। तक्षशिला के राजा से सन्धि। पोरस का विजय। जेहलम तक पहुँचना। जहाजों द्वारा वापस जाना। तीन साल बाद बेबीलोन में मृत्यु। पंजाब के राज्य के लिए पोरस को नियत करना। चन्द्रगुप्त का राज्य।

कालिदास

भूमिका—भारत के प्रसिद्ध कवि, जन्म तिथि तथा जन्मभूमि अनिश्चित, ४०० ईस्वी के लगभग का अनुमान। जीवन—विवाह के पूर्व मूर्ख किन्तु विद्वान समझ कर विवाह, स्त्री से तिरस्कृत, गृह-त्याग, महाकवि बनना। ग्रन्थ—रघुवंश, मेघदूत, कुमारसंभव, शकुन्तला, विक्रमोर्वशीय, मालविकाग्निमित्र, ऋतुसंहार। कविता—ललित, संसार में अद्वितीय, उत्प्रेक्षा, उपमा का प्रौढ़ प्रयोग, हृदय-हारिणी। उपसंहार—इनके कारण भारत का गौरव।

सूरदास

भूमिका—हिन्दी के अद्वितीय कवि, जन्म दिल्ली के पास सीही ग्राम में, पिता का नाम रामदास। जन्म १४८३ सन् में। जीवन—बल्लभाचार्य के शिष्य, कृष्णभक्त। कविता—रसपूर्ण,

ललित, मनोहर, कृष्णभक्ति से पूर्ण। मुख्य ग्रन्थ-सूरसागर। उपसंहार—१४६३ के लगभग मृत्यु।

कबीर

भूमिका—एक महात्मा और हिन्दी के प्रसिद्ध कवि, जन्म १४१८ के लगभग। जीवन—कबीरपन्थ के प्रवर्तक, जाती जुलाहा (वस्त्रकार), सच्ची सच्ची सुना देते थे। प्रसिद्ध ग्रन्थ कबीर की साखी। कविता—गंवारी और परिष्कृत भाषा में। उपसंहार—अभी तक उनका आदर।

मिल्टन

जन्म—९ दिसम्बर १७०४, इनके पिता प्रसिद्ध गायक। बालकपन में तीव्र बुद्धि। १० वर्ष की अवस्था में ही पद्य लिखना। कैम्ब्रिज में विद्याभ्यास। उसकी रोमयात्रा। उसने तीन बार विवाह किया, पैरेडाइज़ लास्ट लिखना। फिर पैरेडाइज़ रीगेन्ड लिखना। उनका आदर। ६७ वें वर्ष, नवम्बर ८ सन् १६७४ को मृत्यु। मिलटन और सेक्सपियर की तुलना।

मैथिलीशरण गुप्त

हिन्दी के एक प्रसिद्ध वर्तमान कवि, १८९६ में जन्म। कविता—खड़ी बोली में, बड़ी ओजस्विनी, भावपूर्ण, रसपूर्ण, सामाजिक और राजनैतिक सुधारों पर, प्रसिद्ध कवितासंग्रहग्रन्थ भारतभारती। उपसंहार—अनेक समाचारपत्रों में लेख-प्रकाश, ईश्वर चिरायु रक्खें।

लो० तिलक

महाराष्ट्र के प्रसिद्ध नेता। भारत में अद्वितीय व्यक्ति। जन्म १८५६ में। वकालत पास कर शिक्षक, मरहट्टा और केसरी के संचालक। कई बार कारावास। गरम दल के अगुआ। कांग्रेस में इनका बड़ा ज़ोर। पांच साल की कैद में गीतारहस्य लिखा। वेदों

के अपूर्व विद्वान्, चिरोल के साथ मुकद्दमा, मृत्यु ३१ जुलाई १९२० में। उपसंहार—स्वतन्त्रता का अवतार, भारत का सुपुत्र।

म० गांधी

भारत के भूमण्डलविख्यात नेता, १८६९ में जन्म। बैरिस्टर बनकर साउथ अफ्रीका में जाना। वहां पर भारतीयों की दुर्दशा देख कर उनकी सहायता। आन्दोलन, असहयोग। कारागृह। सफलता। भारत आगमन। भारत की दुर्दशा के सुधार का विचार, कांग्रेस में शामिल हुये। पंजाब के मार्शल ला के समय में सहायता। भारतीय शासन से असहयोग। खद्दर, चरखे का प्रचार, खिलाफत का काम। छः साल का कारावास। काँग्रेस की स्वीकृति से नमक के नियमों को भंग करने का आग्रह। उपसंहार—जो करते वा करने का उपदेश करते उसी का अनुष्ठान करते। स्वराज्य के सूत्रधार, हिन्दू, मुसलमान एकता के मूल।

मि० रानाडे

भारत के सच्चे नेता। १८४२ सन् में नासिक ज़िले में जन्म, एम. ए., एल. एल. बी., होने के बाद एलफिन्स्टन कालेज में प्रोफ़ेसर। सामाजिक कुरीतियों के हटाने की लगन, इन्डियन नेशनल कांग्रेस के संस्थापक। यूनीवर्सिटी के फेलो, अर्थ समिति में काम। सी. आई. ई. की पदवी, बम्बई कौन्सिल के सभासद। हाईकोर्ट के जज, मा० गोखले के राजनैतिक गुरु। १९०१ में मृत्यु।

धन कुवेर ताता

भूमिका—एक पारसी सज्जन, जन्म १८१९, मृत्यु १९०४ में, पिता साधारण व्यापारी। जीवन—शिक्षा—१३ वर्ष की उमर में पठनारम्भ। १८५९ में चीन में कम्पनी खोली, पुनः जापान,

फ्रांन्स, अमेरिका में शाखाएँ, बहुत लाभ। बम्बई में 'अलेग्-जेण्डर' मिल, लोहे का कारखाना खोलने का विचार। किन्तु उनके जीवन में पूरा न हो सका किन्तु उनके पुत्र ने यह खोल दिया। उनके नाम पर 'जमशेदपुर'। दान—हिन्दुस्थानी बालकों की विलायत में शिक्षा के लिए ५ लाख, पुनः रिसर्च यूनिवर्सिटी के लिए ३० लाख। उपसंहार—बड़े व्यवसायी, लोगों के आदर्श।

सर सय्यद अहमद

भूमिका—मुसलमानों के प्रसिद्ध नेता, जन्म १८१७ और मृत्यु १८८८ में। निवासस्थान दिल्ली, पूर्वज सम्राटों के समय आदरणीय। जीवन—माता से शिक्षा सहायता, शरीस्तेदारी की नौकरी, मुनसिफ बने, पुनः संयुक्त प्रान्त में सहायक जज, सिपाही विद्रोह के समय सरकार की सहायता, कौन्सिल के सभासद, सर, के० सी० एस० आई० की पदवियां। देशसेवा—अलीगढ़ कालिज संस्थापन, अंगरेजी की अनेकों पुस्तकें रचीं। उपसंहार—अपनी जाति के सच्चे भक्त, मुसलमानों के बड़े नेता।

दमयन्ती

भूमिका—पुराने समय की बड़ी उच्चादर्श की प्रतिव्रता रमणी, पिता विदर्भदेश के राजा भीम। जीवन—एक हंस से निषध देश से राजा नल के गुण सुनकर उस पर अनुराग। स्वयम्वर, इन्द्र आदि देवताओं की उसे वरने की इच्छा, उन्हें अस्वीकार, नल का पुष्कर के हाथ सर्वस्व हार देना, बनवास, बन में विपत्तियां, नल का उसे त्याग, पितृगृहप्राप्ति, नल का वेष बदलना, ऋतुपर्ण का सारथि बना, नल का परिचय। उपसंहार—पुनः द्यूतक्रीड़ा में राज्य लौटाना, सुखभोग। पातिव्रात्य में कमाल।

सीता

भूमिका—हिन्दुओं में अतिविख्यात देवी, पिता बिदेहराज जनक, भूमि से उत्पत्ति की कथा। जीवन—स्वयम्वर, राम के साथ

विवाह, रामबनवास, सीता का सहगमन, रावण से हरण। लंका-वास, राम से रावणपराजय, सीता का लौटाना, राज्यप्राप्ति, कुछ काल बाद बाल्मीकि के आश्रम में त्याग, लवकुश की उत्पत्ति, रामाश्वमेध यज्ञ, सीता का यज्ञ में आना, पृथिवी में समा जाना। उपसंहार—आदर्श रमणी, पातिव्रत्य, धीरता।

स्नेहलता

भूमिका—एक वङ्गीय आदर्श कुमारी। पिता—हरेन्द्रकुमार मुकर्जी, निवासस्थान कलकत्ता। जीवन—सुशिक्षित, पिता को इसे उच्च धनाढ्य कुल में विवाहने का विचार। किन्तु आर्थिक दशा बाधक, तिलक, दहेज के लिए रुपया एकत्र करने को माता पिता का गृह बन्धन करने का विचार। स्नेहलता को उन्हें समझाना। अन्त में उनके न समझने से कपड़ों में तेल डाल कर जल मरना! उपसंहार—दहेज प्रथा कारण, इसको हटाना कर्तव्य।

एक गृह में चोरी

स्थान, समय—लाहौर, बाज़ार अनारकली, एक कपड़े की दुकान, समय रात के दो बजे। कारण—चोरों का दुकान के मालिक को रुपये, नोट गिनते देखना। विवरण—९ बजे रात के दुकान बन्द होना, पीछे की दीवार को तोड़ना, रुपये न मिलना। (उन्हें पहले ही बैंक में भेज देना) दुकान में आग लगना। पुलिस के सिपाही की वहाँ चौकी। फल—४०, ५० हज़ार की हानि। उपसंहार—पुलिस की असावधानता, इसका प्रबन्ध।

विक्टोरिया की १८८७ की जुबली

भूमिका—जुबली हिन्दू जाति की पुरानी प्रथा, फिर ईसाइयों में प्रचलित। कब, कहां और क्यों हुई—१८८७ की फर्वरी की १६ वीं तारीख, विलायत, भारत और सभी अंग्रेजी राष्ट्र भर में।

महारानी विक्टोरिया के राज्य के ४० वें वर्ष के उपलक्ष्य में। विवरण—बड़े बड़े चन्दे जमा हुए। बड़ा उत्साह, खेल तमाशे, लड़कों को मिठाई, गरीबों को भोजन, कई औषधालय, स्कूल खुलना। उपसंहार—विक्टोरिया का शुभ राज्य।

लाहौर की प्रदर्शिनी

भूमिका—प्रदर्शिनी देश के कला-कौशल बढ़ाने का मुख्य साधन। श्रीयुत पी० सी० राय द्वारा उद्घाटन, सरकार का सहायता से इनकार, लाहौर में भारतीय कांग्रेस के अधिवेशन के साथ। विवरण—रावी के तट पर चौड़ा मैदान, वस्तुओं के लिए पृथक पृथक विभाग। देशी कारीगरी की अनेक वस्तुएँ। खद्दर विभाग की प्रधानता—बनारसी कपड़ा इत्यादि। लोगों का उत्साह, स्वदेशी माल देखने का अवसर।

एक आंधी

भूमिका—प्रबल वायु से गरद उड़ना, लाहौर में १९१८, श्रावण की १७ तारीख, संध्या समय। वर्णन—अचानक पश्चिम की ओर काली घटा, थोड़ी देर में आकाश में काली रात्रि सी शोभा। बड़े बड़े वृक्ष टूटना, सभी फल पेड़ों से गिर जाना। अनारकली में आग लगना, थोड़ी देर के बाद वर्षा, गरद बैठ जाना। उपसंहार—कई प्रकार की हानियाँ, किन्तु लाभ भी—गंदी वायु की शुद्धि।

१८९६ का भूकम्प

भूमिका—भूकम्प पृथ्वी का हिलना। समय—मुहर्रम के दिन ३ बजे दिन के। कई मिनटों तक। वर्णन—मकानों का काम्पना। लोगों में हलचल, गृह छोड़ भागना। हानि—पृथ्वी फटना, मकानों में दब कर कई लोगों की मृत्यु। उपसंहार—ऐसा भूकम्प फिर कभी नहीं हुआ।

अमृतसर की कांग्रेस

भूमिका—भारत जनता की राजनैतिक सभा। प्रतिवर्ष बड़े दिनों में इसकी बैठक—१९१९ में अमृतसर में। विवरण—बड़ा अहाता, बड़े बड़े नेताओं के नाम पर दरवाजे। महान् मण्डप। तीस हजार की भीड़, ७००० प्रान्तों के प्रतिनिधि, चार दिन तक कार्रवाई। सभापति का स्वागत, शहर की सजावट, नेताओं का स्वागत। अनेक प्रस्तावों का पास होना। उपसंहार—इससे जागृति। मार्शल ला के अत्याचारों से दबे हुए लोगों का पुनरुत्थान।

एक दुर्भिक्ष

भूमिका—भोजन के पदार्थों का अभाव के कारण बहुमूल्य होना। १९२१ में—सभी प्रान्तों में। वर्णन—आटे का तीन सेर बिकना, लोगों का भूखे मरना। बिहार में हज़ारों की मृत्यु। कई बच्चों का अन्य जातियों के पास जाना। उपसंहार—आर्यसमाज का काम।

एक जहाज़ का डूबना

भूमिका—यूरोपीय महायुद्ध में एक अंग्रेजी व्यापारी जहाज़ का एक जर्मनी जङ्गी जहाज से सामना, हजारों यात्री। जर्मनों के गोलों से जहाज टूटना। विवरण—शनैः शनैः जहाज का पानी में डूबना। यात्रियों में कोलाहल, छोटी नावों में बेठा बैठा कर पहले बच्चे स्त्रियों को बचाना, जहाज के नायक का साहस और धैर्य, कई मनुष्यों की मृत्यु। उपसंहार—जहाज के कर्मचारियों के आत्मत्याग, साहस और धैर्य से शिक्षा।

म्युनिसिपलिटी

नागरिकों के प्रतिनिधियों की सभा। कुछ सभासद गवर्नमेंट से स्थापित और कुछ नागरिकों से निर्वाचित। शहर के स्वास्थ्य

को ठीक रखना इसका कर्तव्य, इसके लिए अनेक तरह के टैक्स, शहर की सफ़ाई, सड़कें बनवाना, रोशनी आदि के लिए अनेक कर्मचारी। एक सभापति सभासदों से निर्वाचित वा सरकार से से स्थापित, मन्त्री, अलग अलग विभाग के कर्मचारी इसके नीचे।

विधवा विवाह

भूमिका—मृतपति स्त्रियों का पुनर्विवाह। मतभेद—मुसलमान तथा ईसाइयों में स्वीकृति। हिन्दुओं में मतभेद। आवश्यकता—बाल्य विवाह के कारण अल्पवयस्क विधवायें, समाज का उनसे दुर्व्यवहार। उपकार—देशोन्नति, व्यभिचार की कमी, विधवाओं की दुर्दशा का अभाव। अपकार—हिन्दू समाज में पातिव्रत्य में न्यूनता की संभावना। उपसंहार—शास्त्रों में विधान; आर्यसमाज और ब्राह्मसमाज का काम, लोगों में इसका प्रतिरोध कम हो रहा है। सर गंगाराम की लाहौर में विधवा-विवाह-सभा।

अछूत प्रथा

कई जातियों को स्पर्श तक करने में पाप समझना। कब से चली—जब लोगों ने केवल जाति को ही उत्कृष्ट समझ लिया और कर्म की परवाह न की। अपकार—अछूतों से अत्याचार, करोड़ों की संख्या, ईसाई व मुसलमान धर्म का स्वीकार। हटाने से उपकार—देशोन्नति, हिन्दुओं की संख्यावृद्धि, झूठे स्पृश्यास्पृश्य विचार का त्याग। उपसंहार—मद्रास प्रांत में इस कुप्रथा का बड़ा प्रचार। आर्यसमाज का काम, म० गांधी की इधर प्रवृत्ति और उनकी भूख हड़ताल से हिन्दुओं में जागृति। उनके सुधार के लिए एक जातीय सभा का संस्थापन। पूना का समझौता।

स्त्रियों का परदा

भूमिका—स्त्रियों का मनुष्यों से ओझल रहना। कब से प्रचलित—मुसलमानों के राज्य से प्रचलित। प्राचीनकाल में

अभाव। उपकार—कई बुराइयों का अभाव। अपकार—स्त्रियों का कार्यक्षेत्र में धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक कार्य से वञ्चित रहना। सभी अन्य जातियों में इसका अभाव। परदे में कई छिपे हुए दुराचारों की संभावना। उपसंहार—हिन्दुओं में इसका कम होते जाना।

उपनयन संस्कार

भूमिका—सोलह संस्कारों में से एक आवश्यक संस्कार। विद्यारम्भ से पूर्व। विधि—सिर मुड़वाना, ब्रह्मचारियों के वस्त्र। यज्ञ, हवन, छः तन्तुओं का यज्ञोपवीत धारण। गुरु दीक्षा। लाभ—यज्ञोपवीत देख कर सदा ब्रह्मचारी को अपने कर्तव्य का ध्यान रहना। उपसंहार—बड़ा उपयोगी।

विवाहसंस्कार

भूमिका—गृहस्थाश्रम का प्रथम संस्कार। सभी जातियों में प्रचलित, रूप भिन्न भिन्न। विधि—हिंदुओं में अनेक विधियां। सनातनी, आर्य समाजी वा ब्राह्मसामाजिक संस्कार भिन्न भिन्न। वर का वधू-गृह में जनेत बांध कर जाना। वहाँ शास्त्र नियमानुसार वधू का पाणिग्रहण। उपकार—संसार का व्यवहार इस पर आश्रित। उपसंहार—यह बड़ा पवित्र माना गया है।

रक्षाबन्धन

भूमिका—श्रावण की अन्तिम तिथि। इसको श्रावणी भी कहते हैं। पहले यह ब्राह्मणों का त्योहार। विधि—प्राचीन समय में ऋषि यज्ञ करते थे, अपने यजमान, राजा महाराजाओं को बुला कर यज्ञोपवीत पहनाते और दीक्षासूत्र बांधते। अब ब्राह्मण द्वार द्वार पर फिर कर राखी बांधते हैं और लड़कियां अपने भाइयों को रक्षा बांधती हैं। राजपूतों के समय में जब कोई अत्याचारी किसी हिन्दू अबला पर अत्याचार करना चाहता तो वह लड़की

किसी बलवान् राजपूत को राखी भेज देती और वह उसकी रक्षा करता। उपसंहार—दोषों को दूर कर इसे सुधारना चाहिए।

सेविङ्ग्ज़ बंक

प्रत्येक पोस्ट आफिस में एक अलग विभाग। लोगों का रुपया जमा करने के लिए। गरीब आदमियों के लिए रोज की आमदनी से कुछ बचाने की उत्तेजना। जमा हुए रुपये का सूद। हिसाब की पुस्तक।

तार यन्त्र

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में आविष्कार, आविष्कारक इंगलैंड में ह्वीट स्टोन और अमरीका में होर्म साहिब। बिजली की शक्ति से काम करता है। ताम्बे की तार में से बिजली की लहर द्वारा खबर का एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाना। संकेत द्वारा शब्द ज्ञान। एक क्षण में हज़ारों मील तक खबर पहुँचाना। दैनिक-पत्रों में उसी दिन के समाचारों का छपना। इंङ्गलैंड द्वारा भारत का शासन सुसाध्य।

रेशम बनाने की विधि

रेशम विशेष प्रकार के कीड़ों से बनता है। कीड़ों को तूत के पत्तों की खुराक देकर पाला जाता है। कीड़े के ऊपर एक कोष सा बन जाता है। उसे गरम पानी में उबाल कर रेशम की तांते निकाली जाती हैं। चीन, फ्रांस, आसाम में बहुत। रेशमी कपड़े की हिन्दुस्तान में खपत।

कपड़ा बुनने की कल

इस प्रकार की कलें यूरोप में बहुत। मांचेस्टर विशेषतः प्रसिद्ध, हिन्दुस्तान में भी जारी हो गई। बिजली या कोयले की गैस का प्रयोग। मशीन, कल, पुर्जे, कपड़े का ताना बाना, कपड़े पर मांड लगाना। अनेक मजदूरों की आजीविका। हाथ की खड्डियों का मुकाबला।

रेल गाड़ी

रेलगाड़ी स्टीम के इञ्जिन द्वारा चलाई जाती है। स्टीम-इञ्जिन का आविष्कारक जेम्स वाट। रेलगाड़ी के चलने से पूर्व यात्रा का कष्ट। व्यवहार की वृद्धि, चिट्ठी-पत्री का जल्दी पहुँचना। दुर्भिक्ष के समय अन्न आदि पहुँचाना-आदि अनेक लाभ। युरोप की गाड़ियों में सभी सुख। भारत से तीसरे दर्जे के यात्रियों की दुर्दशा, भारत में कई विभागों की रेलगाड़ी सरकार के अधीन और कई कम्पनियों के अधीन।

थर्मा मीटर

मनुष्य के शरीर का ताप मापने का यन्त्र, कांच की छोटी सी नली। बीच में पारा। गर्मी ठीक हो तो ९८$\frac{1}{2}$ तक चढ़ता है। अधिक चढ़ने से ज्यादा बुखार, कम चढ़ने से कमजोरी। डाक्टरों के पास। पुराने जमाने में नाड़ी परीक्षा। दोनों का मुकाबला। हकीम न हों तो ज्वर मालूम हो जाता है।

बैरामीटर

हवा मापने का यन्त्र। हवा का बोझ, कांच की बड़ी सी नली। उस पर अंक, हवा का जितना दबाव हो अंकों से मालूम हो जाता है। हवा हलकी हो तो पारा उतरेगा अन्यथा चढ़ेगा। पहाड़ों की ऊँचाई मापने का साधन।

टेलीफोन

बिजली की शक्ति से दूर से परस्पर बातचीत करने का यंत्र, तार-घंटी कान में लगाने और मुँह पर लगा कर बातें करने का यंत्र। चक्कर, एक से ९ और ० तक अंक। व्यापारी और सरकार के बड़े काम का, समय की बचत। अब तो दूर के शहरों से भी मेल, तार और टेलीफोन का मुकाबला।

खड्डी

देसी तरीके से कपड़ा बुनने की कल। चार लकड़ियों की बनी हुई चतुष्कोण। ताना, बाना, तुरी। एक मनुष्य काम कर सकता है। इसका बना हुआ कपड़ा मोटा। बनारस में रेशमी के कपड़े बड़े महीन। विलायती कलों के आविर्भाव से इनका वहिष्कार। अब फिर महात्मा गांधी की कृपा से इनका प्रचार। घर का बना कपड़ा, सस्ता, दृढ़। परिश्रम से व्यायाम। अपना धन अपने ही पास।

दो बकरियों का एक पुल से गुजरना

पुल के दोनों ओर से दो बकरियों का चलना। मध्य में आकर टकराना। दोनों का लड़ कर नदी में गिरना और मर जाना। शिक्षा-अदूरदर्शिता। दो और बकरियों का वैसे ही चलना किन्तु मध्य में न लड़ना। एक का नीचे लेट जाना और दूसरी का उसके ऊपर से गुजर जाना। शिक्षा-दूरदर्शिता।

हरिश्चन्द्र

हरिश्चन्द्र अयोध्या का राजा, सत्यवादी, विश्वामित्र का इन्द्र के कहने से उसके सत्यभङ्ग का प्रयत्न, विश्वामित्र को राज्य देना। दक्षिणा देने के लिये चमार के घर बिक जाना। पुत्र की मृत्यु। स्त्री से आधा कफन लिए बिना पुत्र को जलाने की आज्ञा न देना, विश्वामित्र का धन्यवाद। अभी तक उसका यश विद्यमान।

पहाड़ की सैर

पहाड़ों की वायु शुद्ध, निर्मल। प्रकृति देवी का दर्शन, स्वच्छ जल के निर्झर। मन की शांति, गर्मियों में सभी प्रान्तों के शासक और बड़े लाट साहिब का वहाँ जाना। काम में मन लगना। पैदल सैर सब से उत्तम, मार्ग में पड़ाव, डाक बंगले। टांगा, मोटर सवारी।

हरिद्वार की यात्रा

लाहौर से हरिद्वार की गाड़ी में चला। मार्ग में कई स्टेशन। प्रातःकाल हरिद्वार पहुँचा। वहां के पंडे। प्रातः स्नान से आनन्द। यात्रियों की भीड़, सायंकाल का दृश्य। गंगा का स्वच्छ जल। निवृत्ति।

शूरता

शूर का गुण। शूर पुरुष उत्साही, आत्मत्यागी, स्वदेशानुरागी। शूर के कार्य, विपत्तिग्रस्तों को विपद् से निकालना। अबल और अबलाओं की रक्षा, धर्म के हेतु शरीर त्याग, आततायियों के आगे सिर न झुकाना। निरपराधियों की हत्या शूरता नहीं। प्राचीन इतिहास में पञ्च पांडवों की शूरता, राना प्रताप, पृथ्वीराज, शिवाजी, पद्मनी, हकीकतराय आदि अनेक उदाहरण।

कालानुसारिता

नियत समय पर काम करना। काल बृथा न जाना, कार्य पूर्ण होना, लोगों में आदर-आदि लाभ। नियत समय पर काम न करने से कई आवश्यक कार्य नहीं होने पाते, रेल से रह जाना, दफ्तर से नौकरी छूट जाना, स्कूल में समय से न पहुँचने से दण्ड और पाठ में क्षति-इत्यादि कई दोष। अंग्रेज प्रायः कालानुसारी, भारतीयों में कमी।

आज्ञा पालन

शास्त्र व बड़ों के कथनानुसार व्यवहार। आज्ञापालन से पिता माता, गुरु आदि की प्रसन्नता, अधिकारियों का परितोष। सैनिकों का आवश्यक धर्म। ईश्वर-आज्ञा पालन से मुक्ति, देश के नायक की आज्ञा पालन से देश की स्वतन्त्रता, राजाज्ञापालन से राजसभा में आदर, न पालने से दण्ड। सभी असन्तुष्ट। भीमादि पांडव युधिष्ठर के आज्ञाकारी, श्रवण पितृभक्त, कैसावियंका आदि अनेक आदर्श।

मिताचरण

मर्यादा अनुकूल आहारादि भक्षण। मिताचरण से शरीर स्वस्थ, आमाशय नीरोग। शारीरिक शक्ति के अनुसार श्रम करना; धन सम्पत्ति के अनुसार व्यय करना भी मिताचरण है। मादक द्रव्यों का त्याग। न पालन करने से मान, कुल मर्यादा का नाश, धन की हानि, लोगों में निन्दा।

दीर्घसूत्रता

आरब्ध कार्य को शीघ्र समाप्त न करना। दीर्घसूत्री का कोई काम समाप्त नहीं होता। व्यापारी, छात्र, सैनिक आदि सभी के लिये दोष। आलसी पुरुष उपहासास्पद, कोई उस पर विश्वास नहीं करता, बातें बहुत करता है पर करता कुछ नहीं। राजाओं की दीर्घ सूत्रता से राज्य नष्ट हो जाता हैं। इतिहास में इसके अनेक उदाहरण।

अतिथिसत्कार

घर आये पाहुनों की प्रतिष्ठा करना। भारतीयों का शास्त्र-विहित धर्म, पञ्च महायज्ञो में एक यज्ञ। आतिथ्य न करने से अपवाद। आतिथ्य से धन का सदुपयोग। महात्मा पुरुषों की सेवा। आजकल भारत में इसकी रीति बहुत बिगड़ी हुई। कई मुसण्डे साधु फकीरों का आलसी बनना। दानवीर कर्ण, दानी हरिश्चन्द्र, रघु आदि अनेक उदाहरण।

मातृभूमि

उत्पत्ति स्थान, जिस पर मनुष्य का पालन पोषण हो उस की रक्षा और उन्नति मनुष्य का धर्म, न करने वाला कृतघ्न। सभी युद्धों का कारण मातृभूमि। कई शूरों का इस पर बलिदान होना। भारत की अधोगति का कारण यहां की जनता में मातृ-भूमि-प्रेम की कमी।

मेल

बहुतों का मिलकर काम करना। सङ्घ में विजय। एक तृण निर्बल किन्तु बहुत तृणों की रस्सी। बहुत चिऊँटियां हाथी को मार देती हैं। जिस देश में एका हो वह शत्रुओं से अजेय है। हिन्दुओं में एके या अभाव। तत्कालीन राजाओं में मेल न होने से भारत इतर जातियों के हस्तगत हुआ।

पराधीनता

स्वतन्त्रता का अभाव। स्वाधीनता स्वाभाविक गुण। व्यक्तिगत पराधीनता से व्यक्तिजीवन निष्फल। देश की पराधीनता से देश की दुर्दशा-देश की पराधीनता वहां के लोगों की कायरता, मन की पराधीनता से दुःख, स्वाधीनता से सुख। पराधीन जातियों पर शासक जातियों के अत्याचार। पराधीन पञ्जर-बद्ध शेर के समान,पराधीनता से भारत की दुर्दशा, स्वाधीनता और पराधीनता की तुलना।

दस्तकारी

हाथ की कारोगरी।हाथ की कारीगरी यूरोपीय शिक्षा का प्रधान अंग। इसका फल—हस्त संचालन में दक्षता, कार्य में दत्तचित्त होने की बान जीविका निर्वाह का स्वतन्त्र साधन। नौकरी से उत्कृष्ट,इससे देश की समृद्धि। भारतीयों को इसे सीखने में अनुचित लज्जा, हिन्दुओं में इस की विशेष कमी। शासकगण की ओर से उत्साह, प्रदर्शनी, स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग से इसकी वृद्धि।

शिक्षकों के प्रति विद्यार्थियों के कर्त्तव्य

गुरु संबन्ध बड़ा पवित्र। शिक्षकों के प्रति कर्तव्य, शिक्षक को पिता के समान पूज्य समझना, उसके आज्ञा पालन,सेवा सुश्रुषा के लिये तत्पर रहना, अपने पाठ को अभ्यास करना, शिक्षक से दिये दण्ड को बुरा न समझना, ब्रह्मचर्य के धर्म पर दृढ़ रहना, पुरानी गुरुकुल प्रथा।

ईर्ष्या

दूसरों की बढ़ती देखकर चित्त में जलन। चित्त की अशान्ति, अनेक दुष्ट भावों का उदय। ईर्ष्या से दूसरों का घात। इससे अपनी हानि के अतिरिक्त कोई गुण नहीं। दुर्योधन ने पांडवों के साथ ईर्ष्या से स्वराज्य नष्ट कर लिया, दूसरों के गुण देख कर उनका अपने में समावेश करने को उद्यम करना चाहिये, न कि जलना चाहिये।

विद्रोह

आत्मविद्रोह, राजविद्रोह, देश विद्रोह आदि अनेक भेद, आत्मविद्रोह से आत्मनाश। राज-विद्रोह से राजदण्ड और सर्वनाश, देश-विद्रोह महापाप—एक व्यक्ति के विद्रोह से समस्त देश की पराधीनता। इतिहास में इनके अनेक उदाहरण।

आत्म बलिदान (Self secrifice)

किसी शुभ कर्म के सम्पादन के लिये अपने जीवन तक को न्यौछावर कर देना देशसेवा, आपन्नों का कष्ट निवारण, राजसेवा, धर्मयुद्ध आदि अवसर, ऐसे पुरुषों का जीवित दशा में सम्मान, मरने पर स्वर्गप्राप्ति और यश, देशकी रक्षा ऐसे पुरुषों पर आश्रित, मेज़िनी, गैरीवाल्डी, गोविंदसिंह, महाराना प्रताप, शिवाजी, हज़रत ईसा आदि अनेक उदाहरण।

बड़प्पन (Greatness)

धन का महत्त्व, वीरता, विद्वत्ता आदि बड़प्पन नहीं। ये गुण रहते भी मनुष्य सम्भवतः वास्तविक बड़ा नहीं। बड़प्पन चित्त की अवस्था में, वास्तविक महा (बड़े) पुरुष विपत्ति में नहीं घबराते। बड़े बड़े राजा महाराजाओं से एक अकिञ्चन साधु बड़ा हो सकता है। रोम राज्य की सारी शान शौकत की अपेक्षा हज़रत ईसा बड़ा है। लूथर, शेक्सपीयर, कालिदास, दयानन्द, राममोहनराय, म० गांधी बड़े हैं।

भक्ति (Devotion)

चित्त को एकाग्र कर किसी में लगाना, उसके गुणों की प्रशंसा करना, उसकी आज्ञा का पालना—भक्ति है। ईश्वरभक्ति, राजभक्ति, पितृभक्ति, स्वामिभक्ति, आदि अनेक भेद—भक्ति का फल कृतज्ञता, जिसकी भक्ति की जाय उसके प्रसन्न होने से वांछित प्राप्ति, ईश्वरभक्ति से मोक्ष लाभ, आनन्द मग्नता।

उपहास

किसी के दोषों को देखकर उसपर व्यङ्ग-पूर्वक हंसी उड़ाना। परिणाम-परस्पर क्रोध। कई बार सर्वसत्यानाश का मूल-कारण, द्रौपदी के उपहास से महाभारत का युद्ध, उपहास करने वाले पर कभी विश्वास नहीं होता।

मृत्यु

जीवात्मा का शरीर को छोड़ जाना। प्रत्येक प्राणी की मृत्यु आवश्यक, मृत्यु का भय, अकाल मृत्यु पर शोक, मृत्यु का अवसर अनिश्चित होने पर हर एक को अच्छे कर्म करने चाहियें और मृत्यु के लिये त्यार रहना चाहिये।

देशी कारीगरी

अपने देश के शिल्पकारों का काम। जिस देश का शिल्प उन्नत हो उसकी उन्नति, अपने देश के कारीगरों का बनाया माल प्रयुक्त करना चाहिये। परदेशों की चमकीली वस्तुओं की ओर भागना न चाहिये। पाश्चात्य देशों की प्राचीन और आधुनिक दशाओं का मुकाबला। उनकी उन्नति का कारण, भारत के पुराने शिल्प के नष्ट होने का कारण, आजकल की जागृति।

रोशनी के उपाय

प्राचीन समय में लकड़ी व पत्थरों को घिसकर अग्नि निकालना। पुनः शनैः शनैः सरसों के तेल आदि का प्रयोग; फिर मिट्टी का तेल, क्रमशः गैस और बिजली का आविष्कार, बिजली की

रोशनी सर्वोत्तम किन्तु गैस की रोशनी बड़ी तेज़। बड़े नगरों में बिजली का प्रकाश।

प्रातःकाल का भ्रमण

वायु के दो अंश आक्सिजन और कारबन। हाइड्रोजन प्राणप्रद; इससे फेफड़े स्वस्थ और दृढ़ होते हैं, चित्त प्रफुल्लित, काम में चित्त लगता है। शहर की गन्दी हवा में रहने वालों के लिये प्रातःकाल भ्रमण आवश्यक।

धन का आचार पर प्रभाव

धन बड़ा भीपण पदार्थ, इससे कई सुधर जाते हैं कई बिगड़ जाते हैं। अच्छी संगति से धन का अच्छा प्रयोग और सदाचार प्राप्ति। बुरी संगति से कुप्रयोग और दुराचारता, जिस देश के धनी सदाचारी हों वह देश धन्य। कारनेगी के धन से सारे यूरोप को लाभ, दुर्जन धनिक युवक को बुरे मार्ग पर ले जाने की घात में रहते हैं किंतु चित्त दृढ़ चाहिये।

परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने के कारण

परिश्रम का फल अवश्य मिलता है। कई प्रतिभाशाली विद्यार्थी परिश्रम न करने से असफल। प्रत्येक दिन के पाठ को अभ्यस्त न करना, शरीर को व्यायाम से स्वस्थ न रखना। नियमानुकूल काम करने की आदत न डालना। बुरी सङ्गत, आलस्य, दीर्घसूत्रता आदि अनुत्तीर्ण होने के अनेक कारण।

स्कूलों में शिक्षा किस भाषा द्वारा हो

शिक्षा का अर्थ मानसिक शक्तियों की उन्नति, परदेशी भाषा में शिक्षा होने से विद्यार्थी जीवन का सारा समय परदेशी भाषा को सीखने में ही लग जाता है—पदार्थ का तत्त्व ज्ञान नहीं होता, अपने देश की संस्थाओं से प्रेम नहीं रहता, विदेशी सभ्यता पीछा नहीं छोड़ती—भारत की अधोगति का मुख्य कारण।

हिन्दुस्थान के कुटुम्बों में स्त्रियों की वर्तमान दशा

प्राचीन काल के मनुष्यसमाज में स्त्रियों का सन्मान, कारण स्त्रीशिक्षा, आजकल स्त्रियों का निरादर, कारण अशिक्षिता होना, परदा, कुटुम्बों में कलह, समाज में स्त्रियों का नीच पद—पाश्चात्य और यहाँ की स्त्रियों की तुलना।

स्कूलों में ड्रिल की उपयोगिता

ड्रिल से शरीर के अवयवों का सञ्चालन, चुस्ती, किन्तु लड़के ड्रिल को बोझ समझते हैं—ध्यान नहीं देते, इससे हानि, बुरी रीति, अतः ड्रिल की रीति में संशोधन आवश्यक, अनपढ़ ड्रिल मास्टरों को हटाकर सुशिक्षित अध्यापक नियत करने चाहियें।

विद्या और विवेक

विद्या-शास्त्रों का पढ़ना, विवेक-पूर्वापर विचार। विद्वान् होकर भी मनुष्य अविवेकी रह सकता है, अविद्वान् भी विवेकी हो सकता है। विद्या और विवेक एक दूसरे को पुष्ट करते हैं-विवेकता का दर्जा कोरी विद्या से उच्च, विवेक से आचार शुद्ध रहता है।

पौर व सैनिक जीवन

पौरजीवन आराम का जीवन, मनुष्य किसी जोखों में नहीं पड़ता, सैनिक जीवन में बड़ी बड़ी दुर्घटना; विपत्ति का साम्मुख्य, नगरवासी का शरीर कृश, सैनिक का दृढ़, नागरिक विपत्ति में हौसला हार जाते हैं, सैनिक सदा सन्नद्ध रहता है, सैनिक के चित्त में दया कम होती है, युद्ध में उसे आनन्द रहता है; प्रत्येक नगर वासी के लिये सैनिक शिक्षा उत्तम है।

कला हुनर और पदार्थ विद्या

कला हुनर-शिल्प, पदार्थ विद्या-भौतिक विद्या। कला, हुनर आदि की वृद्धि के लिये पदार्थविद्या आवश्यक, भारत में पदार्थ विद्या का कलाओं में प्रयोग न होने से भारत की अधोगति।

अकबर और औरंगजेब

अकबर का राज्यविस्तार प्रेमसे, औरंगजेब का जुल्म से;अकबर स्वधर्म प्रेमी किन्तु दूसरे धर्मों का अनिन्दक, औरङ्गजेब कट्टर मुसलमान और दूसरे धर्मों पर जुल्म करने वाला; अकबर हिन्दुअ का मित्र, औरङ्गजेब द्वेषी; अकबर की मृत्यु शांतिमय, औरङ्गजेबकी अशांतिप्रद।

बूँद बूँद से घट भरे

थोड़ा थोड़ा जमा करने से बड़ा समुदाय हो जाता है, एक ही बार बहुत धन नहीं जुड़ सकता। थोड़ा थोड़ा पढ़ने से विद्वान् बनता है, कुछ कुछ धर्म करने से धार्मिक बनता है। थोड़ा व्यायाम करने से पहलवान बन जाता है।

बुद्धिर्यस्य बलं तस्य

बहुत बलवान् होते भी मूर्ख कुछ नहीं कर सकता। राममूर्ति ने बुद्धि के प्रयोग से कितना धन कमा लिया। बलवान् शेर मनुष्य के हाथ आजाता है। शशों और हस्ती की कथा।

कोयले की दलाली से हाथ मुँह काले

मनुष्य स्वयं दुराचारी न भी हो किन्तु दुष्टों के सङ्ग से बुरा समझा जाता है। दुष्ट सङ्ग से लोगों में अनादर, वचन पर कोई विश्वास नहीं करता, पहले अच्छा भी, पर पीछे बुरा समझा जाता है। दुराचारी बन भी जाता है।

जिस की लाठी उस की भैंस

बलवान् के सभी काम सिद्ध हो जाते हैं, उसे निवारण करने का कोई उत्साह नहीं करता। वास्तव में जो किसी का न्यायसङ्गत पदार्थ हो उसी पर उसी का अधिकार चाहिए किन्तु ऐसा देखने में नहीं आता। कहावत है ज़ोरावरों की सात बीसियों का सौ होता है।

पराधीन सपने सुख नाहीं

स्वतन्त्र पुरुष का मन स्वाधीन होता है। उसे किसी का भय नहीं। चित्त सदा शांत रहता है। पराधीन कभी सुखी नहीं, मालिकों का भय, सदा घुरका जाता है। चित्त अशांत रहता है। जो दशा व्यक्तियों की है वही जाति व देशों की है।

आवश्यकता आविष्कारों की जननी है

जब किसी वस्तु की जरूरत होती है तो उसकी पूर्ति के लिए वह वस्तु जिस किसी तरह बन जाती है। ज्यों ज्यों सभ्यता बढ़ती जाती है लोगों की आवश्यकतायें भी बढ़ती जाती हैं और साथ नयी चीजें भी बनती जाती हैं। बिना ज़रूरत के कोई आविष्कार नहीं होता।

होनहार बिरवान के होत चीकने पात

जो महापुरुष होते हैं उनका बाल्यकाल भी अनोखा होता है। कई महापुरुषों के जीवन, कविवर हरिश्चद्र जब सात वर्ष के थे तो कविता बनाने लग गये थे।

महापुरुषों के जीवन ही देश का इतिहास होता है

महापुरुषों के कार्य्यों का देश पर इतना प्रभाव पड़ता है और उनका उसके साथ इतना सम्बन्ध होता है कि वे देश की दशा को जिधर चाहें घुमा सकते हैं। महाराज रामचन्द्र, बुद्ध, अशोक, शिवाजी, प्रताप, गोबिन्दसिंह, महात्मा गांधी—इनका जीवन ही भारतवर्ष का इतिहास है।

परिशिष्ट २

छात्रों के अभ्यास के लिए कुछ चुने हुए विषय

भेड़
बिल्ली
गधा
बकरी
रीछ
मूषिक
मेंडक
बिच्छू
सांप
मकड़ी
गैंडा
कछुआ
कौआ
कोयल
कबूतर
उल्लू
तोता
गिलहरी
अमृतसर
प्रयाग
दिल्ली
आगरा
कलकत्ता

रूई का कारखाना
चावल की खेती
शेर का शिकार
हाथी का शिकार
अजायब घर
चिड़िया घर
कोई जातीय संस्था
कोई नाटक-दृश्य
हिन्दुस्थान के कुछ फल
गुलाब का फूल
पंजाब की उपज
आलू की खेती
मनुष्य के अङ्ग
नमक
कोयला
पक्षियों का स्वभाव
बंदर और मनुष्य
घरेलू पक्षी
लोहा
स्लेट पत्थर
शीशा
ईख

ग्रीष्म ऋतु
शीत ऋतु
सूर्योदय का दृश्य
कोई उद्यान
कोई प्राकृतिक दृश्य
पहाड़ों में सूर्यास्त का दृश्य
नदी की बाढ़
वसंत की छुट्टियां
घड़ी
कागज
शक्कर
सामुद्रिक युद्ध
औरंगजेब का राज्य
काल
हिन्दुस्थान के ठग
आँधी में जहाज का टूटना
कोई घटना
रणजीतसिंह
न्यूटन
लार्ड डलहौज़ी

अपनी पाठशाला
पढ़ने का कमरा
एक दिहाती स्कूल
हिंदुस्थान के जंगल
चांदनी रात
भारतीय ऋतुएँ
नदी तट पर सायं-काल
कोई पहाड़ी शहर
कोई भवन
शकुन्तला
सिक्ख युद्ध
यूरोप का महायुद्ध
अकबर का राज्य-काल
नये शासन-सुधार
जहाज द्वारा यात्रा
व्योमयान की सवारी
किसी चोरी की कहानी
कोई जासूसी कहानी
एक बालक की वीरता
भूतों की कहानी
किसी शहर का शत्रुओं से कब्जा

जहाज़
रेशम का कीड़ा
कोई मंदिर
कुतुब मीनार
पानी की कल
नदी का दृश्य
जल प्रपात
वर्षा ऋतु
कैकेयी
युधिष्ठिर
भीम
अर्जुन
कृष्ण
दुर्योधन
शकुनि
द्रौपदी
रुक्मिणी हरण
अभिमन्यु
देसी कसरत
पशुओं पर दया
विनय
आचार
आलस्य
आत्मनिर्भरता
एकांतवास
संदेह

ऐश्वर्य
हिन्दी का कोई प्रसिद्ध कवि
तुलसीदासकीकविता
ब्रजभाषा और खड़ी बोली में अन्तर
विक्टोरिया का राज्यकाल
भारत के पुराने इतिहासग्रन्थ
प्लासी का युद्ध
समाचार पत्रों का प्रभाव
बुढ़ापा
सरकारी नौकरी
आत्महत्या
छुट्टियों के लिए काम
आधुनिक यात्रा-साधन
बीमा कम्पनी
देश तथा विलायती वेश
पुस्तकालय
मदारी
बहु विवाह प्रथा

मल्लयुद्ध
अलीबाबा और चालीस चोर
हरिश्चन्द्र की कथा
नल की कथा
पंजाब का हिन्दी-साहित्य सम्मेलन
हिन्दी की उपादेयता
हिन्दी सार्वजनिक भाषा
राम मोहनराय
गङ्ग कवि
उपन्यासों का पढ़ना
किसी उपन्यास का सार
किसी नाटक का नायक
स्वामी दयानन्द
स्वामी रामतीर्थ
चन्द्रकान्ता उपन्यास
रामचन्द्र
भरत
लक्ष्मण
चिड़चिड़ापन
कीर्ति
कर्तव्यपरायणता
उपहास्य का दुष्परिणाम
उत्तरदायित्व
न्यायशीलता
मातृ-स्नेह
सच्चे आदर्श का प्रभाव
विज्ञानविद्या का अध्ययन
ड्राइंग की उपयोगिता
फलाहार
परदेश यात्रा की उपयोगिता
मृत्यु
सभ्यता
वक्तृता
छात्रों की मित्रता
कोई पब्लिक जलसा
स्कूल की परीक्षा
पतङ्ग उड़ाना
सुलेख
साबुन बनाना
स्कूलों का पारितोषिक वितरण
जातियों के ह्रास के कारण
वर्षा के लाभ
हिमगिरि
टीका खुदवाना
सबमैरीन
हिन्दुस्थानी शिष्टाचार
भोजन
उल्कापात

लोकोक्तियां

अशरफ़ी लुटें कोयलों पर मोहर। अधजल गगरी छलकत जाय।
आप मरे जग परलय। आम के आम गुठलियों के दाम।
एक एक दो ग्यारह। अन्धों में काना राजा।
अन्त मता सो गता। काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
काम को काम सिखाता है। कंगाली में आटा गीला।
खोदा पहाड़ निकली चुहिया। गधा धोये बछड़ा नहीं होता।
घरकी मुरगी दाल बराबर। चोर की डाढ़ी में तिनका।
जैसा देश वैसा भेस। जैसी तेरी कोमरी वैसे मेरो गीत।
जब मुँह से लाई लोई, क्या करेगा कोई।
तेल तिलों ही से निकलता है।
दुबिधा में दोनों गये माया मिली न राम।
नाच न जाने आंगन टेढ़ा। पकाई खीर हो गया दलिया।
पंच कहें बिल्ली सो बिल्ली।
राजा किस के पाहुने जोगी किसके मीत।
सुन खगेश अस को जग मांही, प्रभुता पाय जाहि मद नाहीं।
लिखते न बने कलम टेढ़ी। जो बरसता है सो गरजता नहीं।
जैसी जाकी भावना तैसी ताकी सिद्धि।
सुख दुःख सब कहं परत हैं, पौरुष तजहु न मीत।
मन के हारे हार है मन के जीते जीत।
चार दिनों की चांदनी फेरि अंधेरा पाख।
उस दाता से सूम भला जो जल्दी देइ जवाब।
बकरे की महतारी कब लगि कुशल मनाई।
जहं देखहु निज अधिक बिगार, लघु लाभहु कर तजहु विचार।
नहिं यह बुद्धिमान की चाल 'दमड़ी की बुलबुल, टका हलाल'।